

निराला-काव्य पर बंगला का प्रभाव

लेखक

इन्द्रनाथ चौधुरी एम० ए० (मग़ज़ी हिंदी)
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, हसरज कॉलेज दिल्ली

भूमिका लेखक

डॉ० नगेन्द्र डा० लिट्०

अध्यक्ष हिन्दी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रकाशक

श्री भारत भारती प्राइवेट लिमिटेड

१ अनसारी रोड, नया दरियागज,
दिल्ली-६

प्रथम सस्करण—१९६४

मूल्य—पाच रुपये

मुद्रक
दि प्रिंटसमन
नई दिल्ली

दो शब्द

निराला हिन्दी के युगप्रवर्तक क्रांतिकारी कलाकार हैं। जीवन के समान अपने साहित्य में भी वे झूठ दृष्टा और आत्मविश्वास के साथ प्रकट हो रहे हैं। निराला जी जन्म से बंगाली थे और कुल-परम्परा से उत्तरप्रदेशवासी। हिन्दी और बंगला के समृद्ध साहित्यों के साथ साथ संस्कृत तथा अंग्रेजी का भी उन्नत गभीर अध्ययन किया था। उनकी काव्य कला में इन मन्वय का मौलिक एवं विशिष्ट रूप मिलता है।

निराला की काव्य कला का मध्यम मूल्यांकन करने के लिए सामान्यतः बंगाली साहित्य और विशेषतः विवेकानन्द एवं रवीन्द्रनाथ के साहित्य के प्रभाव का विचारण उपयोगी है और श्री इन्द्रनाथ चौधुरी ने इस विषय में स्पष्ट प्रयत्न किया है। इन्द्रनाथ चौधुरी हमारे पूर्व छात्र एवं सहपाठी हैं। परिवार से बंगाली मात्र हुए भी उन्होंने अपनी हिन्दी के माध्यम से प्राण की है। हिन्दी एम० ए० में प्रवेश करने से पूर्व दिल्ली विश्वविद्यालय में ही वे अंग्रेजी एम० ए० कर चुके थे। सन १९६० में हिन्दी एम० ए० की परीक्षा में इनका प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान मिला था और इस वर्ष उन्होंने पी० एच० डी० के लिये 'धार्मिक हिन्दी और बंगला का साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर भाष्य प्रबंध भी प्रस्तुत कर दिया है।

प्रस्तुत पुस्तक एम० ए० के विषय निबंध के रूप में लिखी गई थी। इसमें प्रभाव गन्द की काननिक व्याख्या प्रस्तुत कर उन सूत्रों का अनुसंधान किया गया है जिसका निराला के साहित्य में बंगाली मध्यम के पत्ररूप में महत्त्व ही समावेश हो गया था। प्रस्तुत प्रभाव-अनुसंधान किस प्रकार की होना का सूचक न होकर मौलिक मन्वय-शक्ति एवं व्यक्तित्व का उद्घाटन का ही साधक है। जिस कवि का मन्वय-शक्ति व्यक्तित्व जितना व्यापक और मजबूत होता है वह उतना ही व्यापक शक्ति से प्रभाव और पापण ग्रहण करता है। स्वयं रवीन्द्रनाथ इसका ज्वलन्त उदाहरण हैं। अपने पूर्वजों से जितना उन्होंने ग्रहण किया है उतना तुलसीदास को छोड़कर चायद ही किया कवि ने किया हो। मैं श्री इन्द्रनाथ चौधुरी को उनकी इस प्रथम प्रकाशित रचना पर धार्मिक श्रेय देता हूँ। मरी कामना

है कि उनके अध्ययन व फलस्वरूप हिन्दी और बंगला साहित्या में पारस्परिक सहयोग बढ़ता रहे और भारतीय साहित्य को अधिकाधिक समृद्धि प्राप्त होती रहे।

अध्यक्ष हिन्दी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-६
दिनांक ११ ६ ६४

—नगेन्द्र

प्राक्कथन

पारिवारिक परम्परा से बंगाली तथा जन्म से हिन्दी भाषी होने के कारण मुझे गणव काल में ही भारत की दो समृद्ध भाषाभाषाएँ एवं साहित्यों की प्रवृत्तियों का सौभाग्य समान रूप से मिलता रहा है। सबप्रथम मैं अपनी माताजी से बंगला सीखी या पढासिखा से हिन्दी, यह प्रयत्न करने पर भी मैं स्मरण नहीं कर पाता। परन्तु जब पाठगाला के नियम के अनुसार मुझे अपनी शिक्षा के लिये हिन्दी और बंगाली में एक को छोड़ना पडा तो मैं बंगला की अपनी शिक्षा पाठगाला से बाहर पूरी की। कालज में प्रभाकर बी० ए० में बंगला, संस्कृत एवं अंग्रेजी साहित्य दिल्ली विश्वविद्यालय की परीक्षा के लिये मैं पडे। प्रभाकर तथा साहित्यरत्न की परीक्षाओं में मेरे हिन्दी प्रश्नों को प्रथम दिया। एम० ए० में फिर हिन्दी विषय लेकर मैं अपने अध्ययन में सामरस्य स्थापित करने का प्रयास किया है।

इस प्रकार अंग्रेजी, संस्कृत तथा बंगला का पाठ्य लेकर जब मैं हसराम कालज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष (अब रीडर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्व विद्यालय) डॉ० रामप्रसाद जो के सम्पर्क में आया तो उनकी शांति, गम्भीर एवं उत्तम दृष्टि ने मेरे मानसिक-जीवन का पथ सदा के लिये निश्चित कर दिया। मुझको लगा कि चार चार साहित्यों का प्रसाद लेकर मैं दीन नहीं रह सकता मेरा जीवन राष्ट्रभाषा की रचनात्मक सेवा के लिये ही अर्पित होना चाहिये। अंग्रेजी की एक बहावत है कि गणव की कामनाएँ योवन में पूरी होती हैं, क्या प्रत्येक जीवन का यही सत्य है ?

एम० ए० हिन्दी-परीक्षा के लिये एक निबंध लिखने की अनुमति मैंने पूज्य डॉ० नगेन्द्र जी से मांगी। डाक्टर माह्वे ने सहय अनुमति देते हुए मुझे निराशा की पर राय करने का सुभाव दिया। यही प्रस्तुत निबंध की जीवन-नाया है।

प्रस्तुत निबंध में निराशा जा के काव्य पर बगीच प्रभाव का विस्तृत आत्मक एवं आलोचनात्मक सूत्रों की प्रवृत्तित करने हुए, ऐतिहासिक तथा मनो-वैज्ञानिक दृष्टि में अध्ययन किया गया है। इसमें विषय प्रवृत्त के अनिश्चित

पाच अध्याय है। विषय प्रवेश में प्रभाव' पर तात्त्विक विवचन किया गया है। प्रथम अध्याय में निराला के कृतित्व और व्यक्तित्व पर विवचन है। दूसरे अध्याय में निराला के प्रतिपाद्य पर बगला प्रभाव की मीमांसा की गई है। तीसरे में निराला के कला पक्ष पर और चतुर्थ में निराला के गीत पर बगीय प्रभाव की समीक्षा है। पाचवा अध्याय उपमहार है। तदनन्तर चार परिशिष्ट हैं। प्रथम में निराला द्वारा अनूचित बगला कविताओं का विश्लेषण है। दूसरे और तीसरे में निराला द्वारा लिखित बगला कविता और निराला की हिन्दी-कविताओं के बगला अनुवाद का संक्षिप्त विवचन है। चतुर्थ परिशिष्ट में निराला की कतिपय परोटियो पर विचार किया गया है। अन्त में हिन्दी बगला मस्कृत, अग्नेजा की उन पुस्तिका की सूची है जिनकी इस निबंध में लिखने में सहायता ली गई है। इस प्रकार २०० पृष्ठ के इस निबंध में मैंने कविवर निराला पर बगीय प्रभाव का सामान्य विवेचन प्रस्तुत किया है, मेरी विशय दृष्टि कवीन्द्र रवीन्द्र के प्रभाव के विश्लेषण में तत्पर रहो है। मुझे विश्वास है कि मेरा यह वित्त प्रयास कविवर निराला के अध्ययन में सहायक होना के साथ साथ उत्तरभारत के दो समृद्ध साहित्या को निकटतर जाने में भी सफल हो सकेगा।

इस निबंध को लिखते हुए मुझे अपने निरीक्षक डा० ग्रामप्रकाश नास विनये सहायता प्राप्त हुई जिसके लिए मैं उनको प्रति सबदा के लिये आभारी हूँ। दिल्ली विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग की रीडर श्रद्धया डा० (श्रीमती) सावित्री सिन्हा जी से इस निबंध को रूपरेखा एवं पाण्डुलिपि के लिये समय समय पर मुझे अमूल्य सहायता मिली है। मैं उनको प्रति हृदय से कृतज्ञ हूँ। गुरुवय पूज्य डॉ० नगेंद्र जी की कृपा से ही मेरा आधुनिक काव्य में इतना अनुसंधान हुआ और विषय निर्वाचन से लेकर इस निबंध की पूणता तक उनमें अनेक प्रोत्साहन मुझे मिलता रहा है। वे हिन्दी विभाग की सृष्टि में व्याप्त अंतरात्मा हैं। यदि मैं जीवन में उनका योग्य शिष्य सिद्ध हो सका तो अपने काव्य समझूंगा।

विषय-सूची

विषय

पृष्ठ

विषय-प्रवेद

१-१३

प्रभाव का मुख्य स्रोत
 प्रभाव किस कहते हैं ?
 मौलिकता
 प्रभाव की उपयोगिता
 निवध का स्वरूपा

पथम अध्याय

व्यक्तित्व और कृतित्व

१४—४०

वग, परिवार तथा व्यक्ति

कृतिया

पारिवारिक परिस्थितिया तथा युगीन
 विचारधाराएँ

द्वितीय अध्याय

निरासा के प्रतिपाद्य पर बगला प्रभाव

४१—७६

दासनिव प्रभाव

रूढ़ि का विरोध

विराट चित्र

सनातन की जिज्ञासा

प्रकृति

नारा प्रम

मानवतावाद

भक्ति

संस्कृत

रवीन्द्रनाथ की विषय वस्तु का ग्रहण कर रचित
 कविताएँ
 पुरातन बभ्रव का अवन
 संस्कृति
 स्वदेश प्रेम
 मृत्यु
 महापुरुषों की प्रशस्ति कविता सम्बंधित
 रवीन्द्र के सौंदर्य दर्शन से प्रभावित निराला
 का सौंदर्य दर्शन

तृतीय अध्याय

निराला के कला पक्ष पर बंगला का प्रभाव

८०—१३८

कल्पनागत रूप विन्यास

रूपक

प्रतीक

रवीन्द्र के परिचित वस्तु तथा भावघटित
 प्रतीक द्वारा प्रभावित निराला के
 प्रतीक

परम्परागत प्रतीक

पुराण कहानी आधारित परम्परावादी
 प्रतीक से प्रभावित निराला के प्रतीक

मिथ

रवीन्द्र के आध्यात्मिक प्रतीका द्वारा
 अनुप्रेरित निराला के प्रतीक
 विम्ब

सक्षित चित्र योजना

उपलभित चित्र योजना

कलागत रूप विन्यास

अक्षर

पद विन्यास

शब्दी

बगला मेरी बॅसी ही मातृभाषा हॅ जैसी हिन्डी

—निराला

काव्य रूप
बला का अतिम रूप

चतुर्थ अध्याय

निराला के गीत पर बगला प्रभाव

१३६—१५०

प्राथना प्रधान गीत

नारी-सौन्दर्य प्रधान गीत

तथा प्रेम गीत

प्रकृति प्रधान गीत

स्वदेश प्रेम के गीत

दागनिक गीत

पंचम अध्याय

उपसंहार

१५१—१५३

परिशिष्ट

१ निराला द्वारा अनूदित बगला-कविताएँ

१५४—१५४

२ निराला की कविताओं का बगला अनुवाद

१५६—१५७

३ निराला की बगला-कविताएँ

१५५—१५६

४ बगला कविता पर लिखी गई पराती

१५६—१५८

सहायक ग्रंथों की सूची

१५९—१६३

विषय-प्रवेश

वर्तमान निबंध का आलाच्य विषय है, 'निराला के काव्य पर बंगला का प्रभाव। सशक्त कवि या लेखक के अनुकरणकारियों का किसी भी साहित्य में प्रभाव नहीं होता। वस तो क्षमताहीन अनुकरणकारी कवि या लेखक अनुकरण के प्रतिरिक्त और कुछ नहीं कर पाते परन्तु जिन लोगों में क्षमता है उनके अनुकरण में कभी भी निज बशिष्य का लाल नहीं होता। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी अपनी पुस्तक 'हिन्दी साहित्य में बिहारा के सम्बन्ध में लिखते हुए कहते हैं कि दूसरे कवियों के विचारों को प्रणारूप में आत्मसात कर उनकी महत्ता से कुछ नद बात कहना अर्थात् कवियों का काव्य है जिस प्रकार बिहारी ने पुराने कवियों के भाव का ग्रहण किया था उस सेवारा था, उस अपना बना लिया था।^१ यह 'अपना बनाने की प्रक्रिया ही वास्तविक भाव प्रभाव की प्रक्रिया है। आधुनिक युग के साहित्य में एक दृष्टांत लें तो हम कह सकते हैं कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने एक निबंध में निर्वाकु-कुण्डिता निशान्चारिणी उपनिता ऊर्मिला का वर्णन कर काव्य रसिका का ध्यान उस और आकृष्ट किया और मणिलीशरण गुप्त ने उपनिता ऊर्मिला के इस भाव से प्रभावित होकर अपना अमर महाकाव्य 'माकेत' हिन्दी का प्रदान किया। इस भाव प्रभाव में कहीं भी मौलिकता का अभाव नहीं दिखाई पड़ता। वास्तव में जीवन के सम्पूर्ण अर्थ का जो वर्णन करना चाहता है, दूसरे के प्रभाव में वह बच नहीं सकता। निराला जी ने स्वयं लिखा है—

दूसरे के भाव लेकर प्रायः सब कवियों ने कविताएँ लिखी हैं परन्तु वहाँ हर एक कवि ने दूसरे के भाव पर विजय प्राप्त करने की, उससे बढ़कर अपना कोई विशेष चमत्कार लिखलाने की चप्टा की है।^१

रवीन्द्रनाथ के विषय में लिखते हुए प्रमयनाथ त्रिशी ने भी यही बात कही है 'प्रभाव साहित्य का केवल उपादान है व्यापार में जम मूल धन। दूसरे के मूल धन पर रवीन्द्र ने बहुत मुनाफा कमाया है, इसीलिए उन्हें ऋणी हाकर रहना

१ १० हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी-साहित्य, पृ० २१

२ निराला प० और पन्नाव

नहीं पडा ।'

प्रभाव का मुख्य स्रोत

निराला जी के विषय में भी बिल्कुल यही बात कहा जा सकता है । रवीन्द्र जहाँ कालिदास, ब्रह्मण्य कवि, चण्डीदास, विद्यापति, बिहारीलाल तथा शर्मा, कीटस आदि से प्रभावित हुए थे वहाँ निराला मुख्यतया रवीन्द्रनाथ तथा सामान्यतया विवकानन्द और अन्य बंगाली कवियों के काव्य तथा विचारधारा से प्रभावित हुए । इस सम्बन्ध में निराला के आलाचर्कों का मत उद्धृत किया जा सकता है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कहना है—

'निराला जी पर बंग भाषा की काव्य शैली का प्रभाव समास में गुम्फित पद वन्नरा क्रियापद के लोप आदि में स्पष्ट भङ्गता है ।'

डा० रामविलास शर्मा का कहना है—

बसवाड़े की आन्हा नोटकी संस्कृति के इलावा युवावस्था में उनका सम्पर्क बंगाल का दा महान सांस्कृतिक धाराभा से हुआ । एकता श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नेतृत्व में बंगाल के नवीन सांस्कृतिक जागरण से और दूसरा स्वामी विवकानन्द द्वारा स्थापित श्री रामकृष्ण मिशन से । इन दोनों का उन पर स्थायी प्रभाव पड़ा है । और इसमें सन्देह नहीं कि अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ काल में उन्हें पहले आन्हा से प्रेरणा मिली ।

गिरीशचन्द्र तिवारी भी निराला का शिक्षा दाता के सम्बन्ध में लिखत हुए बंगीय प्रभाव का उल्लेख करते हैं—

बंगला में उस समय रवीन्द्र युग का प्रारम्भ था । सबत्र उनका साहित्य की ख्याति छा रही थी । फिर हिंदी की चर्चा कौन करता । बंगाल की सभी पाठशालाओं में बंगला की ही प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती थी । पिताजी ने इन्हें पाँच वर्ष की अवस्था में ही पढ़ने के लिए पाठशाला भेज दिया । कुछ ही वर्षों के उपरान्त इनका प्रेम बंगला भाषा की ओर बढ़ा । बंगाली मकदा से अत्यन्त भावुक प्राप्त रहा है और बंगला भाषा भावुकता की प्रतिमूर्ति । भाषा की ही प्रशंसा करते हुए बकिमचन्द्र ने कहा है—

बंगलार बधू मुझ तार मधु

फिर बालक सुषकान्त को किन्ती भावुकता बंगला और बंगालिया से मिली

१ प्रमथनाथ विशा रवीन्द्र काव्य प्रवाह निर्णय खण्ड

२ बंगला कवि

३ रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी-साहित्य का इतिहास

४ रामविलास शर्मा निराला पृष्ठ ६७

इसकी साक्षात्ता उनका कृतियां हा है ।^१

डॉ० रामरतन भटनागर भी इसी बात की पुष्टि करते हैं—

'इन दोनों बंगला-कवियों (रवींद्रनाथ तथा विवेकानन्द) का प्रभाव निराला के काव्य में बराबर बना रहा, परन्तु निराला ने उस प्रभाव का आत्मसात कर लिया । एक स्थल बहुत कम मिले जहाँ उनका भाव उपयुक्त कवियों की प्रतिध्वनि मात्र है । 'राम की गति पूजा (१९३६) पर मादकल मधुमदन के मधनाद-बध का प्रभाव भी लक्षित है । अतः स्पष्ट है कि आधुनिक हिन्दी-काव्य में जो 'छायावाद' के नाम से प्रसिद्ध है उस पर सीधे तौर से बंगला-काव्य का प्रभाव निराला की रचना द्वारा आया । परन्तु निराला के व्यक्तित्व की सजीवता और मौनिकता ने इस प्रभाव को कहीं भी आग नहीं बतन दिया । स्वयं उनके काव्य में जो रहस्यवादिता है वह निरुद्धय यात्रा जसी रामाटिक कविताओं और गीताजनि जमी रहस्यवादी कविताओं की रहस्यवादिता से भिन्न एवं नये प्रकार का वस्तु है । फिर भी मूल आना का एतदम उपशा नहा की जा सकती ।'

बंगाल के अथ कवियों के प्रभाव के सम्बन्ध में लिखते हुए डॉ० रामरतन भटनागर अथ एक स्थान पर कहते हैं—

बंगला के रवींद्रनाथ, अनुनप्रसाद मन और बाबा नजरुन म्लाम के गान जिम श्रुता के हैं, उसी श्रुति की शीर्ष निराला ने हिन्दी में दा है ।^१

इसी प्रकार बंगला के दूसरे कवियों के प्रभाव के सम्बन्ध में लिखते हुए डॉ० बच्चनसिंह कहते हैं—

'प्रारम्भिक काल में बंगला के अष्ट कलाकार—रविदास, चडीदास, विवेकानन्द और बण्णव कवियों का प्रभाव भी उन पर था ।'

बण्णव कवियों के प्रभाव के सम्बन्ध में डॉ० राम विलास गर्मा ने भी अपना मत प्रकट किया है । उनका कहना है—

निराला ने अपने निबन्ध 'चण्णदाम' (१९२०) में—बण्णव कवियों पर रविदास ने जो कविता लिखी है—उसका बण्णव कवियों है । उसमें उनकी भक्ति के इस मानवीय रूप की आर उ हान सेने किया है । जिन कवियों ने राधा और कृष्ण की सम्पत्ता का ऐसा प्रभावगानी बण्णव किया था, उ हान प्रवश्य ही अपने जीवन में उस सम्पत्ता का अनुभव किया होगा । रविदास ने इन पर सेना

१ निरालाचन्द्र निराला कवि निराला और उनका काव्य-शास्त्र

२ रामरतन भटनागर कवि निराला—एक अध्ययन, पृष्ठ ७३

३ वही पृष्ठ २३०

४ बच्चनसिंह आन्विकारी कवि निराला, पृष्ठ ३

और कविताएँ हा नहीं लिखी वरन् उनकी गली के अनुकरण पर 'भानुसिंहर पदावली' की रचना कर डाली थी। बंगला की रोमांटिक कविता का एक सात यह बंगला कवि भी थे। हिन्दी के नए कवि जो बंगला भी जानते थे, अनिवाय रूप में इन कविता की आर आकृष्ट हुए। निराला जी ने बंगला कविता की शृंगार साधना पर आगे चलकर लख भी लिख और गाविन्ददास के गीतों का हिन्दी में अनुवाद भी किया। उन्होंने रोमांटिक कवि की तन्मयता का अपना आदर्श बनाया है।^१

शांतिरजन बच्चोपाध्याय भी निराला पर बंगीय प्रभाव का उल्लेख करते हुए कहते हैं—

'ध्यावावादी युग तथा हिन्दी-काव्य-साहित्य के सबसे अधिक शक्तिशाली कवि निराला हैं। बंगाल देश (महिषादल) में इनका जन्म हुआ था बंगाल में ही पले हैं और बंगला-साहित्य के प्रभाव से सविनय प्रभावित हैं। यथा—

गंध व्याकुल - कुल उर सर
लहर कच कर कमल मुख पर
हृय अलि स्वर रंग शर सर
गु ज बारबार। (रे कह)
निशा प्रिय उर शयन मुख धन
सार या कि असार ? (रे कह)

इस प्रकार की छंदमयी हिन्दी-कविता में पहले नही थी। इस विषय में निराला नि सद्द रवीन्द्रनाथ के श्रेणी हैं।

१ रामकृष्ण रामा निराला पृ० ६६

२ ध्यावावादी युग तथा आधुनिक हिन्दी काव्य साहित्य पर चयन शास्त्रशास्त्र कवि निराला बंगला देश (महिषादल) पर जन्म बंगला देश मानुष बंगला साहित्य प्रभाव प्रभावान्विता गविशेष। यथा

गंध व्याकुल कुल उर सर
लहर कच कर कमल मुख पर
हृय अलि स्वर रंग शर सर
गु ज बारबार। (रे कह)
निशा प्रिय उर शयन-मुख धन
सार या कि असार ? (रे कह)

३—वरणर छंदमयी हिन्दी कविताय आग छिन्नना। ४—ध्यावावा निराला नि सद्द रवीन्द्रनाथ का श्रेणी—आधुनिक भारतीय साहित्य, पृष्ठ १७

परन्तु उपर्युक्त आलोचना के मताके विरुद्ध प्रभाव की बात का न मानने हुए आलोचक मानव कहते हैं—

गम्भीर अध्ययन के अभाव में हिंदी के कुछ नूपाड लखक रहस्यवादी रचनाकारों का कवीन्द्र खोन्द्र से प्रभावित कन्न डालन में तनिक भी सज्जा का अनुभव नहीं करते। मरी सम्मति में ऐसे कवियों ने तो रहस्यवाद का यथास ताप्य समझते हैं न रहस्यवाद की ऐतिहासिक परम्परा का अभिन्न जान ही वह है और न ही वे रवीन्द्रनाथ और निराला का ही भली भाँति समझते हैं।^१

परन्तु क्या 'मानव' हम निराला के गद्यों पर भी अविद्वान् करने का कहेंगे ? निराला न स्पष्ट लिखते हैं—

'मैं यहाँ अर्थात् बगला का विराध नहीं कर रहा, उनका आधुनिक अमर साहित्य का मुझ पर काफी प्रभाव है।'^२

वास्तव में मानव 'प्रभाव' का अर्थ नहीं समझ पाया।

प्रभाव किसे कहते हैं ?

'प्रभाव' शब्द की व्युत्पत्ति में परवर्ती रचना पर पूर्ववर्ती रचना के प्रभुत्व की सोचना स्पष्ट है। किन्तु परवर्ती रचना का पूर्वगामी के प्राण रस में पुष्ट होना ही आवश्यक है—गमी काइ बात साहित्य के क्षेत्र में नहीं बड़ी गई है। डॉ० धुजरीप्रसाद गुप्त का कहना है 'पारिषादिक के सहयोगसंबुद्धि का लाग प्रभाव बहुत है।'^३ डॉ० विमल कान्ति समदर इमरा और स्पष्ट कर देते हैं। उनका कहना है कि प्रभाव सामान्यतः ता प्रसार का होता है। एक ता दुबल अंगम अनुकरण का साहित्य का आभाष्य विषय नहीं बन सकता है परन्तु एक दूसरे प्रकार का प्रभाव है जिसकी गणना—प्रवल यद्यपि मूढम हाने के कारण ही—प्रभाव रूप में की जा सकती है जो परवर्ती लखक के बीच अतन् भाव तथा पारिषादिकता का परिमण्डल हम प्रकार मचाग्नि करता है कि उसने नूतन आश्रय में उसको और स्वतन्त्र रूप में देखा नही जा सकता है। अगली लखक अपनी प्रतिभा के बल में उम अण्डल बना मते है। अर्थात्, रचना का चर्चा अचरय ही मौलिकता का प्राप्य सम्मान महत्त्व पाठक स्वतः ही प्रमाण करते हैं। इन प्रकार के प्रभाव न प्रत्येक दश में तथा प्रत्येक भाव में परवर्ती साहित्य को श्रीमम्पन

१ 'निराला काव्य की दिशाएँ' पुस्तक में उद्धृत

२ परिभाषा की भूमिका, पृ० ७

३ प्रतिशर महर्षी शब्द के साथ प्रभव होने' कवय, पृ० ६०

किया है। इन सभी दोषों में साहित्य प्रभाव अनुराग जात है।^१

वास्तव में इस प्रकार के अनुरागजनित प्रभाव की ही गणना साहित्य में हाती है और प्रत्येक साहित्य में इस प्रकार का प्रभाव दृष्टिगोचर है तथा प्रत्येक देश के आलोचक इस प्रकार के प्रभाव का नियमानुकूल मानते हैं। संस्कृत के कवि कह गये हैं—

कविरनुहरतिच्छायामथ कुक्वि पदात्कि चौरः ।

सर्वप्रबन्धहर्त्रे साहसकत्रे नमस्तस्मि ॥

अर्थात् दूसरा की छाया मात्र का लन वाला कवि कहलाता है भाव का अपहरण करने वाला कुक्वि कहलाता है जो भाव के साथ शब्दों का भी अपहरण करता है वह चोर कहलाता है और जो पद, वाक्य और अर्थ समेत सारे काव्य का अपहरण करता है उस साहस करने वाले का दूर से ही नमस्कार है। संस्कृत के आचार्य आनन्दबधनाचार्य ने 'व्याख्यान चतुष्टय' में और राजनेखर ने 'काव्यमीमांसा' के १० व १३ वें अध्यायों में इस सबको विवक्षित किया है। आनन्दबधनाचार्य कहते हैं—

यदपि तदपि रम्य यत्र लोकस्य किञ्चित्त

स्फुरितमिदमितीय बुद्धिरभ्युज्जिहीते ।

अनुगतमपि पूवच्छायया वस्तु तादृक

मुक्विरूपनिबन्धन निश्चिता नोपयाति ॥

(ध्वन्या० ४।१६)

अर्थात् जिस कविता में महत्त्व भावक का यह सूक्ष्म पडे कि हाँ इसमें कुछ नूतन चमत्कार है फिर उसमें पूर्वकवि का छाया ही क्या न भनसती हा तो भी कोई हानि नहीं। ऐसा कविता क निर्माता मुक्वि अपनी बंधच्छाया'स पुराने भाव को नूतन रूप देने के कारण निन्दनीय नहीं समझे जा सकते। यही प्रभाव का वास्तविक रूप है।

१ प्रबन्ध अथवा मूलतः सूक्ष्म बलिया' में 'साहित्य प्रभाव' की गणना कर यात्रा पार याहा परकी लक्ष्मण भय आपनभाव आ पारिपार्श्विकार परिमण्डल एमनभावे सूचरित करे ये राहार नूतन आश्रय हान उपाय आर स्वतंत्र करिया देया चल ना श्रेणी लेखक आरके आपनाइ प्रतिभा बले आपनाइ करिष्य तोलेन। अवाचान श्रुत्या के मन्वाने अत्रय' मानिकतार, प्राय सम्मान मन्वय पादक स्वतः प्रदान करिया थावन। एइ श्रेणार प्रभाव सर्वत्र आ मन्वान परकी साहित्य के श्रमभ्यन्त करिया छ। एइ सकल चन्द्र साहित्य प्रभाव अनुरागनात रव' काय कानि'मेर प्रभाव

२ कवि हरय पृ० ७६

डा० गुलाबराय का कहना है कि अच्छा कवि यदि छाया भी ग्रहण करता है तो उसमें एक नवीन जीवन भर देता है। वह अपने पूर्ववर्ती कवि की कृतियाँ नया चमत्कार उत्पन्न कर देता है।^१ इस प्रकार हम रखते हैं कि 'मानव अपने तक न मौलिकता के प्रदर्शन के अर्थ में मरकर 'प्रभाव के वास्तविक अर्थ को नहीं समझ सके। डा० विश्वम्भर नाथ उपाध्याय मानव के तर्कों का उत्तर देते हुए एक अग्रणी आलोचक का मन उद्धृत कर^२ कहते हैं—

उपाय लेना और बात है प्रभावित होना और बान। निराला का काव्य रबीन्द्र की कला का अनुकरण नहीं है पर यह भी ठीक है कि निराला ने प्रेरणा के लिए रबीन्द्र की छार देखा है उसी पद्धति को अपनाया है।^३ और हम दोष भी नहीं है और यह बहुत स्वाभाविक भी है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि जो जीवन के सम्पूर्ण अंगों का वरण करना चाहता है वह दूसरे के प्रभाव से बच नहीं सकता। खट लिखते तो प्रभाव को ही आधुनिक काव्य का कपीटी बताते हैं—

What is most important in modern poetry is not that which distinguishes it from the poetry of yesterday but that which makes it in its degree one with the poetry of Homer and Sappho, of Shakespeare^४

हम सम्भवतः म विलियम कुलन ब्रायट की उक्ति बहुत ही ठीक है—

The art of poetry is not perfected in a day. It is brought to excellence by slow degrees, from the first rude and imperfect attempts of versification to the finished productions of its greatest masters. The gorgeousness of poetic imagery, the curious felicities of poetic language, the music of poetic numbers, the spell of words that act like magic on the heart, are not created by one poet in any language in any country. An innumerable multitude of sentiments, of illustrations, of impassioned forms of expression, of harmonious combinations of words, both fixed in books and floating in conversation must

^१ गुलाबराय विद्वान् और अध्येत, पृ० ६१

^२ Borrowal is one thing and influence is quite another thing

^३ विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ज्ञाना—काव्य कला और कृतियाँ

^४ On poetry and the modern men

previously exist either in the vernacular language of the poet or in some other which he has studied and whose beauties and riches he seeks to transport into his own before he can produce any work which is destined to live ' 1

टी० एस० इलियट भी बिल्कुल यही बात कहते हैं —

No poet no artist of any art has his complete meaning alone His significance, his appreciation is the appreciation of his relation to the dead poets and artists ' 2

मौलिकता

परन्तु प्रभाव के अर्थ में यह हम कभी नहीं कहना चाहें कि निराला में मौलिकता नहीं है। निराला ने जो कुछ ग्रहण किया है अपनी प्रतिभा के बल से उस अपनी संपदा बना लिया है और यही अच्छे कवियों का काम होता है। प्रभाव तो मनुष्य पर तब तक पड़ेगा, जब तक उसमें जीवन है। जहाँ जीवन का बग अधिक है प्राण धारा का बहाव तब है उसी स्थान से उसका ऐश्वर्य छितराएगा ही। आलोक सीमा में बंधना नहीं चाहता। उसका धर्म ही प्रकाशित होना और प्रकाशित करना है। 3 इस 'प्रभाव' के अतिरिक्त सम्पूर्ण मौलिक भावों को नकार भी निराला जो न वाक्य का अर्थ ही किया है क्योंकि कवि का पूर्ववर्ती बलाकारों में कितना भी सम्बन्ध क्या न हो कोई कवि किसी विचार को सागापाग नहीं उतार लेता है। जैसा कि गुलाबराय का कहना है—

विचार के भी कई पहलू होते हैं। जो पहलू जिसका अपील करता है वह उसको अपने विचार का विषय बनाना है और उसमें नवीनता पदा कर देना है।

निराला जो मैं भी इस प्रकार की नवीनता के अर्थ में निदर्शन प्राप्त हो जाते हैं परन्तु मौलिकता हमारा आलोच्य विषय नहीं है अतः मौलिकता के प्रश्न में हम बचन की ही चेष्टा करेंगे। यद्यपि हमारे लिए प्रभाव का विषय मौलिकता सामर्थ्य है क्योंकि इस प्रकार के प्रभाव का दृष्टान्त ससार के प्रत्येक साहित्य में प्राप्त होता है तथा ससार के विख्यात आलोचकगण इसका मौलिक साहित्य मानते हैं जैसा कि उपर्युक्त प्रभाव क्या है के अंतर्गत विचारों से स्पष्ट है।

1 On originality and imitation American Criticism

2 Tradition and the individual talent Selected Essays

3 इजारीप्रभात दिवेदी साहित्य का मर्म पृ० ५०

4 सिद्धान्त और अध्ययन पृष्ठ ६०

5 विस्तृत आलोचना प्रभाव क्या है? के अंतर्गत का गढ़ है।

जाना है। जिस हम मौनिक कहते हैं उसमें प्राचीन परम्परा प्राप्त चिन्तन का योगदान रहता है। एक विद्वान का कहना है कि सामाजिक भंगल के अनुकूल परम्परा प्राप्त चिन्तन और विचारधारा से परिष्कृत तथा नवीन परिस्थिति पर विजय की आकांक्षा से समृद्ध व्यक्तित्व का रसमय और ग्राह्य बनाकर अभिव्यक्ति करने में भी साहित्यिक मौलिकता या साहित्यिकता हाँ सकती है। इस प्रकार मौलिक उस साहित्य को कहा जाएगा जहाँ कवि प्राचीन विचार धारा का ग्रहण कर उसका नवीकरण करता है। अतः हमारी दृष्टि में प्रभाव मौलिकता सापेक्ष है। आलाच्य निबंध की आलाचना इन्हीं विचारों के आधार पर की जायगी।

प्रभाव की उपयोगिता

विषय के अन्तर्गत प्रभाव की उपयोगिता पर भी विचार कर लेना होगा। प्रश्न है कि आलोच्य निबंध की उपयोगिता क्या है। इसके उत्तर में हम कह सकते हैं कि प्राचीन साहित्य की तुलना में आधुनिक साहित्य विषय रूप से अत्यंत प्रधान है। अतएव काव्य जिज्ञासा के साथ ही कवि की मानसिक स्थिति की जिज्ञासा का मण्डक अति निविड है और मानसिक स्थिति का प्रश्न का हल करने के लिए कवि का जीवन पर बाह्य परिस्थितियों का प्रभाव तथा अन्य कवियों का काव्य का प्रभाव अथवा तुलनात्मक भाव-साम्य का निर्माण आवश्यक है। भाव साम्य तथा विचार-साम्य एक भावभौतिक तथ्य है जैसाकि निराला स्वयं कहते हैं—

सम्पत्ता के आदिकान से लेकर आज तक जितनी बड़ी-बड़ी बात साहित्य में पृष्ठा में लिखा हुई मिलती है, उनका बाह्य रूपा में साम्य न रहने पर भी वे एक ही सत्य का प्रकाश देती हैं। आज तक मानवीय सम्पत्ता जन्म-वही एक दूसरी सम्पत्ता में टक्कर लेनी आई है वहाँ उनका बाह्य रूपा में हा वषम्य रत्न है, वही भूषणा, आचार व्यवहारों तथा उच्चारण और भाषाया का ही बहिरंग भेद रहा है। उन सम्पत्ताओं के विकसित रूप तक्षिप्त तो एक ही सत्य का अटल आधार महिमा वहाँ मिलती है।^१

इस प्रकार 'प्रभाव' की आलाचना द्वारा विचार-साम्य जन्म एक विरलन तथ्य पर प्रकाश पड़ता है। इसके प्रतिरिक्त, महूदय पाठक जिज्ञासा काव्य के अध्ययन के समय उसमें निरिच्छित जिज्ञासा विशेष भाव या वाक्यभंगिमा का कोई प्रकाश्य अथवा प्रच्छन्न अभिव्यक्ति का, विभा दूसरे कवि के काव्य में साम्य दखना है तो वह एक नूतन ज्ञान का पुनर्जन हो उठता है। निराला का मध्या मुदरी को ही न लीजिए—

^१ सुमनसा तथा दिग्दृशियों के विचार-साम्य, प्रबन्ध-प्रकाश

दिवसावसान का समय
 मेघमय आसमान से उतर रही है
 वह सध्या सुदरी परो सी
 धीरे—धीरे—धीरे

उक्त पत्तिया रमिक पाठकों व मन में रम-सञ्चार करने में समय हैं। किन्तु कविता-पाठ के समय जिनका निम्न पत्तिया और स्मरण हा आएगी—

नामै सध्या तद्रालसा, सोनार आचल खसा
 हाते दीपशिला ।

वे कुछ अधिक रसाप्लुत होंगे इसमें सन्देह नहीं। कारण, इसके पीछे हटल की मनोबनानिक धियौरी थाफ एमोसियसन का यागदान रहेगा। हटल के अनुसार यदि किसी वस्तु के साथ हम अपने विमा पूर्व स्मरण का सम्बन्ध स्थापित कर सकत है तो हम अधिक आनन्द प्राप्त हाता है। कवि, जो दूसरे कवि व काय का नवायन सभव कर सका है, इस वान को कविता पाठ करते हुए हृदयगम कर सहृदय मात्र, जिम्हा दोनो भाषाओं का ही जान है एक विनोप प्रकार के आनन्द से उल्लसित हा उठता है। यह एक प्रकार का अभिनव रस परिष्करण है। इस अभिनव रस के सम्बन्ध में लिखत हुए डा० विमलकांत समदर कहत है कि जिस प्रकार निता व परिचित प्रियतम का सवर्ण नए नूतन वग में देखने की चेष्टा वष्टणव कविया न की है—कभी दानी रूप में कभी योगी वग में तो कभी नाविक रूप में—वस ही यह भी एक प्रकार का नवीन रसास्वादन प्रयास है।

निबन्ध की रूप रेखा

रवीन्द्रनाथ अपनी 'जीवन स्मृति' की रचना कर जिन प्रभाव उपादाना की सहायता से उनका जीवन गठित हुआ है उनको स्पष्ट कर गए है। परन्तु निराला जी ने ऐसी कोई जीवन स्मृति की रचना नहीं की इसीलिए प्रभाव की रेखाए हमारे लिए अस्पष्ट सी है। प्रभाव की रेखाए उनके काव्य में ही केवल हम खिची मिल सकती हैं और वही से उनका चयन हम करना पडेगा।

प्रस्तुत निबन्ध की मामूली 'विषय प्रवण' को छाडकर पाँच प्रकरणों में विभक्त की गई है—

१—पत्तित्व और कृतिरस ।

१) प्रानेर एकान्त परिचित प्रियतम व नव नव वेश वैष्णव कविगण से दखिबार चष्टा करियाछेन—कर्मनशोचन वेश वखनो यागीनरा, कर्मना नाविक वग व नेमनद एक प्रकार नवान रसास्वादन प्रयास रवाकाये कालिदासेर प्रभाव

२—निराला के प्रतिपाद्य पर बगला-प्रभाव ।

३—निराला के कला-पक्ष पर बगला प्रभाव ।

४—निराला के गीत पर बगला प्रभाव ।

५—उपसंहार ।

इसके अतिरिक्त निबंध की परिधि के साथ एक परिशिष्ट भी जोड़ दिया गया है जिसमें निम्नलिखित पर विवचन है—

१—निराला द्वारा अनुचित बगला-कविताएँ ।

२—निराला की कविताओं का बगला अनुवाद ।

३—निराला द्वारा लिखित एक बगला-कविता ।

४—निराला द्वारा बगला-कविताओं पर लिखी गई पराधी ।

प्रभाव का माध्यम है—“शक्ति एवं व्यक्ति किन परिस्थितियों में और किस प्रकार किसी विशेष साहित्य में कम प्रभावित हुआ वह एक व्यक्ति तथा कृतियों के ऐतिहासिक तथा मनावधानिक अध्ययन में पता लग जाता है । इसी लिए प्रथम अध्याय में निराला के व्यक्तित्व तथा कृतियों पर ऐतिहासिक तथा मनावधानिक दृष्टि में विवचन किया गया है । हम प्रकार हम अध्याय में अन्त में तीन विभिन्न विषयों पर हमें विचार किया है—

१—बंग परिवार तथा व्यक्ति

२—कृतियाँ

३—पारिपाक्षिक परिस्थितियाँ तथा युगीन विचार धाराएँ

दूसरे अध्याय में निराला के प्रतिपाद्य अर्थात् उनका विचार-धारा पर बगला प्रभाव का विवचन किया गया है । हमें मुख्यतया रवीन्द्र की दार्शनिक मान्यताओं का निराला पर प्रभाव प्रदर्शित कर निराला के दार्शनिक विचारों को भीमाभा की गई है । चूंकि ये विचार केवलमात्र अनुकरण नहीं हैं शीतल अनुभूतिजय प्रभाव-स्रोतों पर विवचन करने हुए रवीन्द्र के दार्शनिक विचारों के प्रभाव विस्तार का अध्ययन निराला के निम्न त्रिय विषयों के माध्यम पर किया गया है—

१—विराट चित्र

२—प्रकृति

३—नारी प्रेम

४—मानवतावाद

५—भक्ति

परदर्शी ज्ञान में आकर निराला का अनुभूतियों पर महार के दुःखदय का अंतर मापन पट्टचन पर उनका विचारों का स्वरूप ही बदन जाता है और वह

निम्न दो रूपों में उनका काव्य में प्रकट होना है—

१—मामाजिक विद्रोह

२—यग्य

इन दो विचारों पर बगला प्रभाव का भी विवेचन किया गया है। इनके उपरान्त, रवीन्द्र की विषय वस्तु के अनुरूप जो निराला की विषय वस्तु है उम पर आलोचना भी प्रस्तुत की गई है। जो सत्या में है—

१—पुरातन धर्म का अवन

२—मस्वृति

३—स्वदेश प्रेम

४—मृत्यु

५—महापुरुषों की प्रगति

६—कविता सम्बन्धी

यहाँ तक विचार पक्ष अर्थात् बुद्धितत्व पर विवेचन होता है। बुद्धितत्व के उपरान्त निराला की कल्पनाजात भाव भूमियाँ पर बगीय प्रभाव की आलोचना प्रस्तुत की गई है। कविता में विचार भाव का आधार ग्रहण कर उपस्थित होता है और भाव का उभेय कल्पना की सहायता से होना है। इसीलिए बुद्धितत्व के साथ ही काल्पनिक भावनाओं का भी विवेचन आवश्यक है। विचार पक्ष भाव पर के अन्तर्गत है क्योंकि भावपक्ष के दो रूप हैं बौद्धिक तथा भावमय अथवा काल्पनिक। बुद्धितत्व में सत्य और गिव की रक्षा होती है और कल्पना अथवा भावतत्व में सुन्दर का निर्माण होता है। इसलिए इस अध्याय के अन्त में निराला के सौन्दर्य-दान पर विवेचन और उस पर बगीय प्रभाव की भी आलोचना की गई है। इस प्रकार सम्पूर्ण अध्याय की विषय वस्तु निराला का सत्य गिव तथा सुन्दर पर बगीय प्रभाव की आलोचना है।

तृतीय अध्याय में निराला की कला पर बगीय प्रभाव का विवेचन है। आधुनिक युग की प्रभावस्वरूप कलाभियक्ति में यत्तिगत अभिव्यञ्जना का प्रभाव बहुत ही अधिक पड़ा है और यत्तिगत अभिव्यञ्जना का सम्बन्ध कल्पना के साथ बहुत अधिक है। अतः निराला के कलापक्ष को हमने दो भागों में विभक्त कर लिया है—

१—कल्पनागत रूप विन्यास

२—कलागत रूप विन्यास

कल्पनागत रूप विन्यास के अन्तर्गत कल्पनाजात अभिव्यक्ति के तीन रूपों पर विवेचन किया गया है और उम पर बगीय प्रभाव की आलोचना प्रस्तुत की गई है—

१—रूपक

२—प्रतीक

३—बिम्ब

कलागत रूप विषयों के अन्तर्गत परम्परानुसार निराला का कला के विभिन्न रूपों पर बर्णन प्रभाव की इस प्रकार सीमाओं की गई है।

१—अलंकार (पारिचाय अलंकारों के प्रभाव पर भी विवेचन किया गया है)

२—पदविषय जिसके अन्तर्गत भाषा और शब्दों का लिया गया है

३—छन्द

४—अध्याय के अंत में कला के अन्तिम रूप—भाव और भाषा की एकरूपता—पर विवेचन कर यह प्रमाणित किया गया है कि निराला की कला और वस्तु रबींद्र की तरह मयुक्त हैं और कला का वही श्रेष्ठ रूप है।

चतुर्थ अध्याय में निराला के गीत पर बर्णन प्रभाव का विवेचन निम्नलिखित विषयों के आधार पर किया गया है—

१—प्राथम्य प्रधान गीत

२—नारी-मौख्य प्रधान-गीत तथा प्रेम-गीत

३—प्रकृति प्रधान गीत

४—स्वदेश प्रेम के गीत

५—दार्शनिक गीत

अन्त में सम्पूर्ण विषयों का उपसंहार प्रस्तुत किया गया है जहां निराला का मौखिकता पर शब्दों के प्रकट न करने हुए भी उन प्रेम का उपस्थापना नहीं की गई है। कारण प्रस्तुत विषयों में मौखिकता पर विवेचन अर्पित नहीं है।

निराला की परिधि के साथ एक परिधि भी मयुक्त है जहां निराला द्वारा अनुपम बर्णना-कविताओं पर विवेचन प्रस्तुत किया गया है। निराला के लिए अनुवाद व्यक्तित्व मान्य रहा है अर्थात् अनुवादों के व्यक्तित्वों को छाप अनुपम विषय पर स्पष्टन लीन ज्ञानी हैं। और इन प्रकार अन्तर्गत अनुवाद न ही सबके कारण इन अनुपम कविताओं की आलाचना प्रस्तुत की गई है जिनका 'प्रभाव' के अन्तर्गत समाहार हुआ गया है। निराला की कविताओं के अन्तर्गत अनुवाद के साथ ही निराला द्वारा लिखित एक बर्णना-कविता की भी आलाचना प्रस्तुत की गई है जो उनकी वाच्य-पुष्पक में प्राप्त है। इससे अनिश्चित परिधि के अन्तर्गत रबींद्र का भी एक कविताओं पर लिखित निराला की पराधिया का भी विवेचन किया गया है क्योंकि व भी प्रभाव के कारण ही लिखी गई जानती है।

प्रथम अध्याय

व्यक्तित्व और कृतित्व

प्रस्तुत निबंध के आलाच्य विषय के अनुसार निराला जी के व्यक्तित्व तथा उनकी कृतियाँ पर सबसे प्रथम दृष्टिपात करना होगा। प्रभाव का माध्यम है व्यक्ति एवं व्यक्ति के परिस्थितियाँ म और किस प्रकार किसी विशिष्ट साहित्य से कम प्रभावित हुआ वह उनके व्यक्तित्व तथा कृतियों के इतिहास मूलक अध्ययन से ही पता चल सकता है। यह ऐतिहासिक अध्ययन प्रस्तुत निबंध का पट भूमिका होगी जिसे निराला जी के काल पर बगला साहित्य के प्रभाव का रक्षण स्पष्ट और स्वच्छ हो सकेगी। वस भी प्राचीन साहित्य की तुलना में आधुनिक साहित्य विशेष रूप से यह प्रधान है। अतएव काव्य जिज्ञासा के साथ ही कवि की मानसिक स्थिति के प्रति भी हमारी जिज्ञासा बना रहती है। इस मानसिक स्थिति के ज्ञान के लिए कवि के जीवन समय का क्रमिक अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। हिपाला-ते टेन' न कवि व्यक्तित्व के निरीक्षण के लिए तीन वस्तुओं का आवश्यक बताया है—कवि या लेखक का वंश परिवार पारिषदिक परिस्थितियाँ और उस युग का विचार धारा तथा विश्वास। इस प्रकार इस अध्याय के अंतर्गत तीन विभिन्न विषयों पर हम विचार करेंगे—

१—वंश-परिवार तथा व्यक्ति



२—कृतियाँ

३—पारिषदिक परिस्थितियाँ तथा युगीन विचारधाराएँ

इन तीनों पर विचार करने से ही इन विषयों के अन्तर्गत अंतर्गतरूप प्रवाहित निराला के व्यक्तित्व का परिचय हम प्राप्त हो सकेगा। व्यक्तित्व का विकास ही मनुष्यत्व का विकास तथा सम्पत्ता का विकास है। मानव जो काम करता है उस उमरे व्यक्तिरूप का वास्तविक फल देता जा सकता है व्यक्तिरूप यदि धृष्ट है तो कम उसका फल। धृष्ट की प्रकृति पर फल की प्रकृति निर्भर करती है अतएव व्यक्तित्व के ज्ञान में ही कृतियों का ज्ञान हो सकता है। वस भी यह

१ टेन हिस्सा अर्थात् निराला जी के जीवन

२ प्रथम भाग निराला जी के व्यक्तित्व तथा कृतियों

सबविधि है कि कलाकार क कृतित्व का समझन क लिए उमक जीवन की परिस्थितिया तथा विभिन्न घात प्रतिघाता का अध्ययन आवश्यक है क्योंकि उमकी सहायता म ही हम कलाकार की चेतना का ज्ञान प्राप्त हाना है।

वश परिवार तथा व्यक्ति

सन १८६६ ई० की वसन्त-पंचमी का दिन। बगाल क घर घर म मरम्बती पूजा क आयोजन म सब व्यस्त हैं। वामती की अपूर्व हरातिमा बगाल की अतुलनीय गामा का शौर भी बढ़ा रही है। निराना जी कहत हैं— वहा (बगाल म) मलय पवन बहता है मयुक्ता प्रान्त (मिन्पी प्रान्त) म नहीं। बगाल म ऋतु पहले आती है।^१ रबी द्रनय का कल्पना म यह गामा शौर भी स्पष्ट हा गइ है। बहुत दूर का अमीम आवास आज बनराजि—नाला पृथिवी क तिरहान पर भुङ पडा। काना काना म कहा मैं तुम्हारा हूँ। मर अशु आज चंचल हुए है क्या यह तुम दख नहीं पानी हा ? मरा वश आज तुम्हारे व्यामल हृदय क ममान ही श्यामल बन गया है।

बसन्त तार गान लिख घाय घूलिद परे कि आदरे ।
ताइ स घूला उठे हसे बारे बारे

बारे बारे रूपर साजि आपनि भरे कि आदरे ॥

(वसन्त अपना गाना घूलि पर निधना है इसालिए ता वह घूलि बार बार इस उठनी है। बार-बार अपन रूप की डाला स्वय हा किन्नर प्यार म भरती है)^२

शौर वसन्त न उमी प्यार स बगाल क महिपाल स्थान म रहन वाल १० गाममहाय त्रिपाठा क घर का भी मजा लिया। मरम्बती क बर पुत्र मूयकान्त त्रिपाठी निराना का जन्म उसी दिन हुआ। वामती की वाग्वा दाना हा लुगा म भूम पही शौर मौज्य तथा त्रिघा म उम विभूषित किया। वह अच्छा हा था कि निराना क पिता १० राममहाय जा गयाकाना, जिला उताव क रहन वाव हान पर भी नौकरी क बाराग बगाल क मन्निपुर त्रिन की महिपाल नाम का जमोतरा म बम गए थ। बगाल म रहन हुए निराला उमकी कला माहित्य तथा उमकी मिट्टा म परिचित हुए त्रिन मिट्टी म मवदा गान की ही ध्वनि गुञ्जित रहती है। निराना जा कहत हैं— बगाल मरा जन्मभूमि है इस निग बन्त प्रम है।^३ शौर यह हमारा मौभाग्य है कि कवि निराला न बग दग

^१ महाराज निराना म उता

रवन्नाथ मकनन

रवन्नाथ प्रसादिका

^२ निराना प्रवचन

म एक एस समय जन्म लिया था जब बगला-समाज की भित्ति की दरार इतना विस्तीर्ण नह। हुई थी कि एक जगह से दूसरी जगह चलना ही दुष्कर हो जाए और इस भित्ति का हटता कवि के लिए बहुत ही आवश्यक है। इस सामाजिक भित्ति के आश्रय में ही कवि सबसे प्रथम खड़ा हाता है।

परन्तु दुर्भाग्यवश उस भित्ति की दरार निराला के जन्म के तृतीय वर्ष से ही स्फीत होन लगी। निराला अभी तीन वर्ष के ही थे कि उनकी मा का देहात हो गया और यह दरार बढ़ते-बढ़ते उनके जीवन का एक धार बरबस बनकर रह गई। गायद इसी कारण के केवल महन् जानीय कवि हो पाय ह महत्तर सवजातीय कवि नही हो सके। रवीन्द्रनाथ भी यदि जीवन की प्राथमिक अवस्था से ही इस प्रकार के आघात सहन तो गायद प्रतिभा का प्राचुर्य होन पर भी महत्तर कवि नही हो पात।

माता का देहात कवि के लिए किण्वार कल्पना पर पहला प्रहार था। कवि का अनगिनत आ गए शरण में जन जननी से उस अभाव की पूर्ति करनी पटी। मा के अभाव में भी निराला काफी स्नेह में पाल गए। निराला के पिता महिपादल राजा के प्रियपात्र होन के कारण सम्पत्ति भी हो गए थे अभी कारण निराला के पालन पोषण में किसा भी प्रकार का कठिनाई नही हुई। वे इसा समय में बसवानी भाषा तथा बगला दाना ही बोलत थे। निराला के लिए ये दाना ही भाषाए मातृ भाषा के समान थी। उहाने प्रबल प्रतिभा में लिखा है— बगला मरी बसी ही मातृ भाषा है जसी हिन्दी। निराला जी जन १ वर्ष के हुए तब उन्हें एक बगला पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजा गया। इन सम्बन्ध में गंगाप्रसाद पाण्डेय ने लिखा है भावुक बगानी अध्यापक निराला को शिक्षण के साथ साथ अपना स्नेह भी देत रहे ता कुछ आश्चर्य का बात नही और इस प्रकार प्रारम्भिक काल से ही उन पर बगला का प्रभाव पड़ता रहा। यह बहुत ही दुःख की बात है कि जीवन में केवल घात प्रतिघात महते हुए दुःख कवि अपने जीवन में हो बीतराग हो गए थे अभी कारण रवीन्द्रनाथ की तरफ किसी भी प्रकार की जावन स्मृति उहाने नही लिखी। यदि लिखत तो रवीन्द्रनाथ के समान उनके जीवन के प्रारम्भिक प्रभाव का हम महज हो पान हो जाता।

पाठशाला को पढ़ाई समाप्त करके वे महिपादल के हाई स्कूल में अग्रजी पढ़त रहे। स्कूल में किसी पढ़न का कोई सुविधा नही थी घर पर सिपाहिया के साथ

१ राम विलाम शर्मा निराला

२ निराला प्रबल प्रतिभा

गंगाप्रसाद पाण्डेय मन्नाप्राण निराला

व रामायण और ब्रजविलास व द्वारा हिन्दी भी सीखत रह। हाई स्कूल में निराला न द्वितीय भाषा के रूप में संस्कृत सीखा था। इस तरह हिन्दी, संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी चार भाषाएँ उन्होंने साथ साथ सीखी।

डा० गंगाधर प्रसाद द्विवेदी का कहना है कि उनकी शिक्षा भी बंगला से ही प्रारम्भ हुई थी। उन्होंने तत्कालीन बंगला साहित्य का स्वच्छतावादी और रहस्यमयी कविताओं का अध्ययन किया था।^१ इसी समय से उन्होंने कविता लिखनी प्रारम्भ कर दी थी। अब तक वे बंगला में कुछ पद लिखा करते थे, किन्तु उनका मन हिन्दी लिखने की ओर प्रेरणा प्राप्त गया। इस सम्बन्ध में गंगाधर प्रसाद पाण्डेय ने लिखा है— उन्होंने उस समय लिख गए एक कवित्त का कुछ अंश इस प्रकार बताया—

करि अथ नम बग भाषा क समस्त छंद
ब्रज अथवा मे अथ कवित्त ह्ये लिखनो है।

इस सम्बन्ध में निराला ने स्वयं भी लिखा है—

मैं कवि हो चला था। फलन पत्र की आवश्यकता न थी। प्रकृति का शासन करता था। कभी-कभी लड़कों को समझाता भी था कि इतनी बड़ी किताब मानने पड़ी है, लड़क पास हान के लिए सर के बल हो रहे हैं वे उड़ूँज कोटि के हैं। लड़क अवाक दृष्टि से मुझे देखते रहते थे, मरी बात का लोहा मानते थे। किताब उठाने पर और भय हाता था, रख देने पर दूने देवाक से पंख हा जान का चिन्ता। फलत बल्पना में पृथ्वी अन्विक्ष पार करने लगा। बल्पना का बसा उड़ान आज तक नहीं उड़ा।^२

और इस प्रकार निराला का पत्रार्थ पर वही पूर्ण विराम लिख गया। परन्तु संस्कृत, बंगला तथा हिन्दी और अंग्रेजी-साहित्य का अपार ज्ञान उनका था। गायक यह रवीन्द्रनाथ का प्रभाव होगा कि वे नवी कथा से घाय नहीं बढे। इस बात को स्पष्ट करने के लिए गिरीशचन्द्र त्रिवाड़ी गंगाधर प्रसाद पाण्डेय के कथन का उद्धृत करते हैं—

जिसी ने निराला से कहा था कि प्रतिभागाली यकिन कभी परीभाषा के चक्कर में नहीं पड़ते। स्वयं रवीन्द्रनाथ नाथय्याम है यह निराला का पक्षी निधि मिना। उन्होंने साक्षात् मुझे रवीन्द्रनाथ से कम थोड़े ने जाना है और पराक्षा नहीं

१ गंगाधर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी-साहित्य पृ० ४६०

२ पाण्डेय महाभाष्य निराला

३ निराला संस्कृत का ४६।

दा ताकि नवी कथा पास रह ।^१

तिवारा जा कहते हैं कि निराला जो क इम कथन म एसा नात हाता है कि व बचपन स ही रवीन्द्रनाथ स प्रभावित थे साय ही बगला साहिरय स भी । आज भी रवीन्द्रनाथ के गीतो की संगीत भाधुरी म आत्म विभार हो कवि अपन को ही रवीन्द्रनाथ समझ बठता है ।^२

चौत्ह बप की अवस्था म चादपुर जिला फतहपुर म निराला की शाग हा गइ । मातृ स्नह से बचिन बालक का मनोहरादेवी म स्त्री-स्नह मिता । निराला का उनक माय घनिष्ठ प्रेम था जिमका प्रमाण सुकुल की बीबी का एक छाटा सा चित्र है ।

एकान्त म पत्नी जी मिली बडी तत्परता स बोनी—वहा नाच देखकर भूतन जाइएगा । निराला जो एक जमीनार का बरान म जा रह थ । उहान उत्तर िया राम भजा—कव मूय प्रभवावग कव चाल्यविषयामति चला कहकर वह गव गुर-गमन स काम को चल दी ।^३ परन्तु बवाहिक जीवन का यह मुख अधिक दिन तक नही बदा था । था मनाहरा देवी न एक पुत्र और एक कया का जन्म दवर इ फलुएजा की बामारी म गरीर त्याग िया । इम सम्बन्ध म डा० रामविनाम शमा निखत है—

पत्नी का मृत्यु मायक म माँ का गाद म हुइ । सब कुछ समाप्त हान क बाद मूयकुमार भी वहा था पहुच । इस वष्यपात म उनका बुरा हाल था । घटा स्मगान म बठ रहत । वहा काइ सूडी का टुकग हड्डी या राख मिल जाती ता उस हृदय स लगाए घूमा करत । इ फलुएजा म इतने मनुष्य नष्ट हुए थे कि गगा क किनारे दिन रात चिताआ की जान कभी बन्द न हानी थी । अबबूत टील पर बठा हुआ युवक कवि घटा तक बहती हुई लागी का दृश्य दखा करता ।

माता का देहात निराला की जावन भित्ति की पहला दरार थी और वह दरार स्त्री क देहात स और भी स्फीत हा गई । इस सम्बन्ध म विश्वम्भरनाथ उपाध्याय निखत हैं कि यहा म दा प्रतिक्रियाण स्पष्ट दृष्टिगाचर होती हैं एक कवि का रूथता जा उनकी प्रिया की सरम दृष्टि निशेष स जुप्त हा जाती थी, वन्ता हुई कुछ समय ता अद्व चतनावस्था-सी रहा जिमम अन्तमुखा प्रकृति बनी दूसरा आर कामन आश्रय क नष्ट हा जान स उग्रता बन्ती गई ।^४ डा०

१ महाभाग निराला, पृ० २८

कवि निराला आर उनका काव्य-न्यासित्य पृ १०

२ सुकुल की बाना

३ रामविनाम शमा निराला

४ निराला—काव्य कला आर कृतिया

विश्वम्भरनाथ उपाध्याय का तात्पर्य है कि एक तो कवि में प्रारम्भ से ही स्थिता थी, परन्तु विवाह के उपरांत उनकी कविता में ऐंद्रिकता का समावेश हुआ, फिर स्त्री की मृत्यु के उपरांत उनमें अन्तर्मुखी प्रकृति के प्रसार के साथ उग्रता का भी संप्रसार हुआ। उपाध्याय जी का यह विवेचन अनुचित ही प्रतीत होता है। जम यह कहना गलत होगा कि प्रारम्भ में ही निराला जी में स्थिता थी वरन् जो चीज उनमें थी वह व्यक्तित्व का ग्रह था। परिवार में लगभग दूर की मृत्यु से जब उनका मामन जीविका का प्रश्न आया और इस वास्तविक जगत में उनका प्रथम बार निकट परिचय हुआ तब उनके ग्रह का काफी धक्का पहुँचा और उनमें स्थिता आ गई। उस महामारी में कवि की पत्नी की ही मृत्यु नहीं हुई पिता चाचा आदि एक के बाद एक सभी स्वर्ग मिथार गए। चार भतीजा और अपनी दो सतानों का भार २६ साल के युवक के कंधा पर पड़ा। सम्पूर्ण परिवार के साथ पत्नी की अमासयिक मृत्यु का गार्ह ही निराला के लिए बचपान में नहीं था ऊपर में बच्चा का पालन पोषण एक विकट समस्या के रूप में सामने आया। निराला माना स्तब्ध रह गए। व्यापक कमठना और विचारा की घड़ियाँ हृत्ता गन्धकाल में ही उनका बहुत बड़ी विशेषता थी। अब निराला साहित्य जीवन में पूरे प्राण प्रवण के साथ प्रवेश करने का कटिबद्ध हो गए। साहित्य का उद्धान अपनी पारिवारिक तथा सामाजिक क्षतिपूर्ति का साधन बनाया। इस प्रकार जीविका के प्रश्न पर उनका इस यथाय मगार से दुःखद परिचय हुआ जो उनके व्यक्तित्व की भित्ति की दरार का स्फोट करने में सहायक बना। प्रारम्भिक युग से ही व्यक्तित्व के ग्रह में युक्त होने के कारण जीवन की विपमताएँ न उह विद्राहात्मक तथा स्थान बना दिया न कि स्त्री के वियोग न, यद्यपि स्त्री का वियोग परिवार का भार तथा जीविका का प्रश्न और ससार की विपमताएँ सबन एकत्रित होकर उनका मन पर आघात किया था और पतस्वरूप निराला जी स्थान बन गए थे।

उपाध्याय जी की दूसरी बात कि विवाह के उपरांत उनकी कविता में ऐंद्रिकता का समावेश हुआ, भी उचित नहीं लगती है। अभी हम यह चुक है कि जीविका का समस्या के समाधान के लिए निराला जी ने साहित्य क्षेत्र में प्रवण किया यद्यपि प्रारम्भिक अवस्था में ही कविता लिखने की प्रेरणा उनमें थी और उनकी प्रथम प्रौढ़ कविता 'जूही की कली' सन् १६ में लिखी जा चुकी थी। जूही की कली में ऐंद्रिकता का चरमरूप लिखाई पड़ता है इसलिए यह कहना भ्रम होगा कि विवाह से पहले उनमें ऐंद्रिकता नहीं थी यद्यपि यह बात ठीक है कि विवाहोपरान्त यह ऐंद्रिकता और भी अधिक व्यापक हो गई थी।

जहाँ तब विश्वभरनाथ उपाध्याय का तीसरा बात कि निराला की स्त्री की मृत्यु के कारण निराला की रूग्णता ने अद्भुत चेतनावस्था में रहकर उनकी अन्त प्रकृति का प्रसार किया, भी दोषयुक्त है। कारण निराला के व्यक्तित्व का यह भी इस प्रवृत्ति का आधार है। व्यक्तित्व पर जीवन का प्रहार सहत हुए व विद्राहात्मक बन गए। मिल्टन को जब 'रेस्टोरेशन' के समय राज्य पद से बहिष्कृत कर दिया गया और साथ ही उनके नेत्रों की शक्ति जाती रही तब मिल्टन स्वयं विद्रोही कवि बन गए थे। भगवान से बचकर शतान की महत्ता का उद्घाटन प्रतिपादित किया था। निराला और मिल्टन दोनों ही 'व्यक्तित्ववादी पुरुष' हैं अतः इस विद्राह से ही 'विराटत्व की भावना' ने उनके मन में आश्रय ग्रहण किया। इस विराटत्व की भावना के प्रसार में रवीन्द्र तथा विवेकानन्द का बड़ा तथा उपनिषद् के विचार भी निराला का सहायक बने जहाँ इसके विपरीत मिल्टन की पियोरीटन फिलासफी उनके विराटत्व के प्रसार में सहायक हुई थी। इस प्रकार निराला ने इन दार्शनिक विचारों से प्रभावित होकर विश्वसत्ता का साथ तादात्म्य स्थापित करके विराट भावना की अभिव्यक्ति प्रारम्भ की। यहाँ निराला रहस्यात्मक बन जाते हैं और उनका अन्त प्रकृति का प्रसार इसी कारण हुआ। रहस्यात्मक भावना दिव्य रति के रूप में आगामी काव्य में प्रतिध्वनित होने लगी न कि स्त्री की मृत्यु के कारण शृंगारिक अनुभूति दिव्य रति में परिवर्तित हुई। यदि ऐसा होता तो उनकी रहस्यात्मक कविताएँ हीन ग्रन्थियाँ (परवर्टेड सब्स) की परिचायक होती न कि सुष्ठु वदान्त का भावनाओं की प्रपञ्च। यद्यपि अपनी 'दिव्य रति' की प्रमुख पात्र उनकी स्त्री स्वयं थी। गीतिका के समर्पण में उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया है—

जिसकी हिंदी के प्रकाश से, प्रथम परिचय के समय में आख नहीं मिला सका—लज्जाकर हिंदी की शिक्षा के सक्लप से बुद्ध काल बाद दश से विदग्ध पिता के पास चला गया था और उस हीन टिप्पणी प्रान्त में विद्या शिक्षक के 'सरस्वती की प्रतिभा लेकर पद साधना की और हिंदी नौगोपी की जिम्मा स्वर गृहजन परिजन और पुरजनों की सम्मति में मर (सगीत) स्वर का परास्त कर रहा था, जिसकी मन्त्री की दृष्टि क्षणमात्र में मरी रूग्णता का दावकर मुस्करा देती थी जिसे अन्त में अदृश्य होकर मुझमें मरी पूर्ण परिणीता की तरह मिलकर मर जड़ हाथ का अपने चतन हाथ से उठाकर दिया शृंगार की पूर्ति की उम मुग्धिणा स्वर्गीया प्रिय प्रकृति धामनी मनोहरादेवी का सादर।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि उनका साहित्यिक जीवन का प्रमुख आधार

सहजात साहित्यिक वृत्ति थी जिसका स्फुरण सन १९१६ में 'जूही की बत्ती' के माध्यम से हुआ। साहित्यिक जीवन का दूसरा आधार था—स्वयं निराला की जीविका का प्रश्न। मसार का ममस्त भार जून १९१६ में घाद उन पर आ पड़ा तब जीविका बर्मान के लिए ही उन्होंने सक्रिय हाकर साहित्य-क्षेत्र में प्रवेश किया। और उनके काव्य का तीमरा आधार था—व्यक्तित्व का अर्थ जिसमें उनके प्रिय पात्रों की मृत्तु स उह एक भयंकर धक्का पहुँचा, जिस कारण एक ओर उनकी सहजान-काव्य वृत्ति दार्शनिक तटस्थता तथा विदग्ध हृत्प्य की कक्षा को लेकर फूट पड़ी और दूसरी ओर अपने विध्वस्त अहं का समीकरण निराला जी ने प्रकृति के विराट चित्र के अंकन के द्वारा किया और इस प्रकार 'यापक ढंग से व काव्य की रचना करने लगे। यहाँ से अब हम व्यक्ति के साथ ही कृतियाँ का भी विवेचन करेंगे।

कृतियाँ

जसाकि निराला ने स्वयं मुकुल की बीबी में कहा है, बाल्यकाल में ही कविता लिखने की ओर उनकी रुचि हो चली थी। निराला न रवीन्द्र की तरह किसी 'जीवन-स्मृति' का रचना नहीं की नहीं तो निश्चित रूप से उनके प्रारम्भिक काव्य जीवन का इतिहास हम प्रस्तुत कर सकते। गंगाप्रसाद पाण्डेय की पुस्तक 'महाप्राण निराला' में यह पता चल जाता है कि बगला के साथ ही अवधी और ब्रजभाषा मिश्रित भाषा में व कुछ कवित्त सभ्ये प्रारम्भिक काल से ही लिखने लग प। जीविका के प्रश्न के कारण जब व निश्चित रूप से साहित्य क्षेत्र में दूद पड़ और कविताएँ प्रकाशित करने लग तो उनकी प्रारम्भिक बगला-कविताओं की बहुत प्रशंसा हुई। इस सम्बन्ध में पाण्डेय जी लिखते हैं 'राजा के काम से प्रायः निराला का कलकत्ते जाना आना पड़ता था। धीरे धीरे लोग-बाग उह कलकत्त में भी मानने-जानने लगे। उनकी बगला कविताओं की तारीफ महिपादल में कलकत्त तक समान रूप में होने लगी।'

हिन्दी की सयप्रथम प्रौढ रचना निराला का 'जूहा की बत्ती' है जो सन १९१६ में लिखा जा चुकी थी। डॉ० रामबिलाम शर्मा इसकी रचना के विषय में लिखते हैं कि निराला जो व 'व्यक्तित्व में निर्भक्तता और उद्वेगता' कूट कूट कर भरी है। महिपादल में वे 'मगान में घूमने जाया करत थे। जूही का बत्ती का मुद्दाग उहाने वही पर देखा था।' सन् १९२० में निराला ने अपनी सय प्रथम

१ गंगाप्रसाद पाण्डेय महाप्राण निराला पृ० ८

२ गंगाप्रसाद पाण्डेय महाप्राण निराला पृ० ९

३ रामबिलाम शर्मा निराला

रचना सरस्वती में छपने के लिए भेजी, किन्तु द्विवेदी जी ने इस लौटा दिया। सरस्वती से कविता लौटने का दुःख निराला को कुछ कम नहीं हुआ, पर धम्म उनकी प्रतिभा के विकास में कोई बाधा नहीं पड़ी।

सरस्वती में कुछ काल उपरांत एक लेख के छपने पर उनका परिचय द्विवेदी जी से हो गया और द्विवेदी जी के सुझाव पर वे रामकृष्ण मिशन की हिन्दी पत्रिका 'समन्वय' के संपादक बन गए। यही स उनकी काव्य प्रतिभा का स्फुरण प्रारम्भ होता है। उनमें नवीनता की ओर झुकाव था। माइकल मधुसूदन, रवी द्रनाथ तथा विवेकानन्द के प्रभावस्वरूप उन्होंने हिन्दी में मुक्त छन्द तथा नवीन भाव योजना के साथ विवेकानन्द के वेदांत-ज्ञान का प्रचार किया। इस तरह हिन्दा-वाच्य में निराला ने अपना भाव विचार सही पदावली किया। समन्वय काल में मुक्त छन्द में लिखी उनका रचना पंचवटी प्रसंग उनकी इसी मुक्त शक्ति का प्रमूति है। निराला ने लिखा है—पुराण इतिहास और समाज तीन मुख्य आधार नाटका के लिए हैं। पौराणिक नाटको की भाषा प्रवाहपूर्ण होनी चाहिए। प्राचीन युग का रूप अभी पूरा उतरता है। भाषा इतनी विलुप्त न हो कि जनता समझ न सके पर ऐसी सीधी और शिथिल भी न हो कि प्राचीनता का गम्भीर वातावरण नष्ट हो जाय। मरा लिखा हुआ स्वच्छन्द छन्द ऐसे ही नाटका के लिए उपयोगी है। इसी विचार से मैंने लिखा भी था। अश्व काव्य लिखने के विचार में पहले मैंने उस मिल्टन की तरह विलुप्त भाषा पूरा कर लिया था पर मरा असली मतलब उस पौराणिक नाटको में लाना ही था। पंचवटी प्रसंग की अवतारणा का यही कारण है। इसका उदाहरण पेश करने के लिए मैंने ता अपने लिए एक सामाजिक नाटक के एक पाठ में इसका समावेश कर दिया था और वह पाठ कलकत्ता की स्टेज पर मैंने खुद रखा था।^१

अपनी सब प्रारम्भिक कविताओं का अनामिका नाम से उहाने १९०३ में एक मग्नह निकाला। उस समय वे 'मतवाला' के सम्पादक थे और काव्य में क्रांति का प्रचार कर रहे थे। इस सम्बन्ध में निराला ने मुकुल की बीबी में उस समय का स्मरण इस प्रकार किया है—

बहुत दिना की वान है। तब मैं 'उपानार माहित्य समु' मथन कर रहा था। पर निकल रहा था केवल गरल। पान करने वाल अकल महादव बाबू।^२

अनामिका (१९२३) में निराला की वे कविताएँ मग्नहीन हैं जो 'नारायण

१ निराला प्रथम प्रतिभा

२ निराला मुकुल की बाबू

'मतवाला और 'मम'वच' में पहली बार प्रकाशित हुई थी और जिन्होंने खंडों बोलों हिन्दी कविता में एक विशेष परिवर्तन की सूचना दी थी। इस सम्बन्ध में रामरतन भटनागर लिखते हैं कि 'उम्र समय इन कविनाम्ना की विशेष प्रसिद्धि नहीं हुई परन्तु साहित्य-ममालाचका और हिन्दी कविता की गतिविधि समझने वालों का ध्यान उनकी ओर प्रवर्धित गया। महादेव प्रसाद म० ने लिखा— 'इतना मैं प्रवर्धित नहीं और दाव व साथ बहूना कि शिपाठी जो न पचवटी प्रसंग अधिवाम तथा जूही की कला नामक कविताओं का लिखकर हिन्दी के पद्य साहित्य में एक अभूतपूर्व नई गति का समावेश किया है और यदि हिन्दी का कवि-समाज इस गति का आन्दोलन और अनुगमन करेगा तो मातृ भाषा का उदा उत्थार होगा और उसका साहित्य में एक नई बाल पदा हो जायगी। इस गति की अगमिका की कवन कुछ ही कविताएँ 'परिमल' में पुनः आई हैं। वही पचवटी प्रसंग अधिवाम जूही की कला और तुम और मैं। 'गण कविताएँ' कवि ने स्वयं अग्रणी समझकर छोड़ दीं।

इसी बीच निराला जी मम'वच' छोड़कर मतवाला के सम्पादक बन गए थे। फिर मतवाला भी छाटना पड़ा और म० १९२८ में कलकत्ता छोड़कर वे लखनऊ आ गए। म० १९२० की तरह हिन्दी प्रान्त इस बार भी उनमें विमुक्त नहीं रह सका और मुधा ने उनकी कृतियाँ का स्वागत किया। म० १९३० का निराला का दूसरा काव्यसंग्रह 'परिमल' प्रकाशित हुआ। डॉ० रामरतन भटनागर का कहना है कि 'प्रसाद के आसू ने जिस क्रान्ति का सूनापात किया था, पते के 'पल्लव' ने जिस क्रान्ति का गहराई दी उसी क्रान्ति का विस्तार निराला के इस महत्वपूर्ण काव्यसंग्रह 'परिमल' ने प्राप्त किया।' निराला का भाषा भाव उन्मत्त बना गया की सम्पूर्ण परम्परा में विद्रोह करने हुए था और उनके लिए यह स्वाभाविक ही था कि उनका बाल-बीत जाल दाल सभी में एक नवीनता का आभास मिले। निराला ने अपनी गति-साहित्य में समाज में कवि का एक अलग स्थान बनाया और जीवन में साहित्यकार की प्रतिष्ठा और महत्ता का उदघाटन किया। चारा और निराला के उदा की पैरोकी बनने लगी पर निराला इसमें घबराने वाले नहीं थे। उन्हें अनेक प्रकार में चिढ़ाने की भी चेष्टा की जाती थी, किन्तु निराला यह कह दिया करते थे— कुत्तें मौकिल ही रहने ह हाथी अपनी धान में चला जाता है मनुका की तरह-

१ रामरतन भटनागर कवि निराला एक प्रवर्धन

२ निराला आदिता का भूमिका (१९३३)

३ रामरतन भटनागर कवि निराला एक प्रवर्धन

र में बादला का गरजना नहीं सकता ।' हुआ ना यही क्याकि धीरे धीरे इस नवीन भावधारा के पाव जमन लग और वह स्वमम्मति में इस युग की मूल रंगा शक्ति के रूप में स्वीकार भी कर ली गई ।

निराला ने 'परिमल' की भूमिका में लिखा है—

'इस युग में कुछ प्रतिभाशाली अल्प वयस्क साहित्यिक प्राचीन गुरुद्वय के चञ्चल साम्राज्य में बगवत के लिए शासन-स्थिति ही पा रहे हैं अभी उन्हें साहित्य राजपथा पर साधिकार स्वतंत्र रूप में चलन का सौभाग्य नहीं मिला । परन्तु सा जान पड़ता है कि इस नवीन जीवन के भीतर में शीघ्र ही एक नया आवन धरकर उठने वाला है जिसके साथ साहित्य के अग्रणीत जल बग उस एक हाक की प्रदर्शना करने हुए उनके साथ एक ही प्रवाह में बह जायेंगे और अदृश्यभ्रष्ट या विदग्ध से गुप्त न हो एक ही जीवन के उदार महासागर में विलीन होंगे । अभी प्रतिभाशाली साहित्यिका का निष्प्रभ तथा ह्य सिद्ध करके सममान शासन ग्रहण करने वाल महालेखक और महाकविगण साहित्य में अपनी प्राचीन साम्राज्य प्रथा की ही पुष्टि कर रहे हैं ।

ऐसी स्थिति में परिमल निराला रहा है । उनके तीन गण किये हैं । प्रथम गण में सममात्रिक सात्यानुप्रास कविताएँ हैं जिनके लिए हिन्दी के लक्षण या के द्वारपालों का प्रवण निषेध या भीतर जाने की सख्य मुमानियत है । मरे खण्ड में विषयमात्रिक सात्यानुप्रास कविताएँ हैं । तासरे खण्ड में स्वच्छन्द हैं, जिनके विषय में मुझे विषय कहन की जम्मत है कारण इस ही हिन्दी सर्वाधिक कलक का भाग मिला है ।

इस सम्प्रदाय में बच्चनमिह का कहना है—निराला ने जिस मुक्त छन्द उद्दाम भावधारा और दार्शनिक श्रोजस्विता के साथ हिन्दी में प्रवण किया वह हिन्दी माला के लिए सबसे नवीन वस्तु थी । निराला का छन्दहीन नवीन प्रयास उनके लिए अदभुत वस्तु था इससे उनकी रुचिबद्ध रुचिया का मल तो दूर रहा इसका सम्पर्क भी उन्हें प्रिय न था । यही कारण है कि न ता इनकी कृतिया का सहा भूतिपूर्ण अध्ययन हुआ और न लोगों ने उन्हें समझने का ही प्रयत्न किया । इस भाँति एक श्रेष्ठ प्रतिभामम्पन कवि की अवहटना होने लगी । या तो नवीन आवाज के सभी प्रवक्तकों का प्रबल विरोध हुआ किन्तु निराला का शीरा की शक्ति, अधिकांश मध्यम लक्ष्य विरोधों का सम्पन्न करता पड़ा । यह निराला का ही

व्यक्तित्व है कि अनेक विरोधा और मघर्षों के बीच म होत हुए आज य दूतने उक्त पहुँच पाय ह ।

निराला क 'परिमल' की कविताओं के अनेक विषय है । साधारण दृष्टि से उसमें प्राथनापरक कविताएँ, प्रकृति सम्बन्धी कविताएँ प्रमविषयक कविताएँ दश प्रम म प्ररित कविताएँ तथा सामान्य मानव भूमि पर आहत कविताएँ एक लित हैं । समन्वय के सम्मान-काल म इनकी दार्शनिक प्रवृत्ति का जो विकास प्राप्त हुआ था उसी का आकलन परिमल की कविताओं म प्राप्त होता है । इनकी कविताओं म अद्भुत ज्ञान की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है । इस सम्बन्ध म डा० रामबिलास गर्मा का कहना है कि परिमल की रहस्यवादी कविताओं का एक साथ पढ़ने पर पलासंगता है कि रवाद्रनाथ से अधिक कवि पर विवकान्त का प्रभाव है ।^१

इसके उपरांत निराला की नई कृति गीतिका १९६ म प्रकाशित हुई । इस बीच उनके ऊपर म लक्षण भभा प्रवाह वह गया । सन ३५ म सरोज (उडकी) की अष्टमस्यिक मृत्यु ने निराला का बहुत भारी आघात पहुँचाया । चारा और के विराध और माहितिक व्यवसायिया क छलो से पीडित कवि के लिए यह दुघटना महान शोक का कारण बन गई । जावन भभा क बीच निराला एकाकी तन की भाति भकभोरे गय पर हिन्दी के सौभाग्य से उखडे नही और सन ३६ म छपी उनका गीतिका की प्रभूत प्रगता हुई । 'गीतिका' क परिचय म श्री जयशंकरप्रसाद लिखत हैं—

गीतिका हिन्दी क निरा मुन्दर उपहार है । उसक चित्रा की रखाण पुष्ट वर्णों का विकास भास्वर २ । उसका दार्शनिक पक्ष गम्भीर और व्यञ्जना मूर्ति मनी है । आनन्दन क प्रतीक उहा के लिए अस्पष्ट हाण जिहान यह नहा समझा है कि रहस्यमयी अनुभूति युग क अनुसार अर्पण लिय विभिन्न आधार चुनती है । केवल कोमलता ही कवित्व का मापण्ड नहीं है । निराला जी ने धाज और मौन्दय भावना और कोमल कथना का जो माधुमय सहलन किया है वह उनकी कविता म अति-साधना का उज्ज्वल परिचायक है । स्वयं निराला न इन गीता के सम्बन्ध म कहा है—खड़ी बोली की मरुति जब तक मसार की अच्छी अच्छी गीत्य भावनाओं म युक्त न हागी, वह समथ न हागी । उसकी मपूर्ण प्राचीनता जीण है ।^१

१ कल्याणदत्त काश्मिरी कवि निराला पृ० ८

२ रामबिलास शर्मा निराला

३ निराला गीतिका की भूमिका

परिमल म निराला के कुछ गीत प्रकाशित हुए थे और विद्वाना म उनका बड़ा आदर हुआ था । सगीत विशारदो न उनकी मगीतमयता की प्रशंसा का थी । इन गीता म किसी एक सुन्दर भाव को लेकर दो तीन या चार बंद उपस्थित किय जाते थे । बगला म रवीन्द्रनाथ इस प्रकार के सहस्रो गीता की रचना कर चुके थे । अतः रवीन्द्रनाथ के गीतो की छाया म पलने वाल निराला का ध्यान इस आर जाता स्वाभाविक था । गीतिका के गीता का मुख्य विषय रहस्यवाद है । इस सम्बन्ध म श्री नर दुलारे वाजपेयी का यह कथन महत्वपूर्ण है— 'रहस्यवाद तो इस युग की प्रमुख चिन्ताधारा है । पराश की रहस्यपूर्ण अनुभूति स उनके गीत रजित है । रहस्य की कलात्मक अभिव्यक्ति ही जो बहुविध चेतना आधुनिक हिन्दी म की गई हैं उनम निराला की कृतिया विनाप उ लखनीय है । कुछ कविया ने तो रहस्यपूर्ण कल्पना ही की है किन्तु निराला के काव्य का महत्त्व ही रहस्यवाद है । उनके अधिकांश पदा म मानवीय जीवन के चित्र हैं अवश्य किन्तु वे सबके सब रहस्यानुभूति म अनुरजित हैं ।' यद्यपि गीतिका म रहस्यवाद के अतिरिक्त दशभक्ति तथा प्रेम विषयक कविताएँ भी मगृहीत हैं ।

मन १९२८ म उनका नया का यसग्रह 'अनामिका' निकला । अनामिका के सम्बन्ध म डा० रामरतन भटनागर का कहना है कि अनामिका नाम के प्रति निराला का मोह होना स्वाभाविक था । वह उनका प्रथम काव्य-संग्रह था जो १९२३ म प्रकाशित हुआ । १/ वष बाद अपने एक अन्य संग्रह का नाम दूना हुआ कवि को इस पहले संग्रह का ध्यान आया और उसने इस संग्रह का नाम भी अनामिका रखा । यद्यपि इस संग्रह म पिछले संग्रह की कोई भी कविता नहीं है तथापि अनामिका (१९२३) और परिमल (१९२०) के बीच की कुछ रचनाएँ निराला ने इस संग्रह म प्रकाशित की हैं । इन रचनाओं म उनका प्रारम्भिक काल की प्रवृत्तिया पर विनाप प्रकाश पडता है । इनम पहली कविताएँ वे हैं जो रवीन्द्रनाथ या विवेकानन्द के काव्य के हिन्दी अनुवाद हैं । इस प्रकार की कविताएँ ज्येष्ठ, 'कहा देना है' 'शमा प्रापना रवीन्द्रनाथ की कविताओं का अनुवाद है और समा के प्रति नाच उस पर श्यामा गाता हूँ गीत में तुम्हा को मुनाने का विवेकानन्द की कविताओं का अनुवाद है ।

इन अनुवादों के सम्बन्ध म निराला ने लिखा है — अनुवाद का सत्य वही ममभूता है मौलिक ग्रन्थ का चमत्कार उसी दृष्टि म अपना गोभनाय स्ति

१ गीतिका की भूमिका, पृ० ११

२ रामरतन भटनागर कवि निराला एक अध्ययन, पृ० १६०

रखना है अनुवाद और मूल दाना की भाषाओं पर जिनका पूरा अधिकार हो। 'श्री का समझात हुए निराला ने एक और लक्ष्य म लिखा है— अनुवादक के लिए यह नियम नहीं कि मूल का अर्थ पुस्तक का अक्षरगत अनुवाद किया जाय परन्तु यह भी ठीक नहीं कि इन मूल का अर्थ आदि कुछ और हा और अनुवाद का कुछ और। अनुवादक का मूल के अर्थ पर ध्यान रखना चाहिए। उन्नी अर्थ को दूसरी भाषा में प्रस्तुत कर देना उसका कर्तव्य है। यदि मूल में कोई चमत्कार हा ता अनुवाद में भी चमत्कार दिखाना चाहिये। मूल की भाषा में यदि किसी एक मुहावर का प्रयोग हुआ है जिसकी आर स्वभावतः पाठक प्तिच जाय तो अनुवादक का भी उसी ढंग का करना चाहिए। सारांश यह है कि मूल की भाषा और भावा ने अनुवाद की भाषा और भावों का निश्चित न होने देना चाहिए।'

भारत के प्राचीन सांस्कृतिक पत्र का उदयगटन अनामिका की कुछ कविताओं में बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है। डॉ० बच्चनसिंह तो यह कहत है कि निराला भारतीय मस्त्रुति के अकेले चित्रकार है।' बच्चनसिंह यह भी कहते हैं कि जहा निराला भारतीय मस्त्रुति के प्रमी है जहा य प्राचीनता का प्रथम देन बाने हैं वही नवीन को मुक्त हृदय ने ग्रहण करने को प्रम्तुन रहते है। नवीनता का स्वागत करते हुए उदबोधन' में कहते हैं—

'आओ मे नव जीवन का तू अजन लगा पुनीत
बिलर भर जाने दे प्राचीन।'

अनामिका तक पहुँचत पहुँचत भाषा, ठट्ट, शली और विचार मत्र में कवि न प्रीन्ता प्राप्त कर ली थी। राम की 'गक्ति पूजा', नराज स्मृति' उनकी प्रौढतम रचनाओं के प्रतीक है। इसक अनिश्चित 'अनामिका की कुछ कविताओं में हम निराला की नई प्रगतिशील कविताओं का आभास मितना है जिसका सूत्रपान हिंदी क्षेत्र में मन ३२ स हा गया था। विमान की नई बहू की आर्षे 'खुला आसमान', ठट्ट, 'तोडनी पत्थर' और 'महज' इमी प्रकार की कविताएँ हैं। यद्यपि इनकी सम्पूर्ण प्रगतिवादी कविताओं की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। कारण इन कविताओं में अस्पष्टता और रोमांस के पुट उकर है। पत्थर-तोडने वाल का 'याम तन भर बधा जीवन, दखन वाल कवि का गतन प्रगतिवादी

१ निराला, भावुक

निराला, 'परिचयान,' भावुक

३ बच्चनसिंह आग्निशाम कवि निराला

४ वहा।

सामाजिक दृष्टि से यह कविता भारतीय समाज-व्यवस्था के एक अपरूप पक्ष का निदर्शन भा करती है। मास्का टायलागज शुद्ध विनात्मक रचना है। इसमें मास्काजावा साम्यवादियों के व्यवहार-चरित्रान की खिल्ली उड़ाई है।

बच्चनसिंह का कहना है कि उपानभ और व्यथ्य समाप्त हान के बाद कवि में विषादात्मक भाति आ जाती है। उनकी यह व्यवस्था बिल्कुल मनावगानिक प्रक्रिया के अनुकूल हुई है। अब इनके कथन में दुनिया के लिए मन्दस है, भगवान के प्रति आत्मनिवृत्त है और है सामाजिक राजनीतिक तथा साहित्यिक महापुरुषों के प्रगति अवन का प्रयास। ऐसा करने में रविवाबू की भाति इनका स्वरूप भी मदेश देने वाल नता का हा गया है। एमी परिस्थितिया में कवि राजनीतिक नृत्व के स्तर पर आ जाता है। कवि के जीवन का यह एक नूतन पक्ष है। अणिमा वसी की द्योतक है।^१ इस काव्य मग्रह में भक्तिप्रधान विषादात्मक तथा प्रशस्ति या वृत्त लखन का प्रयास है। अणिमा की अधिकांश कविताएँ पुराने ढंग की हैं परन्तु नए ढंग की व्यवहलना नहा हुई। वास्तव में अणिमा सविकाय है। गथावाद और प्रगतिवाद के दुराह पर गडा कवि अपने सार साहित्यिक जावन का लखा जाता ल रहा है और नए मदान में उतर रहा है। कवि अपने हृदय का भी नए पथ पर चलने का उदबाधन देता है—

गया अघेरा

देख हृदय हुआ है सबेरा
चलना है बहुत दूर है
नहीं वहा परी नहीं हूर
मूसा का जना, कुछ देने के लिए है
निर्जीवन जीव रहन तूर,
और कहीं डाल अपना डेरा—

गया अघेरा ।

इस पर विवचन करते हुए रामरतन भटनागर लिखत है कि हूरा और परियो के रूपना लक में उतर कर कवि जावन के उस बूढ़ की ओर आता है जो जन गया है जिसके पास बन्द में कुछ भा देने के लिए नहीं है कल्पना का आनन्द भी नहा है। वसी इमगान में वह अपना डेरा डालगा और यही नए मानव का नई सस्कृति की वीन बजायगा।

बला और नय पत्त (१९४३) भी इसा वष के प्रकाशन हैं। इनमें कवि

१ बच्चनसिंह आनिकारी कवि निराला पृ० १२४

२ रामरतन भटनागर कवि निराला एक अर्थन, पृ० ७६

न अपन का छायावादी परम्परा में शत प्रतिशत ताड़ लिया है। वह नए काव्य की रूपरेखा गान में तमय है—नव लोको नूतन दिशा, नवीन अभिव्यक्ति। कुकुरमुत्ता से ही कवि शलीक प्रति कुछ अधिक भुक् गया है और टी० एस० इलियट आदि अंग्रेजी कवियों का तरह शलीकत प्रयोग करने लगा है। 'बना और 'नए पत्त' में भी दा पृथक्-पृथक् शलिया—उठू और अंग्रेजी का हिन्दी में अपन अपन ढंग में उपस्थित करने का प्रयास किया गया है। इसी समय में भी निराला का मानसिक अवस्था में अस्वस्थता का लक्षण दिखाई पड़ने लगते थे। एमी स्थिति में बना' और 'नए पत्त' एमी कृतियाँ का सृष्टि एक अद्भुत घटना है। बलाक मम्बय में कवि लिखते हैं—बलाक नये गीतों का संग्रह है। प्रायः सभी तरह के गद्य गीत सम हैं भाषा सरल और मुहावरदार है। गद्य करने की आवश्यकता नहीं, दंगभक्ति के गीत भी हैं। बल्कर नहीं बात यह है कि अलग अलग बन्दा का गजलें भी हैं जिनमें फारसी का छन्दोशास्त्र का निर्वाह किया गया है।^१ कवि की दृष्टि चार बातों पर विगप रूप में जमी है—गीतों की विविधता भाषा की सरलता तथा मुहावरदानी फारसी कवना का प्रयोग और इस गद्य करने की आवश्यकता। निराला के 'नए पत्त' में गजला का भी समावेश हुआ है।

नये पत्त (मन १९४६) निराला का अंतिम संग्रह है। सास्त्रव में जमा कि रामरतन भटनागर कहते हैं निराला का काव्य-जीवन का उत्तराध के सब संग्रहों में से यह संग्रह सबसे महत्वपूर्ण है।^२ गंगाप्रसाद पाण्डेय का भी यही कहना है कि 'नये पत्त' में उनका बना, जिसमें काव्य प्रतिभा का गाय-भाष्य आलाचक की तथ्यपूर्ण मनापा का भी सम्बन्ध है, अपन चरम विकास का सूती है क्योंकि इसमें निराला का व्यंग्य का विगप विकास और प्रकाश सामने आता है।^३ बच्चनसिंह का कहना है कि 'नए पत्त' में निराला ने जहाँ मीठी चुटकियाँ ली हैं वे स्थले बहुत मुदर बन पड़े हैं।^४ नये पत्त का कविताशा का हम कई वर्गों में बाँट सकते हैं। कुछ कविताएँ एमी हैं जो नई में पुरानी अधिन हैं। उनमें हम 'अनामिका और परिमल' के कवि के लान हान हैं। दवी मरम्बनों निला जलि और सुगावतार परम्परा श्री रामकृष्ण देव के प्रति 'नये पत्त' की रचनाएँ हैं। इनमें हम निराला की अभिज्ञान कल्पना का प्रीत्यम रूप मितगा।

१ निराला, आवदन बला

२ रामरतन भटनागर कवि निराला एक घणन, पृ० १००

३ पाण्डेय महाशय निराला पृ० १४५

४ बच्चनसिंह व्यक्तित्व निराला पृ० १५

विवेकानन्द की कविताभा के दा अनुवाद 'चौबी जुलाई' के प्रति और 'काली माता' भी इसी श्रेणी में आते हैं ।

एक दूसरी श्रेणी कलागत मरत और स्फटिक शिला कविताभा का है जिसमें कवि ने अर्ध चेतना (सबकाशियस इगो) का मुक्त चलन दिया है—वह बढ़ता गया, बढ़ता गया भाव जस आय लिख दिया । रूसी का ये म मायाकावस्की की कविताएँ इसी श्रेणी में आती हैं । यूरोप में विम्बवाग्ने (इमजिस्ट स्कूल) तथा अतिययाथ (स्योरिलिस्ट) कविगण इस प्रकार के प्रयोग करते रहे हैं परन्तु हिन्दी में ये पहल प्रयोग हैं ।

परन्तु 'नय पत्त' में जो सबसे महत्वपूर्ण है वह है 'नयाश' । इस नयाश में कवि नई भाषा और नई शली में संप्राण व्यंग्य लिख रहा है । सारी ऐतिहासिक चेतना (हिस्टारिकल प्रोसेस) सारी राजनीतिक प्रगति का कलम का नाक पर रखकर वह समाज धर्म राष्ट्र वगैरे विषय और इनके कारणों पर छोटों उड़ाने चला है । चर्चा चला म ऐतिहासिक चेतना का प्रश्न हुआ है राजे ने अपना रखवाली की म मामता समाज की सारी व्यवस्था सार धर्म के न्यायनपन का प्रशिक्षित किया है । सुशखबरी में सिनेमा और नृत्यप्रमिया पर व्यंग्य किया है । 'नय पत्त' आधुनिक हिन्दी कविता में एक नितान्त अभिनव वस्तु है । पहली बार इतिहास चेतना सामाजिक और राजनीतिक व्यंग्य और जनता के लाकनायकत्व के सुन्दर सुन्दर चित्र हम मिलते हैं । अचना और आराधना कवि का आधुनिकतम गीत संग्रह है । उनकी विद्यपता गीतिका और अण्डिमा के समान है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक काव्य का शगव योवन और प्रोत् रूप निराला का लखनौ के समथ सहयोग में परिपूर्ण हुआ है, उनका प्रचंड प्रतिभा ने इसका स्वरूप का मजाया और उसका शृंगार किया है । छायावादी और प्रगतिवादी दोनों युगा के व बहुत ही बलिष्ठ कलाकार हैं क्योंकि दोनों युगा की मूल विद्यपनाएँ उनके काय में निहित हैं । छायावाद की प्रगतिवादी गतियाँ का उभार उनकी कविता में मजम अधिक पाया जाता है । अनुभव के साथ चिंतन का महत्व काव्य में सजस पहल निराला ने स्वीकार किया । आगत यह है जसा कि गंगाप्रसाद पाण्डेय कहते हैं कि दार्शनिक चेतना के साथ यथाथ अनुभूति का बाध निराला के काव्य की सबसे बड़ी विद्यपता है । भावात्मक स्थितियाँ के साथ स्वर-सामजस्य के द्वारा चित्रात्मकता का उन्घाटन उनकी अपनी निजी कला है ।^१ छायावाद में लेकर आधुनिक युग प्रवृत्तियाँ के पथ या विपथ में कवि ने

अपने विचार काव्य के माध्यम से प्रकट किया है। वैसे भी कवि युग से अलग नहीं है। शेक्सपीयर ने कवि को 'इट वर दी भिरर अपट्ट नेचर' कहा है। काडवेल ने भी अपनी पुस्तक में कवि की सामाजिक तथा व्यक्तिगत परिस्थितियों के अध्ययन के लिए कहा है जिससे कि कवि के समय का उचित विश्लेषण हो सके।^१ रेलफ फाक्स के ग्रंथ 'दी नावेल एण्ड दी प्युपिल' और एलिजबेथ मनरो की रचना 'दी नावेल एण्ड सोसाइटी' में इस प्रसंग पर नवीन प्रवाह डाला गया है। हडसन ने अपनी पुस्तक 'इंटरडक्शन टू दी स्वीट्ट ऑफ लिटरेचर' में टेल का उल्लेख करते हुए साहित्य की आलोचना में पारिपाश्विक परिस्थितियों की उप योगिता के सम्बन्ध में लिखा है—

I am to a certain extent following the lead of Taine who attempted to interpret literature in a vigorously scientific way by the application of his famous formula of the race, the milieu and the moment meaning by race the hereditary temperament and disposition of a people, by milieu, the totality of their surroundings, their climate physical environment political institutions social conditions and the like and by moment the spirit of the period, or of that particular stage of national development which has been reached at any given time^२

इस प्रकार हम देखते हैं कि कोई भी कवि या लेखक अपने वातावरण से अलग होकर नहीं जीता। वातावरण कवि के जीवन को, उसके व्यक्तित्व को परोप और अपरोप दोनों ही रूपों में कई प्रकार से प्रभावित करता रहता है। यह सच है जमकि गिवप्रसादसिंह कहते हैं कि कवि केवल वातावरण की उत्पत्ति नहीं है वह वातावरण सांस्कृतिक और सामाजिक दाना प्रकार के वातावरण का निर्माता है। किन्तु निर्माण की यह शक्ति, या उस बदलने की यह क्षमता भी कवि को उसी से प्राप्त होती है।^३ इस प्रकार महीराला की पारिपाश्विक परिस्थितियों तथा युगीन विचारधाराओं पर विवेचन कर लेना होगा क्योंकि वातावरण कवि के जीवन पर सबसे बड़ा प्रभाव डालता है और उस प्रभाव के बल पर हम अपने आलोच्य विषय पर विचार विमर्श कर पायेंगे।

१ इन्लेट—एक ३, भाग २

२ Caudwell *Illusion & Reality A study of the sources of poetry*

३ Hudson *Introduction to the study of literature* Page 9

४ गिवप्रसादसिंह विद्यापति

पारिपाश्विक परिस्थितिया तथा युगीन विचारधाराएँ

सन १९१५ में निराला का काव्यकाल प्रारम्भ होता है। डा० रामविलास शर्मा का कहना है कि निराला के काव्य तथा वातावरण का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है क्योंकि अपने वातावरण के प्रति उनकी भना सम्बन्ध जागृत रहती है।^१ इसी कारण प्रारम्भिक काल में बंगाल में रहते हुए बंगाल तथा बंगला काव्य के प्रति उनकी अपार उन्माद रही। उस समय बंगाल में तीन शक्तियाँ स्वतंत्र रूप से अपने-उभेप में व्यस्त थीं। प्रथम स्वदेशी आन्दोलन द्वितीय रामकृष्ण मिशन की धार्मिक क्रांति, तथा तृतीय रवीन्द्रनाथ का साहित्यिक नवनिर्माण। इन तीनों शक्तियों के पीछे जो मूलमन्त्र था वह प्राचीन प्रथा कुरीति को त्यागकर भारत के चिरतन वंश, सभ्यता तथा संस्कृति का जागरण करना था। इस सम्बन्ध में रवीन्द्रनाथ ने अपने एक प्रबन्ध में लिखा था—इस बार के नव वप में हम भारतवर्ष के चिर पुरातन में से ही नवीनता का ग्रहण करेंगे—सायाह में जब विश्राम की घण्टी बजेगी तब हम चूर हाकर नहीं गिरेंगे—नव आशीर्वाद के साथ उस अम्लान गौरवावित माला को लेकर हम अपने पुत्रों के ललाट में उसका बाधकर उन निभय चित्त तथा सरल हृदय से विजय पथ की ओर प्रेरित करेंगे। जय होगी भारतवर्ष की विजय हागी। जो भारत प्राचीन है जो प्रच्युत है जो बृहन् उदार जो निर्वाक है उसकी विजय हागी—हम लाग जो अविश्वासी हैं मिथ्या वक्त हैं आस्फलन करत हैं हम हर साल कहते हैं—

मिलि मिलि जाओव सागर लहरी समाना ।

उससे निस्तब्ध सनातन भारत की कोई क्षति नहीं होगी। भस्माच्छन्न मीनी भारत चारों ओर मृगधम विद्याकर बठा है—हम लोग जब समस्त चतुलता को लेकर विदा हगि तब वह शांतचित्त हमारे पीत्रों के लिए प्रतीक्षा करता रहगा। वह प्रतीक्षा व्यर्थ नहीं होगी, वे उन सयासी के सम्मुख करबद्ध हाकर आएंगे और कहेंगे—पितामह हम मत्र दीजिए ।

पितामह तब कहेंगे—‘ओम् इति ब्रह्म ।

वे कहेंगे—भूमय सुख नाल्पे सुपमस्ति ।

वे कहेंगे—अनन्द ब्रह्मणो विद्वान् न विभेति कदाचन ।^२

इसमें मैं स्वदेश प्रेम का मूल मन्त्र छिपा है जहाँ भूमा के लिए, समस्त भारत के लिए अपने सुख को त्यागना पड़ेगा। यही रामकृष्ण मिशन का सेवाधर्म सम

१ रामविलास शर्मा निराला, पृ० २६

२ रवीन्द्रनाथ ठाकुर सकलन

न्वित वेदान्त के ब्रह्म का रहस्य भी छिपा है और यही छिपा है रवीन्द्र के साहित्य का मूलमंत्र, विश्व के प्रमुख साहित्य का मूलमंत्र—‘आनन्दम्’ जो ब्रह्म अर्थात् सबवाद समन्वित है।

सूयकान्त त्रिपाठी निराला’ इसी वदन्त तथा रवीन्द्र के सबवाद अर्थात् रहस्यात्मक अनुभूति से प्रभावित हुए थे। डा० विश्वभरनाथ उपाध्याय ने अपनी पुस्तक में यही कहा है, ‘रवीन्द्र और वेदान्त निराला की प्रारम्भिक कला के प्रति स्यात् मान जा सकता है।’ डा० रामविलास शर्मा ने भी अपनी पुस्तक में लिखा है बसवाड़े की आल्हा-नौटकी संस्कृति के अलावा युवावस्था में उनका सम्पर्क बंगला की दा महान् सांस्कृतिक धाराओं से हुआ। एक तो श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नतूरव में बंगाल का नवीन सांस्कृतिक जागरण और दूसरा स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित श्री रामकृष्ण मिशन। इन दोनों का उन पर स्थायी प्रभाव पड़ा है। भारत इसमें सन्देह नहीं कि अपना साहित्यिक जीवन के प्रारम्भिकाल में उन्हें पढ़ने इन्हीं से प्रेरणा मिली। डा० बच्चनसिंह का भी यही कहना है प्रारम्भिक काल में, बंगला के अष्टकलाकार—रविव्याज, चण्डीदाम, विवेकानन्द और वष्णु कवियों का प्रभाव भी उन पर था। डा० रामरतन भटनागर भी यही कहते हैं कि प्रारम्भिक कविताओं में हम कवि की साधना के पहल चरण में पाते हैं। अभी उसका रूप सुस्पष्ट नहीं हो पाया है। वह रवीन्द्रनाथ और विवेकानन्द के वाक्य का छाह में आगे बढ़ रहा है। निराला जो न स्वयं वेदान्त का साहित्यिक वाचा विश्ववाद’ के बारे में अपना समयन प्रकट करते हुए लिखा है ‘भारत की देन है ‘विश्ववाद’ सब में एक मूढम चेतना, हर एक कदम में वह चेतना स्वरूप वह आत्मा वह विमु मौजूद है रवीन्द्र का विश्ववाद योरोप के मिदान्त के अनुकूल है, और उनके ब्रह्म समाजी होने के कारण उनका विश्ववाद उपनियदा से भी सम्बंध रखता है।’

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला जो हम भारतीय विश्ववाद में प्रगाण अड्डा रखते हैं जो सबप्रथम अग्रद्वारा प्रवर्तित, फिर क्रमशः उपनिषदा द्वारा विकसित और गुरु द्वारा प्रभावित होता हुआ आधुनिक काल में आकर रवीन्द्र के काव्य में चमका और निराला ने इसका रवात्र से ही ग्रहण

१ विश्वभरनाथ उपाध्याय महाकवि (निराला) काव्यकला और कृतित्व

२ रामविलास शर्मा निराला पृ० ५७

३ बच्चनसिंह अतिशय निराला पृ० ६

४ रामरतन भटनागर निराला एक अध्ययन, पृ० ८१

५ निराला प्रबन्ध-संग्रह

किया। बंगाल के स्वदेशी मन्दालन से भी वे प्रभावित हुए थे जिसका उदाहरण कवि के स्वदेश प्रेम की कविताओं में उपलब्ध है।

कविता लिखते हुए जिस दूसरी युगीन विचारधारा से वे प्रभावित हुए वह था छायावाद। यद्यपि छायावाद के मन्वन्ध में यह कहा जा सकता है कि वे जहाँ इससे प्रभावित हुए वहीं वे इसके निर्माता भी हैं क्योंकि कवि केवल वातावरण की उत्पत्ति नहीं है वह वातावरण—सांस्कृतिक और सामाजिक दोनों प्रकार के वातावरणों का—निर्माता भी है। छायावाद द्वितीय युग के स्थूल दृष्टिकोण के विरुद्ध सूक्ष्म का विशाह प्रतीत होता है। डा० नगेन्द्र इसका उपयोगिता के विरुद्ध भावुकता, नतिक रूढ़ियों के प्रति मानसिक स्वातन्त्र्य और काव्य के बन्धनों के प्रति स्वच्छन्द कल्पना का विद्रोह कहते हैं।^१ परन्तु हम काव्य-सघात के पीछे एक मौलिक द्वन्द्व भी छिपा हुआ दिखाई पड़ता है। वह द्वन्द्व है हृदयतत्त्व से प्राप्त भाव-मस्कार (concept) तथा मस्तिष्क से प्ररित विचार (idea) का द्वन्द्व। इस द्वन्द्व का मन् १८ वें भारत के नवजागरण (renaissance) ने मानव अनुभूतियों की व्यापकता द्वारा और कवियों के निजी जीवन की कुण्ठाओं ने उद्बुद्ध किया अथवा स्वप्नमय आत्मा और यथार्थमय विभीषिका से उदबुद्ध हम द्वन्द्व में भावुकता ने विजय पाई। इन भावुकता के रूप का ममभन के लिए एक उदाहरण ल सकते हैं—यथा नारा के स्थूल चित्रण द्वारा उसके सौन्दर्य की अभिव्यक्ति न कर एक गुलाब के समान नारी के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति करना उस युग की भावुकता का आशय बना। इस भाव-पद्धति को हम एंडीशन आफ स्ट्रेञ्ज नस टू यूटी कह सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि छायावाद एक विषय-प्रकार का भावात्मक दृष्टिकोण है। इस काव्य के दो अन्तर्निहित तत्त्व हैं—

(१) प्रत्येक छायावादी कवि के मन में अप्राप्य का प्राप्त न करने पर जा वदना का स्वरूप जग पड़ा है उसका अभिव्यक्ति इसकी एक प्रमुख विशेषता है।

(२) व्यक्तिस्ववाद (अहं के कारण अथवा काव्यगत अनुभूति के कारण) से प्ररित काव्य के अन्तरंग (intrinsic) सौन्दर्य का प्रकाशन इसकी दूसरी विशेषता है।

वस्तुतः यह सत्र बुद्ध होने पर भी छायावादी कवियों के द्वि-आत्मक चरित्र (split personality) के कारण स्वच्छन्द रहस्यवाद मानवतावाद राष्ट्रीयता, अध्यात्मवाद सर्वात्मवाद आदिवाद सभी विषयों का समाहार वे अपने काव्य में कर लेते हैं। इसी कारण प्रत्येक आलोचक की दृष्टि में छायावाद विभिन्न

१ डा० नगेन्द्र आधुनिक हिन्दी कविता का मुख्य प्रवृत्ति।

तत्त्वा का आवलन है। रामचन्द्र गुबल के मतानुसार 'पुराने ईसाई सत्ता के छायाभास (phantasm) तथा यूरोपीय काव्यग्रन्थ में प्रवर्तित आध्यात्मिक प्रतीकवाद (symbolism) के अनुकरण पर रची जान क कारण बंगाल में ऐसी कविताएँ आयावाद नहीं जान लगी थी। अतः हिन्दी में भी इस तरह की कविताओं का नाम 'छायावाद' चल पड़ा। महावीरप्रसाद द्विवेदी छायावाद का बंगाल की रहस्यवादी कविताओं का अनुकरण या छायावाद मानते थे।^१ प्रसाद के अनुसार जब बदन के आघात पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिन्दी में उम छायावाद नाम से अभिहित किया जाने लगा। श्री वाजपयी के अनुसार छायावाद वीमर्शिता की मानवीय प्रगति की प्रतिक्रिया का द्योतक है। नवीनकाव्य (छायावाद) में ममत्त मानव अनुभूतियों की व्यापकता पूरा स्थान पा सकी।^२ डॉ० जर्मा डम स्वच्छन्दवाद (romanticism) का पर्याय मानते हैं।^३

अतः हम यह निष्पन्न निकाल सकते हैं कि छायावाद एक विशेष प्रकार का भावात्मक दृष्टिकोण है बदन तथा अंतरंग मौन्द्य का प्रकाशन जिसके दो प्रमुख तत्व हैं परन्तु कवियों के दृष्टात्मक चरित्र के कारण हर प्रकार के विचारों तथा वादों का समावेश हो गया है। गली की दृष्टि में ये स्वच्छन्दतावादी बंगाली कवियों से प्रभावित हुए और विनयतया भाव की दृष्टि में बंगाली कवियों की भावुकता का ग्रहण किया।

निराला में छायावादी विचारधारा से प्रभावित हुए और साथ ही छायावाद में नवान तत्वों का समावेश किया। निराला जब सक्रिय हाकर काव्य की रचना कर रहे थे तब उन पर नाना प्रकार की विपत्तियाँ मड़रा रही थी परन्तु उनके अह न उह नीचा अपना नहीं मिखलाया था। मग्राम, पराजय निराला और बाह्य प्रारों की कड़ी चोट से पराजित नहीं हुए। गट के अनुसार—A great crisis uplifts a man little ones depress him—मभी वाघाएँ उनके लिए भविष्य का पुष्ट पाथय बन गई। इस कारण और छायावादी कवियों की तरह बदन' में व्याकुल के व्यक्तित्व नहीं बन गए बरन् विद्रोहात्मक बनकर विराट' की उपामना करने लगे। इस प्रकार छायावाद में एक नय तत्व का

१ रामचन्द्र गुबल हिन्दी साहित्य का इतिहास, आठवां संस्करण पृ० ६२४

२ विद्या मुकुति किर

३ प्रसाद काव्यकला तथा अन्य निबंध

४ डॉ० दुभासे काव्यशास्त्र आधुनिक साहित्य पृ० ३१६ ००

५ बदन हिन्दी काव्य पर आर्य प्रभाव

आकलन किया। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि वे आरम्भ से ही विद्रोही कवि के रूप में हिन्दी में दिखाई पड़े। गतानुगतिकता के प्रति तीव्र विद्रोह उनकी कविताओं में आदि से अन्त तक बना रहा। व्यक्तित्व की जसी निर्बाध अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में हुई है वैसे अन्य छायावादी कवियों में नहीं हुई। न ता उन्होंने भावों का कोमल करने का प्रयत्न किया है न उनकी समजस योजना के प्रति किसी प्रकार की आसक्ति दिखाई है। सबत्र व्यक्तित्व की अत्यन्त पर्य अभिव्यक्ति ही निराला की कविताओं का प्रधान आकर्षण है। फिर भी विरोधाभास यह है कि निराला में अपन व्यक्तित्व को सबसे अलग करके अभिव्यक्ति करने की चेतना सबसे कम है।^१ निराला जी का कहना है—साहित्य मेरे जीवन का उद्देश्य है जीने का नहीं, यह सच है कि मैं जीता भी अपन साहित्य में हूँ किन्तु वह मेरे जीने का साधन मात्र नहीं।^२ इसी कारण छायायुग की प्रगतिशील शक्तियों का उभार उनकी कविता में सबसे अधिक पाया जाता है। अनुभव के साथ चिंतन का महत्व काव्य में सबसे पहले निराला ने स्वीकार किया। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार यह युग मुख्यतः तीन बातों पर आधारित था—प्रथम कल्पना, द्वितीय चिंतन और तृतीय अनुभूति। इन तीनों श्रेणियों के विचारों के प्रस्तार विस्तार से आधुनिक काल की विषयी प्रधान कविता अनेकरूपा दीखती है।^३ वास्तव में काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ इन्हीं तानों मनोवेगों पर आधारित हैं और इन तीनों के समन्वयात्मक महत्व का निराला ने प्रतिपादित किया जो कि दूसरे छायावादी कवि नहीं कर सके। विशेष प्रकार की काव्य प्रक्रिया और नई शैली की नई टेक्नीक निराला का मौलिक देन है क्योंकि उनका मनन चिंतन अथवा दर्शन किसी अध्ययन का परिणाम नहीं बल्कि एक अनुभूतिजन्य विवेक है। गंगाप्रसाद पाण्डेय के अनुसार छायावादी मुक्त रचनाओं और गीतों में सौंदर्य शक्ति का समावेश सबसे प्रथम निराला ने ही किया यद्यपि यह बगला के प्रभाव के कारण ही सम्भव हो सका है। प्राचीन छन्द कवित्त को मनमानुसूल बनाकर जीवन के साथ साहित्य के विकास का शिलान्यास करने में वे सबसे आगे रहे हैं। गीतों में संगीत का समन्वय जिस जागरूकता और अभिनव चेतनता के साथ निराला ने किया है उस तक किसी दूसरे की पहुँच ही नहीं। उच्चतम छन्द और मुक्त छन्द, संगीतात्मकता के लिए

१ हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य पृ० ४६७

२ पाण्डेय महाप्राण निराला पृ० १०३

३ हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य, पृ० ४५७

४ पाण्डेय महाप्राण निराला पृ० १०८

छायावाद उनका चिर ऋणी रहगा। पूर छायावादी युग की स्निग्ध चादनी म निराला की प्रकाशकिरण की उष्णता और मौलिकता पूर्ण रूप से परिब्याप्त है।

जितनी शक्ति और मजगता के साथ उन्होंने छायावादी भावधारा का उपाय किया और छायावाद का अपना रग म रणा, उतनी ही सामध्य व माप प्रगतिवादी विचारधारा व प्रभाव का भी ग्रहण किया। परिवर्तित जीवन के फलस्वरूप उत्पन्न हुए नय-नय जीवन के मूल्या और माना का अपनात चलना ही ता मानवता के उत्तरोत्तर विकास का रहस्य है। परन्तु प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित व साम्यवादी न बनकर समाजसेवी बन। यहा तक कि 'कुकुरमुत्ता' म साम्यवादी पर कठोर व्यंग्य बसा है।

मुद्रकाल से निराला ने व्यंग्य का ही अधिन अपनाया है। गंगाप्रसाद पाण्डेय का कहना है कि मानवोचित नतिकता की रक्षा के लिए निराला न मोठे-तीके व्यंग्य बागा का प्रहार करके समाज म एक नई चेतना भरने की चेष्टा की है। स्वार्थी सडे मजाज व पडा और गालन की सोनुपता में पडे नताग्रा ने निराला के लिए चमा हा भला पुरा कहा जम लुई सोनहर्वे न फसा और वाट्टायर व लिए कहा था ता इसम कुछ विविधता नही।^१ पर इसमें भी मदह नही कि निराला न अपना ध्यम्या स जीण गीण पुरातन सस्कारो और अधविश्वामा का भम्मीभूत करके देग व जीवन में नवीन उमेप का जा मत्र फूला वह किमी और तरह सम्भव नही था।

दूसरे महायुद्ध व बाद म उनकी सामाजिक चतना म और भी तेजी धा गई है या व प्रारम्भ से ही बहुत मजग बसाकार रह हैं। इस युग की विषय और स्वाथ-भूण अनुभूतिया न उनकी कला को भा परिवर्तित किया है। मजाज की विषमता और नारकीयता से उत्तजित भावा का निराला न अपनी नई कवितामा म मजोकर युग व सामने उसके वास्तविक स्वरूप का सडा करन म पूरी मप-सना पाई ह। कला और नय पत की कविताओं म नतिकता नीति और सामाजिकता व गग का जा भडाफोड निराला न किया है वह उनकी निर्भिकता और काव्य शक्ति शाना का परिपुष्ट प्रमाण है। यह ठीक है कि नना, बाह्यण पुराहित, पूत्रीपति शायक और पदवीधर तथा गोपक मभी उनक व्यंग्यों के शिकार बने हैं किन्तु समाज तथा युग म प्रभावित होन के कारण उनका मध्य व्यक्ति न हाकर मत्र जगह समाज ही रहा है जैसाकि पाण्डेय तथा निराला के एक वार्मनाप म विन्दुन स्पष्ट हा जाता है—

नये पत्र पत्रकर मैंने (पाण्डेयजी) कहा— निराला जी ! इसमें तो आपने किसा का नहा छाडा, प्राय सभी प्रकार के व्यक्तिया पर आक्षेप किया है । बापू यदि तुम मुर्गी खाने, वाली कावता का रहस्य अब मुझे समझ म आ गया । निराला जी ने तुरन् उत्तर दिया—क्या कहें तुम भी ऐसी बात कहते हा, वहा व्यक्ति का प्रश्न नही, क्योंकि मरे सामन कविता लिखते समय व्यक्ति कभी नही आता, मैं ता पूरे समाज को देखता हू । व्यक्ति से मुझे लेना एक न दना दा । इसलिए मुर्गी वाली कविता मैंने अपने किसी संग्रह म नही दी । याँ रखा व्यक्तिगत व्यंग्य और आक्षेप करना भाड का काम है, मैं भाड नही कवि हू । यह ठीक है कि लालच म आकर भाड स्तुति भी करता है गाधी पर बहुत सी कविताए इसी तरह की लिखी भी गई हैं पर मैंने न स्तुति की न व्यंग्य लिखा । हा दश की राजनीतिक प्रगति से मुझे सतोप नही रहा और उमकी पाल का ढाल मैंने अवश्य बजाया है ।^१

इस प्रकार हम दलते है कि निराला अपनी पारिपाक्षिक परिस्थितियो तथा युगीन विचारधाराआ से प्रभावित हाकर उसके पक्ष या विपक्ष मे काव्य की रचना करते हैं । निराला न युग की उपक्षा नही की बरन उनका काव्य युग क साथ स्वर मिलाकर सारे युग का युग की सामाजिक अवस्था को आगे बढाता है । कलाकार के सम्मुख सारा युग उपस्थित है वस्तुतः उमकी अभिव्यक्ति म युग मत्स्य का निहित न रहना असम्भव है । निराला न अपने साहित्य म इस ज्वलन्त सत्य की कभी उपेक्षा नही की । इसी कारण जीवन क अत तक उहे अपन युग का प्रतिनिधित्व करने का श्रेय प्राप्त रहा ।

द्वितीय अध्याय

निराला के प्रतिपाद्य पर बगला-प्रभाव

कवि की काव्य रचना का उपादान भाषा है और भाषा का माध्यम स कवि अपने व्यक्तिगत विचारों को प्रकट करता है। विचार के अर्थ में हम दार्शनिक विचारों का ही लेते हैं जिसका सम्बन्ध मस्तिष्क से होता है। परन्तु प्रमुख कविवर्य अपने विचारों का भाव-रूपना के द्वारा इस प्रकार काव्य में समाहित कर लेते हैं कि वह किसी भी दृष्टि से दार्शनिक विवचन नहीं प्रतात हाना। क्योंकि काव्य का मूलतत्त्व तो रागात्मक या भावतत्त्व ही है और जो कवि अपने दार्शनिक विचारों को भावमय बनाकर प्रस्तुत करने में समर्थ होता है वही वास्तविक अर्थ में कवि या 'कविमनापी' है। यदि कवि ऐसा न करे तो प्रतिपाद्य बस एक अतिवृत्त घटना मात्र बनकर रह जाता है। रवीन्द्रनाथ का यही कहना है—

'जो वस्तु जसी है उसके उसी स्वरूप का उद्घाटन दार्शनिक का काय है। इसीलिए विज्ञान आविष्कार करता है। इतिवृत्त घटना का यथाविधि वर्णन करना विज्ञान का काय है इसका, घटना का विवरण कहा जा सकता है। किन्तु साहित्य का काय आविष्कार भी नहीं, घटना का विवरण भी नहीं साहित्य तो सृष्टि करता है और वह भी प्रकाशमयी सृष्टि करता है।

वास्तव में जहाँ दार्शनिक विचारों पर पूर्ण विराम पड़ जाता है वही से काव्य का सूत्रपात हाना है। दोनों में अयो-याथय सम्बन्ध है। परन्तु एक प्रच्छन्न है और प्रच्छन्न रूप में रहना ही उमका काय है। उम प्रच्छन्नता की अभिव्यक्ति, जड़ में प्रच्छन्न रूप में प्राणरस ग्रहण कर पुष्प का विभूषण ही काव्य है।

निराला का प्रतिपाद्य अर्थात् मूल विचार का भार है—दार्शनिक अद्वैतवाद जिसका हम रवीन्द्र का 'गंगा' में मोमा क बीच ही प्रथम का माय मिलन की धाराधना कहते हैं। इस अध्याय के अन्तर्गत निराला के इस दार्शनिक विचार पर बगला प्रभाव का विवचन करके और साथ ही यह भी दर्शाएँ कि किस प्रकार निराला ने भाव-रूपना के द्वारा इस दार्शनिक विचार को विराट् चित्र, नारी प्रेम तथा प्रकृति चित्रण के माध्यम से भावमय बनाकर काव्य में अनुस्यूत किया है।

निराला के विचारा पर अर्थात् उनके कवि मानस पर प्रत्यक्ष या पराक्ष रूप में बगला साहित्य का प्रभाव दिखाई पड़ता है। इस सम्बन्ध में श्री सुधाकर चट्टोपाध्याय कहते हैं—

निराला जी के कवि मानस सम्बन्ध आलाचना करके लक्ष्य करा जाय य दीर्घ दिन कलकाता-वास बगला साहित्य अध्ययन रामकृष्ण विवेकानन्द हते गुरु करे देविकाराणी उदयशकरर आक्षरण प्रभृतिर माभखान दिय तार बगममता स्निग्ध चित्रटि धरा पड ।^१

इस प्रकार वातावरण तथा साहित्य के युग्म प्रभाव स्वरूप निराला जी के कविमानस बगला विचारों से अत्यधिक प्रभावित हुआ। पारिपाश्विक परिस्थितियाँ तथा युगीन विचारधाराओं^२ पर विवेचन करते हुए हमें निराला के व्यक्तित्व पर बगीय वातावरण के प्रभाव का विवेचन किया था। अब उनके विचारों पर बगला साहित्य के प्रभाव की विवेचना करनी है। साधारणतया विचारों से प्रभावित हान के दो मूत्र होते हैं। प्रथम, व्यक्ति सशक्त विचारों से प्रभावित होता है और इसी कारण निराला रवीन्द्र के विचारों से इतने प्रभावित हुए क्योंकि विद्वानों के मतानुसार रवीन्द्र के विचार उपनिषद् के विचारों की भाँति सशक्त हैं। द्वितीयतः प्रतिभाशाली व्यक्ति तभी दूसरों के विचारों से प्रभावित तथा प्रेरणा ग्रहण करता है जब उसके मन में पहले से ही वे विचार आशय ग्रहण किये बैठे हैं। अतः निराला के प्रतिपाद्य पर बगला प्रभाव का विवेचन करते हुए सर्वप्रथम निराला के व्यक्तिक अनुभूतिजय प्रभाव पर विवेचन अधिकृत है कारण उसी के आधार पर ही प्रतिपाद्य पर पड़े प्रभाव विशेष के सूत्रों को हम पहचान सकेंगे तथा उस पर विचार विमर्श कर सकेंगे।

बगला में रहने के कारण निराला का मन भी प्रत्यक्ष या पराक्ष रूप में बगला काव्य की अपरिमित वस्तु तथा कला सौन्दर्य से प्रभावित होता रहा। व्यक्तिक अनुभूतियाँ बगला-काव्य से रस ग्रहण कर पौदे से वृक्ष का रूप धारण करती गईं। व्यक्तिक अनुभूतियाँ पर रवीन्द्र के विचारों का प्रभाव सबसे अधिक पड़ा। डा० नगेंद्र कहते हैं कि आरम्भ में छायावादी कवियों की चिन्ता-पद्धति पर रामकृष्ण परमहंस विवेकानन्द और उधर रवीन्द्रनाथ के दार्शनिक विचारों का सीधा प्रभाव पड़ा।^३ इस सम्बन्ध में डा० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल^४ का भी

१ सुधाकर चट्टोपाध्याय आधुनिक हिन्दी साहित्य के आगलार स्थान, प्रथम खण्ड पृ० ६६

२ दक्षिण अक्षेप निबन्ध, 'व्यक्तित्व तथा कृतित्व'

३ नगेंद्र आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ पृ० १२

४ खण्डेलवाल आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य, पृ० ३२१

बहना है कि गीताजलि क प्रकारानके साथ ही हिन्दी-कविता-क्षेत्र म भाव विचार तथा शली सम्प्रधी एक नवीन क्रांति उपस्थित हा गई। रवीन्द्र ने अपनी उक्त रचना क गीता म नवीन मानवता पम और भक्ति माधना का नवीनतम तथा प्राजल रूप प्रस्तुत किया। इसम उहान अपन अनुभूति-पथ मे पडन वाली मननगील और आनन्दमय आत्मा की गम्भीर तथा रहस्यपूर्ण भाकिया और भक्तिया सामने रखी, जिसक द्वारा उहान प्रकृति क प्रति नितान्त मौलिक अनुराग नवीन प्रतीक विधान, मानवीकरण की कला का सौन्दर्य, नूतन छंद विधान तथा नवीन कल्प नाभा क उपमाभा मे सम्बन्ध एक अभिनव काव्य-शैली का सुगंधकारी सौन्दर्य कला प्रमिया को भेंट की। अंग्रेजी स्वच्छन्दतावाद की रमणीय काव्य-शाला तो मोहक वस्तु थी ही किन्तु विषय (नवीन विचारधारा तथा कम, जान क भक्ति ममन्वित माधना सम्प्रधी भावनाएँ) और शली (पद-कालित्य नूतन छंद विधान, रमणीय कल्पना तथा स्तम्भ, चपन रगोन नापा आदि)—इन दोना ही दृष्टियों से गीताजलि की सामूहिक छवि छटा भारतीय भावना स पूरा कविया के हृदय के लिए अत्यधिक पुष्टिकर तथा रजनकारी प्रमाणित हुई। नवीन हिन्दी-कवियों क लिए यह रचना काव्य-कृतित्व का आदरा हो गई। यह बहुत स्वाभाविक ही था जसकि अंग्रेजी लखक ही बपून्सी कहते हैं कि प्रत्येक प्रगतिशील साहित्य के लिए यह आवश्यक है कि वह अपन म अयाय साहित्य क प्रभावा का भी शगी कृन करे। आ साहित्य ऐसा करन म समथ नहीं हाता वह क्रमशः हामा-मुखी बन जाता है।

दाशनिक प्रभाव

रवीन्द्र की गीताजलि क दार्शनिक पक्ष का प्रभाव निराला क विचारा पर सबसे अधिक पडा था। यद्यपि रवीन्द्रनाथ क जीवन-दान का मूत्रमूत्र 'सीमा क बोध ही अमाम क साथ मिलन की आराधना निराला क मन म प्राग्म्य मे ही म्गन उदभूत हुए थे। इस सम्बन्ध म निराला न अपन निबंध म लिखा है—

' हमानिए हम समाज तथा साहित्य म अपनी बहुत दिनों को भूनी हुई उम शक्ति को धामत्रिन करना चाहत हैं, आ अव्यक्त रूप से मयम व्यक्त अपनी ही धाम्य म विश्व को देवती हुई अपन ही भीतर उम शल हुए ह पानी की तरह महमा जान धाराभा म बहती हुई स्वतंत्र, किरणों की तरह सब पर पडती हुई मधुर, उज्ज्वल, अम्वान, मृत्यु की तरह नवीन जमदात्री, मवगाथाधा की तरह अमगिन प्रमार म फना हुई, प्रत्येक मूर्ति म चिरकमनीय।'

और एक स्थान पर निराला न यही कहा है—

यह ज्याति प्रवाह उपरूप है । जडो म यह चेतन सयाग ही गति है । प्रत्येक पद पर इमका अज्ञात स्पश जीव जग करता रहता है, अथवा दूसरा चरण उठ नहीं सकता, उस अपनी मत्ता का निश्चय नहीं हो सकता । वह वही निर्जीव प्रस्तर की तरह अचल है । उसम स्वत विचरण की गति नहीं पृथ्वी के साथ ही उसे अलक्ष्य क इगित से महाकाश की परिक्रमा करनी पडती है । जीव का हर मास म वह स्पश मिलता है ।^१

कविगुरु रवीन्द्रनाथ की सीमा के बीच ही असीम के साथ मिलन की आराधना के अनुरूप निराला क उपयुक्त भाव हैं । रवीन्द्र न इमको स्पष्ट करत हुए लिखा था—

‘क्षद्र का लेकर ही वृहत सीमा का लेकर ही असीम तथा प्रम का लेकर ही मुक्ति है । प्रम का आलाक मिलते ही आखो को पसार कर दखता ह कि सामा के बीच सीमा और नहीं है । प्रकृति का सौंदर्य केवल मात्र मेरे मन की मरीचिका नहीं उसक बीच म असीम का आनन्द ही प्रकाशमान है एव इसी लिए इस मौल्य क सामने हम अपने का भूल जाने है । मरी समस्त काव्य रचना का एक ही अध्याय है और उस अध्याय का नाम दिया जा सकता है ‘सीमा के बीच ही असीम क साथ मिलन की आराधना ।’

निराला क दार्शनिक विचारो पर रवीन्द्र क रूप और अरूप की मायतामा का प्रभाव स्पष्टतया पडा था इसका प्रमाण निराला क निबंध ‘काव्य म रूप और अरूप को पत्ने स और भी अधिक स्पष्ट हा जाता है—

रूप की मायक लघु विराट कल्पनाएँ ससार क सुदन्तम रगा स जिस तरह अंकित हा उसी तरह रूप तथा भावनाओ का अरूप म मायक अवसान भी आवश्यक है । कला की यही परिणति है और काय का सबम अच्छा निष्कप । इस तरह काय के भीतर से अपने जीवन क सुख दुःखमय चित्रो को प्रदर्शित करत हुए परिसमाप्ति पूरता म होगी । जैसे—

कभी उडते पत्तों क साथ
मुझे मिलते मेरे सुकुमार
बढाकर सहरों से लघु हाय
बुलाते हैं मुझको उस पार ।^२

१ निराला प्रबन्धसंग्रह पृ० १४४

२ रवीन्द्रनाथ जावनस्मृति

३ निराला प्रबन्धसंग्रह पृ० ११४

निराला के "रूप और अरूप" के इस दार्शनिक विचार को डा० रामरतन भटनागर ने 'मदत-वदातवादा' कहा है तथा डा० वच्चनमिह न भारतीय अद्वैतवाद कहा है। और एक आनाचक न एम जीव ब्रह्मपरक रहस्यवाद कहा है। परन्तु वास्तव में यह एक नवीन रहस्यवाद है जिसकी पटभूमिका अद्वैतवाद होना हुए भी आधारभूत गिला—रूढ़ि के प्रति विद्रोहस्वरूप मानव मन की चेतना का नवस्थापण है। डा० नगद्व न इसके सम्बन्ध में कहा है कि यहिरग जीवन में निमग्न कर जब कवि की चेतना न अनन्त में प्रवेश किया तो कुछ बौद्धिक जिना साए जीवन और मरण सम्बन्धी प्रकृति और पुष्प सम्बन्धी आत्मा और विश्वात्मा सम्बन्धी काव्य में स्वभावत ही भा गई। कुछ आध्यात्मिक धरा ता प्रत्येक भावुक के जीवन में आत ही हैं। अतएव छायावाद की रहस्योक्तिमा एक प्रकार में जिनासाए हैं जा छायावाद के उत्तराध में आध्यात्मिक दर्शन के द्वारा और भी पुष्ट हो गदे हैं। परन्तु वे धार्मिक साधना पर आश्रित नहीं हैं। उनका आधार कही भावना, कही दग्गन विमल और आरम्भ में कही-कही मन की छलना भी है।' इसको स्पष्ट समझन के लिए साधारणतया तीन तत्वा पर विवचन आवश्यक है। प्रथम रूढ़ि के विरुद्ध नवीन का जयघाप। दूसरा नवीन की स्थापना तथा तृतीय, जड के विराध में परिवर्तन की आकाशा और उसकी स्थापना के लिए विराट चित्रा का अकन और विराट चित्र के अकन के द्वारा स्वत ही अनन्त की जिनासा का काव्य में समावध। इस प्रकार धार्मिक साधना पर आश्रित न हाडे हुए भी आध्यात्मिक विचारा का आवलन मानव मन की चेतना में नवस्थापण के कारण संभव हो सका।

रूढ़ि का विरोध

प्रथमत छायावादी कविमा न जा आत्माभिष्यक्ति की आकाशा प्रकट की वह वस्तुत आत्म प्रमार की आकाशा थी। आत्मप्रमार की भावना में उद्बुद्ध हाकर उहनि जीवन के सभी क्षत्रों में सकीणता का विराध किया है। धन का उद्वाधन करत हुए निराला बहते हैं—

ताल ताल से रे सधियों के जकडे हृवण-अपाट
 खोल दे कर कर कठिन श्वाह
 धाये धम्पतर सयत चरखों से नख्य विराट
 करे दग्गन, पाये धामार ।

१ रामरतन भटनागर कवि निराला पर अध्ययन पृ० १०६

२ नगेन आधुनिक हिन्दी-कविताओं की मुख्य प्रकृतिमा, पृ० १३

कवि सदियों से जकड़े हुए हृदय कपाट का खोलकर नये विराट के आगमन की आकांक्षा कर रहा है। उसका हृदय हर तरह की सकीणता का विराधी है। उसकी इच्छा है कि पृथ्वी की जड़ता समाप्त हो जाय और परिवर्तन के द्वारा नवीनता का संचार हो सारे ससार में वह रम जाय। उसकी विराटता मपूर्ण धरती से भी मन्तुष्ट नहा है, वह अपनी बाहो में एक ही साथ सारी धरती और अनन्त आकाश बाध लेने का हीसला रखता है। बीसवीं सदी की नवीन विचार धारा ने किस प्रकार पुरानी सकीणता का दूर कर मानसिक भित्ति का विस्तार किया है, इस काव्य में रूप और अरूप नामक निबंध मस्पष्टत स्वीकार करत हुए निराला कहते हैं—ससार की भौतिक सम्पत्ता से सब देशों के गुण ज्ञान के कारण ससार भर के लोग को आत्मलाभ पहुंचा। फलस्वरूप कला में दश भाव की जा सकीणता थी, आदान प्रदान की सहृदयता ने उस ताड़ दिया। कला की सृष्टि व्यापक विचारा में हाने लगी और हर जाति की उत्तमता में प्रम सम्बंध जोड़कर लाग उससे अपनी जातीय कला को प्रभावित करने लग।¹ निराला जी के अनुसार बंगला साहित्य ने जा आधुनिक युग में इतनी अधिक उत्तति की वह इसी नये विचार और नई सृष्टि का ही परिणाम है। इसी व्यापक भावना के कारण रवीन्द्रनाथ के चित्रा में विराटता के दान हाने है। इस सम्बंध में रवीन्द्र-काव्य के महान आलोचक चारुचन्द्र बन्धोपाध्याय कहते हैं कि रवीन्द्रनाथ का चरितत्व पूरा जीवन्त है। जीवन का लक्षण है नित्य निरन्तर परिवर्तन। जा जड़धर्मी हो उसका परिवर्तन नहा होता है। इसीलिए फ्रांसीसी दार्शनिक ने जीवन की सज्ञा निरेश की है—परिवर्तन क्रमागत निरन्तर परिवर्तन ही जीवन है एव वही सत्य है। कवि की प्रतिभा निष्करीणी का जिस दिन स्वप्नभंग हुआ था उसके बाद से आज तक वह अकारण अवरण चलने के आवग में अपना समस्त सकीणता समस्त बद्धशुद्ध तथा सब प्रकार के प्राचीर की सीमा का उल्लघन कर अनन्त के अभिसार की आर अग्रसर हुई है।² निराला ने भी इसी भावना से प्रेरित होकर हिंदा में भी हृदय का निगन्त व्याप्त करने के लिए नवीन विचारधाराओं के आधार पर रूटि का विरोध कर परिवर्तन का जयघोष किया और इस परिवर्तन के प्रवर्तन के द्वारा नवीनता के आगमन की कामना की।

¹ निराला प्रबन्धपत्र पृ० १५४

चारुचन्द्र बन्धोपाध्याय रवि-रिम भाग २ पृ० ३१५

विराट चित्र

इस परिवर्तन की आकाशा तथा अनन्त के प्रति अभिप्राय न जहाँ रवीन्द्र का विराटत्व का चित्रा का अंकित करने के लिए उदबुद्ध किया है वहाँ निराला भी जसाकि उनका निबन्ध 'बाव्य म रूप और अरूप म पता चलता है इस विराटत्व के विचार म प्रभावित हुए । डॉ० रामबिनास शर्मा कहते हैं कि 'प्रपात के प्रति बबिता म श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के निम्नर क स्वप्नभग की मलक दिखाई देता है ।' स्वयं निराला जी भी जब तरग म पूछते हैं कि—

किस अनन्त का नीला अचल हिला हिलाकर

घातो हो मुम सको मडलाकर ।

शोर—'आठ तुफ़ारा किस विंगाल वल स्थल मे अवसान'

ता व नदी की तरग क माध्यम म अपने विंगाल हृदय का तरग का हा प्रकट करत ह । 'विराट' की आकाशा म अपनी म्निगत मीमासा का ताउन का कितना माहल या यह इमी म मालूम हाता है जमेकि नामवरसिंह कहते ह कि छाया का मुग न निम्नर अथवा प्रपात पर जितनी बबिताए लिखा उतना सायद ही किसी और मुग म लिखी गई हाणी । निम्नर छायावादी स्वच्छता का प्रतीक बन गया वह गिताछाया के गतिरोध का ताडना हुआ, उन वन अथकार का पार करके वग म अनन्त जलनिधि की ओर चल देता ह ।

अनन्त की जिज्ञासा

यही स निराला के आधानक विचारा का तीमरा तत्व हुआर सम्मुख उभर आता है । अर्थात् रवीन्द्र की तरह निराला न भी प्रारम्भिक-काल म म्निधा क विरट्ट नवीन तथा नद क विरट्ट परिवर्तन का जययाप किया था और पन स्वरूप अपने बाव्य म विराट्ट का अंकन किया । विराट्ट क अंकन के द्वारा स्वत हा अनन्त की जिज्ञासा रवीन्द्र की तरह उनका बाव्य म प्रतिफलित हाण लगी । इस मध्यम म डॉ० रामबिनास शर्मा कहते हैं^१ कि विप्लवी वादल की तरह निराला का प्रपात भी अथकार म खेलता है । आकाश के उदन यहाँ वन का अथकार है । कवि पूछता है कि यह बालक का विचार है या बृद्ध का साम्य व्यवहार जो वह रूप और विपाद म अनन्त नहीं देखता । बुद्धि और चेतना का विकास जट्ट प्रकृति स हो हुआ है । गतिहीन प्रपात पतरा स उत्पन्न हुआ है ।

१ रामबिनास शर्मा : निराला, पृ० ६५

२ रामबिनास शर्मा जिज्ञासा पृ० ६५

उसका पिता पवन है जो उसकी राह रोकते हैं । प्रपात उनसे टकराता है लेकिन जब उन् पहचान लेता है तो उसके होठा से भीठी मुस्कान फूट पडती है । वह प्रागे बढ चलता है परन्तु जड पत्थर के भीतर भी वह अपनी तान भर देता है—

बस अज्ञान की ओर इशारा करके चल देते हो,

भर जाते हो उसके अंतर मे तुम अपनी तान ।

निराला के 'तरंगो क प्रति' का भी यही भाव है—

उस असोम मे ले जाओ

मुझे न कुछ तुम दे जाओ ।

रवीन्द्र की प्रतिभा निम्हरिणी भी जसाकि हम ऊपर वह चुक हैं प्रकारण अवरण चलने क आवग म अपनी समस्त सकीणता, समस्त बढगुहा तथा सब प्रकार क प्राचीर की सीमा का उल्लंघन कर अनंत क अभिसार की आर अग्रसर हुई है । रवीन्द्रनाथ सबनो क्रमागत सीमा का अतिक्रम कर समस्त बाधा का उत्तीण कर सुदूर का प्यामा हाकर अग्रसर हाने क लिए आह्वान कर रहे हैं । ' इस प्रकार रवीन्द्र के अनंत ' से ही निराला के अज्ञान ने प्ररणा ग्रहण की है और का य म सीमा और असीम क भाव का स्थान दिया है— वस्तुत यह अनन्त अज्ञान या असीम ही ब्रह्म है जिसकी प्राप्ति कवि की अंतिम और चरम अभिलाषा है—

नव जीवन की प्रबल उमग,

जा रही मैं मिलने के लिए पारकर सीमा

प्रियतम असीम के संग । (धारा)

रवीन्द्र की नदी की धारा भी असीम" की तरह 'अकूल' से मिलन जा रही है—

घोरे देख सेइ स्रोत हपेछे मलर

तरणी कापिछे थरथर ।

तीरेर सचय तोर पडे याक तीरे

ताकास्ने फिरे !

सम्मुखेर वाली

निक तोरे टानि

१ आमांर रवीन्द्रनाथ आमांर सकलक क्रमागत मामा क अतिक्रम करिथा सकल बाधा उत्ताण हरया सुदूरेर पियार्मी हरया अग्रसर हरन आह्वान करितधन—प्रति निमंपर येतछ समय श्निदण थये धाका कुछ नय । वाच्यद्र बन्धोपाध्याय रविररिम, प० ३१६

२ निराला अपरा, पृ० १०६

महाछोते

पश्चात्तर कोलाहल होते

अतत आंगारे-अपून आतोते ।

रवीन्द्रनाथ की काव्य-भाषना के मूल में सीमा असीम की भिन्न-सीता के भाव निहित हैं। किन्तु शंकर व दाद्यनिक मत के अनुयायी कवि ईश्वर को "एम्बाल्यूट बोद्ग" अथवा निगुण सत्ता के रूप में नहीं देखता है। विश्व के नाना बचिष्य के बीच कवि ईश्वर की उपलब्धि करते हैं। जब कवि न अपने जीवन में विश्व प्रकृति के अपरूप सौन्दर्य की उपलब्धि को, तब उन्होंने "मम 'जीवन-देवता'" की सीता का प्रत्यक्ष देखा। किन्तु यह देवता निगुण निरुपाधि ब्रह्म नहीं है, इस रवीन्द्रनाथ ने बहुन-से स्थानों पर प्रकट किया है।^१ कवि का ईश्वर विश्व के नाना कर्मों में अपने का नाना रूप में प्रकट करता है। इन सम्बन्ध में मुधाकर चट्टापाध्याय कहते हैं कि—

'एह सीमा असीमर मिलन-सीला नरनारीर भिन्न विरह-सीतार रूपकर माममान परिष्यक्त हयछे । जीवन देवता' कसन भी प्रियतमा' कसनभी प्रियतम-तारइ सग चलछे जीवन जीवन लुकाचुरिर सत्ता । एह अनुभूति रवीन्द्रनाथ के मन्त्रामित हयछे छायावादी कविताय ।'^२

डा० रामरत्न भटनागर भी डा० मुधाकर चट्टापाध्याय के अनुरूप कहते हैं—

'निराला का विश्वास है कि दृष्ट सत्ता के पीछे एक अदृष्ट महान सत्ता है। इसी अदृष्ट सत्ता के प्रति कवि न प्राथमिक गीत लिखे हैं। सम्भव है जिसे निराला ने 'जीवन-सेवनहार' (देवा) कहा है वह रवीन्द्रनाथ का 'जीवन देवता हो'।'^३

इस तरह शंकर के अद्वैत ब्रह्म की तरह निराला अपने असीम ईश्वर की निगुण सत्ता के रूप में नहीं देखते हैं। विश्व के नाना बचिष्य के बीच कवि ईश्वर का दान करता है। विश्व प्रकृति के अपरूप सौन्दर्य को कवि न अपने जीवन में जब अनुभव किया, तब उन्होंने उममें असीम रूपी जीवन-देवता की

१ But as our religion can only have its significance in its phenomenal word comprehended by our human self this absolute conception of Brahman is outside the subject of my discussion

—Tagore the Religion of man

२ मुधाकर चट्टापाध्याय अपुनिक हिंदी साहित्ये कात्तार १९२७—खण्ड १, प० ७५

३ रामरत्न भटनागर कवि निराला के अन्वयन, पृ० १२७

लीला को प्रत्यक्ष देखा। कवि का असीम ईश्वर विश्व के नाना कर्मों में अपने को नाना रूपों में प्रकट करता है। इस प्रकार जीव ब्रह्म अथवा सीमा असीम की मिलन लीला को प्रकट करने के लिए कवि निराला कभी ता प्रकृति का सहारा लेते हैं तो कभी मानुषी प्रेम का क्योंकि उनका ब्रह्म जगत 'यापी है। यह रवीन्द्र का ही प्रभाव है।

इस सम्बन्ध में रवीन्द्रनाथ कहते हैं—

'जीवेर मध्ये अनन्तक अनुभव करारइ नाम भालवासा प्रकृतिर मध्ये अनुभव करार नाम मौदय सभोग। इस प्रकार निराला ने भी अनन्त" को काव्यमय रूप देने के लिए प्रकृति तथा नारी प्रेम को चुना है।

प्रकृति

श्रीमती महादेवी वर्मा ने छायावाद की आलोचना के प्रसंग में कहा है कि छायावादी कविगण बहिर्विश्व के आपात विच्छिन्न खण्डवस्तु समूह के मध्य में एक अखण्डता, एक निरवच्छिन्नता अनुभव करते हैं। रवीन्द्रनाथ के बीच में यह उपलब्धि बहुत ही छोटी उमर में पाई जाती है। इस सम्बन्ध में उन्होंने अपनी जीवन स्मृति में इसका विवरण दिया है।^१ रवीन्द्रनाथ की साधना में प्रकृति की परिदृश्यमान सीमा के बीच से अनजान असीम पुरुष की और चित्त की परिक्रमा ही व्यक्त है। इस प्रकार रवीन्द्र ने प्रकृति के साथ दो सम्बन्ध जोड़ दिए हैं—

१ प्रकृति को सजीव सत्ता के रूप में स्वीकार करना अर्थात् प्रकृति में मानवीयता का सम्बन्ध जोड़ देना।

२ प्रकृत में आध्यात्मिक रूप का सप्रपण अर्थात् "जो प्रकृति, जो वसन्त पुष्पभरणा प्रकृति अपने चञ्चल पेलव सौन्दर्य को लेकर रोमाण्टिक रवीन्द्र के पास प्रेम की वाणी बहने कर लाई, उस प्रकृति को ही ब्रह्म रवीन्द्रनाथ उपनिषद अनुरक्त मिस्टिक रवीन्द्रनाथ ने ईश्वर के लीलाकण्ड के रूप में ग्रहण किया है सुन्दरम की अभिव्यक्ति के रूप में ग्रहण किया है।

निराला ने रवीन्द्र के अनुरूप प्रकृति में सजीव सत्ता का अन्वय किया है और नाथ ही उसमें एक भावमय आध्यात्मिक तत्व का भी संयोजित किया है—

अम्बर पय से मन्थर

संध्या श्यामा

१ All things that seemed like vagrant waves were revealed to my mind in relation to a boundless sea

उतर रही पृथ्वी पर
 कोमल-यद मर ।
 म-द-म-द वही पवन
 झुल गईं झुही,—
धजलि कल विनत नवस
पदतल उपहार ।^१

श्री रवीन्द्र—

ऐ ये सध्या झुलिया फेलित तार
 सोनार धलकार ।
 ऐ ये आकागे सुगाय आकुल चुल
धजलि भरि धरित तारार फुल
 पुनाय ताहार मरित अधकार ।

दा० सुधारक चट्टोपाध्याय कहते हैं कि रवीन्द्र की तरह निराला का कवि जीवन भी प्रकृति के द्वारा दोलायमान है। केवल शब्द-नायक रूप रम्य तथा स्पष्ट नहीं, जिसको श्रेष्ठा नहीं जाता, उसको भी अन्तर्नि प्रकृति के बीच अनुभव किया है।^१ निराला का एक गीत है—

कल्पना के कानन को राभी ।
 घाघो, घाघो मृदु-पद मेरे
 मानस की कुसुमित बालो
 सिहर उठे पल्लव के दल नव अंग,
 बहे मुप्त परिमल की मृदुल तरंग,
 जागे जीवन की नव ज्योति अमद,
 हिले वसत-समोर-स्पर्श से
 बसन तुम्हारा धाभी ।^१

रवीन्द्र के प्रभाव स्वरूप निराला के उपयुक्त गीत में, प्रकृति में आध्यात्मिक भाव का आरोप कर, अपनी जीवन-मगिनी का आह्वान किया गया है, जिसमें कवि के मन में नव-जीवन की सजीविनी के भाव भर जायें। रवीन्द्र की एक कविता में बिल्कुल यही भाव व्यक्त है—

^१ निराला गीतिका

^२ चट्टोपाध्याय : आधुनिक हिन्दी का साहित्ये काँग्रेस प्रभाव प्रथम संस्करण, पृ० १०५

^३ निराला गीतिका

खुले दाम्रो द्वार,
नीलापाश करो अवारित,
कौतूहली पुष्पगण कक्षें मोर करक प्रवेश,
प्रथम रौद्रेर आलो
सखदेहे होक सचारित शिराय शिराय,
आमि बेंचे आधि तारि अमिन-दनेर घाणी
ममरित पल्लवे पल्लवे आमारे शुनिते दाघो ।

मोर इस जीवन सगिनो के रहस्यात्मक रूप का निराला ने रवीन्द्र की तरह प्रकृति में अवलोकन किया है—

कौन तुम शुभ्र किरण बसना ?
सीखा केवल हँसना, केवल हँसना—
शुभ्र किरण बसना ।

मदमय भर अग गध मृदु
बादल अलकावलि कु चित शतु,
तारक हार, चद्रमुख, मधुश्रुतु
सुकृत पु ज अशाना'—

धयवा—

गगन घन द्विदपी सुमन नक्षत्र ग्रह, नय ज्ञान
अतरे तुमि हास्यानना ज्योत्स्ना बसन परिधान

मोर रवीन्द्र—

अयि सधे
अन त आकाशतले यसि एकाकिनो
केश एलाइया
मृदु मृदु ओ की कथा कहिस आपन मने
गान गये गये
निखिलेर मुख पाने चेये

धयवा—

कि विचित्र सुरतान
भरपूर करि प्राण
के तुमि गाहिछ गान आकाश मण्डले ।

ज्योतिर प्रवाह माझे
विश्वविमोहिनी राजे
के तुमि लावण्यलता मूर्ति मधुरिमा ।

नारी प्रेम

इस प्रकार अरूप 'जीवन-सगिनी' का प्रियतमा बनाकर प्रेम का अभिप्रेक निराला ने रवीन्द्र की प्रेरणा स्वरूप किया है। इस सम्बन्ध में निराला ने स्वयं कहा है—

'साहित्य में इस अरूप की स्वतंत्र सत्ता को नारिया में स्थिर रूप दिया गया है। कलाविदा ने वही पुरुष और प्रकृति का सौहाय्य, दोनों के अपार प्रेम का निरन्तर योग देखा। आनन्द दोना के सभोग विलास में ही है वह और प्रच्छा जब एक ही आधार में है। यही बीज मंत्र है जिसको जप कर उन्होंने नारिया के अगणित अपार रूपा में सिद्धि प्राप्त की। य सिद्ध रूप परवर्ती काल के साहित्य की आत्मा में प्राणों का प्रवाह भरते गए हैं। बाह्य महाभूय की चेतना-स्पर्श से जगी हुई असह्य रूपसी अप्सराओं की तरह य साहित्य की पृथ्वी पर चपल चरण, नम्र, शिष्ट भिन्न भिन्न अनेक प्रकृति की श्री शृ गारमयी रूप के ऊपलोक में अपलक ताकती हुई लावण्य की ज्यामि से पुष्ट-यौवना मुवती, कुमारिणाए हृदय भूय के चेतन स्पर्श से जगकर उठी हुई हैं जो मूत बाह्य रूप राशि ही की तरह अमर हैं जिनमें बाह्य स्वतंत्रता की तरह अपार आन्तरिक स्वतंत्रता मिलती है और बाह्य के साथ अन्तर के साम्य का निरूपद्रव संदेश ।'

रवीन्द्र ने जैसे कि हम कह चुके हैं, नर-नारी के प्रेम को आध्यात्मिक साधना माना है। उनका 'जीवन देवता' कभी प्रियतम है तो कभी प्रियतमा और इस प्रकार प्रेम का व्याकुलता, विरह, मिलन के द्वारा नीमा की असीम के साथ मिलन-साधना साधित हुई है। डॉ० सुधाकर चट्टोपाध्याय के अनुसार रवीन्द्र के मानुषी प्रेम का रूपक 'ईश्वर एषणा' की, छायावाणी कविता की विषय वस्तु में, अभिव्यजना हुई है। परन्तु यह प्रेम सूफिया का मम प्रकृति (होमोसैक्सुअल) का प्रेम नहीं है बरन् यह प्रेम विषमजातीय (हीटरोसैक्सुअल) नरनारी का प्रेम है। रवीन्द्र ने इस प्रेम रूपक को वाल्ल, सन्, वण्णव कविया से ग्रहण किया है और निराला ने रवीन्द्र से, जो निराला-काव्य में निम्नलिखित दो रूपा में प्रकट हुआ है—

१ सीमा और असीम—प्रिया और प्रिय अथवा प्रिय एव प्रिया के प्रेम रूप

म प्रकट हुआ है ।

२ भक्त भगवान का प्रेम 'तुम और 'मैं' के रूप म प्रकट हुआ है । रवीन्द्र नाथ के प्रकृति वर्णन म अधिष्ठित नारी उनके जीवन की अधिष्ठात्री देवी म विवर्तित होती है और उसके प्रति प्रेम निवेदन ही उनके नारी प्रेम का मूल वस्तव्य है, जहा प्रेम मे प्राध्यात्मिक सीमा असीम का रंग चढा हुआ है—

नयन दुटि मेलिले कबे
परान हबे खुसि
ये पथ दिया चलिया याब
साबारे याब तुपि
रयेछ तुमि, एकया कबे
जीवन माभे सहज हबे—
आपनि कबे तामारि नाम
ध्वनिव सब फाजे ।

एव—

डक रे आवार माभिरे डाक
बोभा तोमार याक भेते याक
जीवन खानि उजाड कर
सँपे दे तार घरणमूले ।

एव—

अनेक देखे कलात्त एखन प्राण,
छेडेछि सब अकस्मातेर आणा ।
एखन केवल एकटि पेलेइ याचि
एसेछि ताइ घाटेर बाछाकाछि
एखन शुषु आकुल मने याचि
तोमार पाने खेपार तरी माथी

निराला के प्रेम निवेदन म भी यही भाव निहित हैं—

प्रथम पलक छुलते ही देखा
घरण चिह्न नूतन पथ रेखा

एक निमेष के लिए बेल तन
जीवन धन कर धुकी समपण ।

यह सुन्दरी ही निराला के काव्य म देवी रूप म परिवर्तित होती है

डा० सुधाकर चट्टोपाध्याय कहते हैं—

“रवीन्द्रनाथेर जीवन देवता वा जीवन-देवीर सगे ये लीलाखेलार व्यापार
रवीन्द्र-काव्य के विशिष्टतादियेछ सेइ लीला एखानेओ लक्ष्य करि । रवीन्द्रनाथ
बलछेन —

बखन धेके पय चेये आर काल गुणे
बसेइ आछि तोमार लागि, हाय प्रिय ।
टुटल यखन सकल श्रवगुण्ठन इ,
रइल यखन केवल मुखेर लुण्ठन इ
काल अकालेर बाछ बिचारे चुप प्रिय ।”^१

अर्थात्—रवीन्द्रनाथ के जीवन देवता अथवा जीवन-देवी के साथ लीला खेल के सम्बन्ध में जिस प्रकार रवीन्द्र काव्य ने विशिष्टता का अजन किया है उसी प्रकार की लीला निराला काव्य में भी परिलक्षित होती है । निराला जी ने कहा है—

“कब से मैं पय देख रही, प्रिय !
और न तुम्हारे रेख रही, प्रिय ।
तोड़ दिये जब सब श्रवगुण्ठन
रहा एक केवल मुख लुण्ठन
तब क्यों इतना विस्मय कुण्ठन ?
असमय समय न करो, खड़ी प्रिय ।”^२

अनन्त के साथ मिलन, विरह का वखन हमने आगे चलकर निराला के प्रतीक-वखन^३ में विस्तार से किया है । आध्यात्मिक प्रतीक ‘तुम और मैं पर रवीन्द्र प्रभाव का विवेचन भी वहाँ विस्तार से किया गया है । यहाँ रवीन्द्र का जीवन-देवता संबंधित उन दो तत्वों पर विवेचना अभीष्ट है जिससे जीवन-देवता रूपक की पूर्णता प्राप्त होती है और जिसका प्रभाव हम निराला की कविताओं में निसाई पड़ता है ।

प्रथम, जीवन-देवता कवि को तब जन्म जन्मान्तर क क्रीडानेत्र में सुख दुःख का भंग म मत्त हुए हैं । व ही कवि स कविता लिखवा ले रहे हैं, गाना गवा रहे हैं । वे यन्त्री हैं तो कवि यन्त्र ।

१ चट्टोपाध्याय आधुनिक हिन्दी साहित्ये बागवत स्थान, खण्ड १, पृ० १०१

२ निराला गातिका

३ देखिए अनेक निबंध, अध्याय बला-वध

द्वितीय, और फिर जब कवि इस पृथ्वी पर प्रत्यक्ष रूप में नहीं रहेंगे तब परोक्ष रूप में वे प्रत्येक खेल में ही हमारा साथ देंगे ।

प्रथम तत्त्व से सम्बन्धित जीवन-देवता के साथ लीला-खेल के चित्र निराला की कविता में भी पाये जाते हैं । निराला की जीवन-देवी यन्त्री है तो निराला केवल यन्त्र—

तुम्ही गाती हो अपना गान,
व्यय में पाता हूँ सम्मान ।^१

अथवा—

कसे गते हो ? मेरे प्राणों में
आते हो, जाते हो

लोग बाग बंटे ही रह गए,
अपने में अपना सब कह गए,
सही छोर उनके जो गह गए
बार बार उन्हें गहाते हो ।^१

रवीन्द्रनाथ की 'अतयामी' के साथ निराला की देवी यहाँ एक हो गई हैं—

आमि कि गो धीणा यत्र तोमार ?
धयाय पीडिया हृदयेर तार
मूच्छना भरे गीत भकार
ध्वनिद्य मम्ममाभे ।

'मोर प्रम दिये तोमार रागिणी
बहितेद्य कोन् अनादि बाहिनी,
बठिन आघाते भोगो मायाविनी
जागामो गम्भीर सुर ।

इसके अतिरिक्त रवीन्द्र के जीवन-देवता सम्बन्धी द्वितीय तत्त्व अर्थात् कवि के इस पृथ्वी पर न रहने पर भी उनकी 'अलक्ष्य नित्य स्थिति' के समान निराला ने भी जीवन-देवता के चित्र में उनकी चिर-तन नित्य स्थिति को ही प्रकट किया है । रवीन्द्रनाथ कहते हैं—

१ निराला गातिका

२ बेला

निराला के प्रतिपाद्य पर बगला का प्रभाव

यखन जमवे धुला तानपुराटार तारगुलाय
काटा लता उठवे घरेर द्वारगुलाय,
कुलेर बागान घन घासेर परवे सज्जा वनवासेर,
इयाप्रोला एसे घिरवे दिघिर धारगुलाय—
ग्रामाय तखन नाइ वा मने राखले
तारार पाने चेये चेये नाइ वा ग्रामाय डाकले ।

तखन के बले गो, सेइ प्रमाते नेइ ग्रामि ।
सकल सेलाय करवे सेला एइ—ग्रामि ।
नतुन नामे डाकवे मोरे बाघवे नतुन बाहुर डोरे,
ग्रामसब याब चिरदिनेर सेइ—ग्रामि ।
ग्रामाय तखन नाइ-वा मने राखले,
तारार पाने चेये चेये नाइ वा ग्रामाय डाकले

धीर निराला—

याद रखना, इतनी ही बात
नहीं चाहते, मत चाहो तुम
मेरे अर्घ्य, सुमन-दल नाथ !
मेरे बन में भ्रमण करोगे जब तुम,
अपना पय अम आप हरोगे जब तुम,
दक सूगी में अपने हृग-मुल
धिपा रहूँगी गात ।

सरिता के उस नीरव निजन तट पर
आओगे जब मद घरणा सुम चलकर
मेरे शून्य घाट के प्रति, बरणा कर
देखोगे नित प्रात ।

मेरे पय की हरित सतायें, वृष दल,
मेरे अम सिञ्चित देखोगे अचपल,
पलबहीन नयनों से सुमकी प्रतिपल
हेरोगे अमात ।

मैं न रहूँगी जब, सूना होगा जग,
समझोगे तब, इह मगल बसरव सब

या मेरे ही स्वर से सुन्दर जगमग,

चला गया सब साथ ।

निराला के जीवन-देवता रवीन्द्र के जीवन देवता के समान द्रव्यभाव सम्पन्न होते हुए भी अद्रव्य का दृष्टिभेद है और यह अद्रव्य जीवन देवता कभी-कभी विवेकानन्द के प्रभाव स्वरूप मातृरूप में भी प्रकट हुआ है। इस सम्बन्ध में डा० रामविलास शर्मा कहते हैं कि इष्टदेव की मातृ रूप में कल्पना को स्वामी विवेकानन्द ने ही लोकप्रिय बनाया था। 'देवि तुम्हें मैं क्या दूँ एक द्वार बस और नाच तू श्यामा' आदि रचनाओं में यह प्रभाव स्पष्ट है।

गीतिका का एक गीत—

मा, तू भारत की पृथ्वी पर
उतर रूपमय भाया तन घर,
देवघर नटघर पदा कर,

फला शक्ति नहीं—

फिर उनके मानस-शतबल पर
अपने चारु चरण युग रख कर
खिला जगत तू अपनी छवि में
दिव्य ज्योति हो लीन !

उपयुक्त उल्हाहरण में रवीन्द्र का—

विकशित विश्वयासनार

अरविद माभखाने पादपद्म रेखे तोमार

अति लघुमार ।

—भाव स्पष्टतया लक्षित होता है। जीवन देवता की इस सेवा भावना में विवेकानन्द के अद्रव्य रहस्यवाद की मूल भावना निहित है। स्वामी जो जन सेवा के माध्यम से ब्रह्म प्राप्ति का उपदेश देते हैं और वृहत्तर मानवतावाद को ही ईश्वर की श्रेष्ठ साधना मानते हैं। रवीन्द्र और निराला की ब्रह्म साधना भी वस्तुतः लोक सेवा ही है इसीलिए रवीन्द्रनाथ के जीवन देवता का पर्यवसान मानव की वृहत्तर भूमि में होता है जहाँ मानव सघटकर और जीवन में उच्चतर और कोई पदार्थ नहीं है। निराला ने भी, रवीन्द्र के इस भाव की तरह (जिस एबार फिराभा मोरे' वाली कविता में), अपने जीवन-देवता से, जगत् तथा जीवन के सुख-दुःख के भीतर आत्मनियोग के लिये, प्ररणा की माग की है—

जीवन की तरी खोल दे रे,
जग की उत्ताल तरंगों पर,
दे चढा पाल कलधौत धवल,
रे सबल उठा तट से लगर ।

इस प्रकार, निराला का दार्शनिक विचार अर्थात् सीमा असीम से सम्बन्धित तीसरा तथा अन्तिम तत्व हमारे सम्मुख उभर आता है। यह तत्व है मानवतावाद का।

मानवतावाद

सीमा और असीम के मूल में मानवतावाद का सूक्ष्म किन्तु दृढ़ तन्तु ग्रथित है क्योंकि जो असीम अथवा अनन्त को पाने का इच्छुक है उसके लिए कुछ भी तुच्छ नहीं, वरन् सभी अनन्त के रूप हैं। रवीन्द्र का दृढ़ तत्वाद अर्थात् कवि और जीवन दक्षता अद्भुत का ही दृष्टिभेद है इसीलिए रवीन्द्र के लिए सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म का ही लीलाक्षेत्र है—

सीमार माझे असीम तुमि बाजाओ आपन मुर ।

आमार मध्ये तोमार प्रवाग ताइ एत मधुर ।

सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म होने के कारण रवीन्द्र के लिए तुच्छाति-तुच्छ वस्तु का भी महत्त्व है। जगत् में छोटा या तुच्छ नाम की कोई वस्तु नहीं है। सीमा को लेकर ही असीम है। सीमा को छोड़ देने पर असीम गूँथता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इसीलिए सम्पूर्ण मानवता से कवि को प्रेम है। कवि की प्रतिभा निरुत्थरणी जिस दिन समस्त बाधा का उल्लघन कर अनन्त'क अभिसार में अग्रसर हुई थी उस दिन उसने सम्पूर्ण मानव-गमाज को भी अपने साथ चलने का आह्वान किया था। पथ के नगे में कवि आग ही बढ़ जाता है—

पथेर नेगा आमाय लेगे छिन

पथ आमारे बिपे छिल डाक ।

निराला का 'सीमा असीम' का दार्शनिक तत्व भी इस मानवतावादी गति धर्म से प्रभावित है। कवि प्रत्येक मानव को पुकार पुकार कर जड़ता से मुक्त होकर जगत् के लिए आह्वान कर रहा है—

कय से मैं रही पुकार—

आगे फिर एक धार

उगे अरुणाचन में रवि

घाई भारती रति कवि-कण्ठ में

क्षण-क्षण में परिवर्तित

होते रहे प्रकृति पट,

गया दिन, आई रात,
 छाई रात, खुला दिन
 ऐसे ही सतार के बीत बिन पक्ष, मास
 वष कितने ही हज़ार—
 जागो फिर एक बार ।^१

रवीन्द्र ने 'कुडिर भितर कादिछे गध अघ हय' व समान निराला को भी समय बीत जाने का डर है इसलिए वह सम्पूर्ण बाधा को ताड़कर फूल के विकास की माग करता है—

दूढ़े सकल रघ
 कलिके, विशा जान गत हो रहे गध ।^१

विकास के लिए यह आकांक्षा निराला ने रवीन्द्रनाथ से प्राप्त की है। रवीन्द्रनाथ ने मानव जीवन के विकास की इस स्थिति को गति में खोजा है। गति में ही मानव जीवन का सत्य निहित है—यही रवीन्द्रनाथ की अनुभूति थी। परंतु इस अनुभूति की कल्पना आधुनिक युग में सबसे प्रथम फ्रांस के प्रकांड दार्शनिक वेगर्स ने की थी इसलिए उनके दर्शन का गतिवाद नाम से अभिहित किया जाता है। आधुनिक दार्शनिक-बनानिक कहते हैं कि निरवच्छिन्न स्थान व काल नाम की कोई वस्तु इस पृथ्वी पर नहीं है, केवल वस्तु की गति व द्वारा ही हमारा मन में स्थान तथा काल का ज्ञान समाहित होता है।^१ अतएव एकमात्र गति ही सत्य है। रवीन्द्रनाथ का सम्पूर्ण बलाका काव्य इस गतिवाद का ही प्रचार करता है। किन्तु रवीन्द्रनाथ वेगर्स की तरह केवल उद्देश्यहीन गति में विश्वास नहीं करते हैं। वेगर्स ने जीवन में केवलमात्र गति का ही अवलोकन किया था परंतु उन्होंने असीम के साथ जीवन व योग-सूत्र का अनुभव नहीं किया। रवीन्द्रनाथ की गति अन्त के साथ मिलनेच्छा की गति है क्योंकि अन्त व साथ सीमा के मिलने पर ही अन्त का अनुभव हो सकता है। भारत के प्राचीन युग में भी गति के द्वारा आनन्द की प्राप्ति का भाव ध्वनित हुआ था—

चरण व मधु विक्षति—चरण स्वादुम उडुम्बरम् ।
 सूर्यस्य पश्य श्रेमाण यो न तद्रयते चरण ॥
 —चरवेति, चरवेति—

१ निराला अक्षर

२ निराला गीतिका

३ द्रष्टव्य—The new cosmogony journal of philosophical studies July 1929

अर्थात्, जो चलता है वह मधु को प्राप्त कर सकता है, जो चलता है वह अमृतमय स्वादु फल का लाभ करता है। यह दसो मूय की दीप्ति महिमा—वह जा चलते चलते कभी तद्वाविष्ट नहीं हाता। अतएव, चला, चला। रबीन्द्र की गति में इस आनन्द प्राप्ति का भाव निहित है—

जीवनेर खरस्रोते भासिछे सदाइ
भुवनेर घाटे घाटे ।

आकाशेर प्रति तारे डाकिछे ताहारे ।
तार निमंत्रण लोके-लोके
नव-नव पूर्वाचले आलोके आलोके ।

निराला का भी सीमा असीम की मिलन साधना का अन्तिम लक्ष्य आनन्द का प्राप्ति है। असीम से मिलने के लिए कवि (सीमा) अग्रसर हाता है। वह गति में विश्वास करता है और उसका लक्ष्य आनन्द प्राप्ति है—

तुमसे चल तुम मे ही पहुँचे
जितने रस आनन्द रहे ।^१

निराला तरगा से प्रार्थना करता है कि उस भी तरंगों की गति प्राप्त हा जिसमें कि वह असीम से मिलकर चिरानन्द का प्राप्त कर सक—

उस असीम मे ले आओ ।
मुझे न कुछ तुम दे जाओ ॥^१

परन्तु रबीन्द्र की तरह निराला भी सीमा असीम की मिलन-साधना से आनन्द-प्राप्ति का उपरान्त मोक्ष की कामना नहीं करत। बल्कि कविया की तरह इन दो कवियों की आत्मा आकाशा बकुण्ड के लिए सञ्चित नहीं रहती बरन् हिगल के आदर्श-विचार (Ideal Realism) की तरह इस ससार में ही वे आनन्द का अनुभव सम्पूर्ण मानवता के साथ करना चाहत हैं। दोनों कवि हा इस जीवन से, इस पृथ्वी के मनुष्यों से प्रेम करत हैं। रवीन्द्र कहत हैं—

कवि दिले आपन बीणार तारे भकार,
गान उठल आशाने —
जय हक मानुषेर, ऐ नव जातकर, रे चिर जीवितेर ।

१ निराला असा

२ निराला परिमल

सकले जानु पेटे बसल राजा एव भिक्षु
 साधु एव पापी, ज्ञानी एव मूढ—
 उच्चस्वरे घोषणा करले, जय होक मानुषेर,
 ओइ नवजातकेर, ऐ चिरिजोवित्तेर ।

अथवा

मरित चाहि ना ग्रामि सुन्दर भुवने,
 मानवेर माझे ग्रामि वाचिबारे चाइ ।

निराला व काव्य मे मानव की इस प्रकार की प्रशस्ति बहुत से स्थानो मे पायी जाती है—

“तुम हो महान
 तुम सदा हो महान्
 है नश्वर यह क्षीन भाव,
 कायरता, कामपरता,
 ग्रह्य हो तुम,
 पदरज नर भी है नहीं
 पूरा यह विश्वभार”^१

अथवा

“विश्व का नियम निश्चल,
 जो जसा, उसको वसा फल,
 देती यह प्रकृति स्वय सदया,
 सोचने को न रहा कछ नया,
 सौन्दर्य गीत, बहु वण, गद्य
 माया, भावों के छन्द-बन्ध,
 और भी उच्चतर जो विज्ञान,
 प्राकृतिक दान वे, सप्रयास
 या अनायास भातें हैं, सब
 सब मे श्रेष्ठ, धाय, मानव ।”^२

मानव का रबीन्द्र तथा निराला दोनो ही असाधारण असीम रहस्यमान साचत हैं इसी कारण मानव के दुःख से दोना कवि ही दुःखी होकर कभी-कभी

१ निराला परिमल

२ निराला अनामिका

रहस्य-श्लोक को छोड़कर अभाव-लाव का वणन करने को उद्यत हो जाते हैं। इस सम्बन्ध में डा० सुधाकर चट्टोपाध्याय कहते हैं कि निराला ने केवल रहस्यवाद के क्षेत्र में बगला के भाव-पक्ष का अवलम्बन नहीं लिया वरन् अभाव की कविता में भी बगला के पक्ष के अवलम्बन का इंगित हम प्राप्त हो जाता है।^१ रवीन्द्रनाथ जिस प्रकार भाव-श्लोक से कभी कभी अभाव-लाव में बूढ़ पड़ते हैं कहते हैं—

झोरा काज करे

देग देगान्तरे,

अग बग कलिंगेर समुद्र-नदीर घाटे घाटे,

पजावे सोम्बाइ गुजराटे।

इसी प्रकार निराला ने भी कहा है—

वह तोड़ती पत्थर,

देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर—

वह तोड़ती पत्थर।^२

अभाव-लाव से दुःखी कवि प्रत्येक मानव के लिए सुख की प्राप्ति करता है और उनके साथ हम जीवन का सुखमय बनाना ही मोक्ष का पर्याय समझना है। रवीन्द्र की "एकटि स्वप्न मुग्ध-सजल नयन। एकटि पद्म हृदय-वृन्त शयने" की तरह निराला भी जीवन में आनन्द की कायना करते हैं—

एक स्वप्न तन जग-नयनों में

खिसा रही मुझ द्रुम अयनों में।^३

मानव का अतीत का रूप समझने के लिए जहाँ रवीन्द्र ने 'पुरातन भूतय', 'राजा या रानी नाटक का नौकर शकर', 'खोवाबाबू प्रत्यावर्तन' का नौकर राइचरण पश्चिम की मजदूर लटकी, 'दुई बिधा जमि' का उपन, एवम्प्रा अतिदीना भिक्षारिनी जस लोगा का बगान किया है वैसे ही निराला ने अपने काव्य में मजदूर लटकी, विधवा ग्यणी, किसान आदि का वणन किया है। रवीन्द्र के अनिश्चित यन्त्र निराला पर स्वामी विवेकानन्द का मानवतावादी दान का प्रभाव भी है। डा० रामविलास गर्मा कहते हैं कि इन कविताओं की विगणना यह है कि भावुकता के आधुनों के अर्थन जीवन की दाखल व्यापकता का गहरे रंग में अंकित किया गया है। और माना रूप में इष्ट दधी आनन्द से अधिक गति

१ चट्टोपाध्याय आधुनिक हिन्दी साहित्ये काँग्रेस भवन, प्रथम खण्ड पृ० १००

२ निराला अनामिका। ३ निराला : गीतिका।

सकले जानु पेटे बसल राजा एव भिक्षु
 साधु एव पापी ज्ञानी एव मूढ़—
 उच्चस्वरे घोषणा करते, जय होक मानुषेर,
 ओइ नवजातकेर, ऐ चिरिजीवितर ।

अथवा

भरित चाहि ना आमि सुन्दर भुवने,
 मानवेर माभे आमि बाँचिबारे चाइ ।

निराला के काव्य में मानव की इस प्रकार की प्रशस्ति बहुत से स्थानों में पायी जाती है—

'तुम हो महान
 तूम सवा हो महान
 है नश्वर यह दीन नाव,
 कायरता, कामपरता,
 अहं हो तुम,
 पदरज मर भी है नहीं
 पूरा यह विश्वमार"—^१

अथवा

“विश्व का नियम निश्चल,
 जो जसा, उसको वसा फल,
 देती यह प्रकृति स्वयं सदया,
 सोचने की न रहा कछ नया,
 सौंदर्य गीत, बहु वण, गद्य
 भाषा, भावों के छंद-बध,
 और भी उच्चतर जो विलास,
 प्राकृतिक दान वे, सप्रयास
 या अनायास आते हैं, सब
 सब में श्रेष्ठ, धन्य, मान्य ।”^२

मानव का रवीन्द्र तथा निराला दोनों ही असाधारण असीम रहस्यमान
 सोचते हैं इसी कारण मानव के दुःख से दोनों कवि ही दुःखी होकर कभी कभी

१ निराला परिमल

२ निराला अनामिका

रहस्य-श्लोक को छोड़कर अभाव-लाव का दण्डन करने की उद्यत हो जाते हैं। इस सम्बन्ध में डा० सुधाकर चट्टोपाध्याय कहते हैं कि निराला ने केवल रहस्यवाद के क्षेत्र में बगला के भाद-पत्र का अवलम्बन नहीं लिया वरन् अभाव की कविता में भी बगला के पद्य के अवलम्बन का इंगित हम प्राप्त हो जाता है।^१ रवीन्द्रनाथ जिस प्रकार भाव-श्लोक से कभी कभी अभाव लाव में कूद पड़ते हैं, कहते हैं—

घोरा काज फरे

देग देगान्तरे,

घग घग कालिगेर समुद्र-नदीर घाटे घाटे,

पजावे बोम्बाइ गुजराटे ।

इसी प्रकार निराला ने भी कहा है—

वह तोड़ती पत्थर,

देखा उस घेने इलाहाबाद के पथ पर—

वह तोड़ती पत्थर ।^२

अभाव लाव से दुःखी कवि प्रत्येक मानव के लिए सुख की प्राप्ति करता है और उनका साथ ही जीवन की सुलभता बनाना ही भाव का पर्याय समझना है। रवीन्द्र की एकटि स्वप्न मुग्ध मजल नयन। एकटि पद्म हृदय-वृत्त गयन की तरह निराला भी जीवन में आनन्द का कामना करते हैं—

एक स्वप्न तन जग-नयनों में

खिला रहा सुख हम अयनों में ।^३

मानव का असीम का रूप समझने के लिए जहाँ रवीन्द्र ने 'पुरातन श्रृंग', 'राजा घा रानी' नाटक का नौकर गकर, 'खोकावावू प्रत्यावतन' का शौकर राइचरण, पश्चिम की मजदूर लहवी, 'दुह बिषा जमि' का उपन, 'एकदन्ता अनिनीना भित्तिरिनी' जस लोगों का वणन किया है वस ही निराला ने अभाव लाव में मजदूर लहवी, बिषवा रमणी विमान घाति का वणन किया है। रवीन्द्र का अनिरिक्त मही निराला पर स्वामी विववानन्द का मानवतावादी भाव का प्रभाव भी है। डा० रामविलास गर्मा कहते हैं कि इन कवियों का अभाव— यह है कि भावुकता के क्षणों में वे अपने जीवन की दारुणता को व्यक्त करने में अक्षम होते हैं। और माता रूप में अक्षम होते हैं।

१. चट्टोपाध्याय आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ ३३३, ३३४, ३३५, ३३६

२. निराला अनामिका । ३. निराला अनामिका ।

की देवी है। वह कवि को पलायनवादी सत्सार म नहीं ले जाती, न सुनहली किरणों स उसक आस जस आँसू पाछ लेती है। वह उसे दुःखभार सहन करने के लिए प्रेरणा देती है और माना कहती है कि यह भार वहन करना ही उसकी श्रेष्ठ उपासना है।^१

भक्ति

यह सवा भक्ति की भावना निराला ने रामकृष्ण परमहंस तथा विवकानन्द स ग्रहण की थी जिमक उदाहरण निराला की कविता सवा प्रारम्भ, स्वामी प्रमानन्द जी महाराज', 'कलाश म शरल', 'युगावतार परमहंस श्री रामकृष्ण देव क प्रति म प्राप्त हो जात ह। दिनकर के अनुसार विवकानन्द ने अपनी आध्यात्मिक अनुभूति का व्यावहारिक रूप देकर सवा धम का प्रतिपादन किया है। दिनकर जी इम कमठ वदान्तवाद कहते है।^२ पंचवटी प्रसंग म जो मा रूप म भक्ति का प्रसा प्राप्त होता है वह भी राम की सेवा भक्ति म शक्ति की उपासना का प्रभाव है। इसक बारे म डा० रामरतन भटनागर कहते है कि इस कविता (पंचवटी प्रसंग) म जो माता (नीता) क प्रति भक्तिवाद मिलता है वह स्पष्ट ही बंगाल प्रदेश ने उधार लिया गया है।^३ राम की शक्ति-पूजा म भी बंगाल की शक्ति-पूजा का प्रभाव परिलभित होता है।

विवकानन्द की सवा भक्ति तथा रवीन्द्रनाथ की भक्ति मे तत्त्वतः कोई भेद नहीं है। विवकानन्द अद्वैतब्रह्म का प्राप्त करने क लिए मानव की सवा तथा भक्ति का माग अपनाने को कहते है। रवीन्द्र भी असीम से मिलन का इच्छा म इस पृथ्वी पर रहना चाहत हैं और मानव प्रेम को भक्ति रूप म अपनाना चाहत हैं। उह मोक्ष की इच्छा नहीं, मानवीय भक्ति की कामना ही उनक जीवन की सबसे बड़ी कामना है क्योंकि वही सीमा का असीम के साथ मिलन होना है—

यथाय धाके सवार अधम दीनेर हत दीन,
सइलाने ये चरण तोमार बाजे
सवार पिछे सवार निचे
सब हारादेर माभे ।

१ रामविलास शर्मा निराला पृ० ६५ ६६

२ दिनकर सन्मूर्ति क चार अध्याय पृ० ४६३

३ रामरतन भटनागर कवि निराला एक अध्ययन, पृ० ६६

इसीलिए—

मरिते चाहि ना ग्रामि सुंदर भुवने,
मानवेर माभ ग्रामि वाचिवारे चाइ ।

अत —

वराग्यसाधने मुक्ति से आमार नय ॥

मोह मोर मुक्ति रूपे उठिबे ज्वलिया,
प्रेम मोर मक्ति रूप रहिबे फलिया ॥

निराला की भक्ति भावना में विवकानन्द तथा रवीन्द्रनाथ दास का ही युग प्रभाव है और इसी कारण निराला मातृरूप जावनदबता की भक्ति की ही कामना करते हैं—

मुक्ति नहीं चाहता मैं भक्ति रहे, काफी है
मुझकर को कला में अंग यदि बन कर रहूँ
तो अधिक आनन्द ह
अथवा यदि होकर चकोर, कुमुद नगाण
पीना रहूँ सुधा इतु सिन्धु से बरमती हुई
तो मुझ मुझे अधिक हागा ?
इसमें सदेह नहीं आनन्द बन जाना हेय ह
श्रेयस्कर आनन्द पाना ह^१

और इस आध्यात्मिक भक्ति में प्रेम मधुर आत्म निवेदन का एक प्रिय मित्तन का आनन्द निहित है । यह आनन्द ही निराला का लक्ष्य था । यह आनन्द ही एक नवीन रहस्यवाद है जिसका पटभूमिका अद्वैतवाद हीन हुए भी आधारभूत गिला रूपि के प्रति विद्रोह-स्वरूप मानव मन की चेतना का नवरूपायण है । यही रवीन्द्र का दार्शनिक विचार, सीमा के बीच असीम के माय मित्तन-साधना का आनन्द है और यही निराला के रूप और अरूप का आनन्दमय लक्ष्य है ।

धर्म

परवर्ती युग में आकर निराला के प्रतिपाद्य पर आधुनिक समाज के काठिन्य तथा दुःख एक अभाव का प्रभाव था । अनुभूतिजय दुःखतिरक में प्रभावित उनकी कविता में समाज की विकृति का दर्शन होता है और प्रभावस्वरूप उनकी कविता में क्षयितक विद्या एक व्यर्थ का आधिक्य हो जाता है । रवीन्द्रनाथ की गण सम

की कवितायां म भी पृथ्वी के धूलि धूसरित प्रात का चित्रण ही अधिक प्राप्त होता है जिसमें कवि मन का विपाद् अंकित है।

बासा बेंधेछि आलगा माटिते

से चलित माटि नदीर जले नदीर जले
एसेछिल भेसे,

ये माटि पडवे गले आवण धाराय ।

याव आमि ।

तोमार यथाविहीन विदाय दिने

आमार भागामिटेर परे गाइवे दोयेल

लेज दुलिये ।

एक साहानाइ बाजे तोमार बाशिते,

ओयो श्यामली

ये दिन आसि, आबार ये दिन याइ चले ।

इस प्रकार की 'यक्तिगत दुःखानुभूति स सम्पूर्ण निराला काव्य भरा पडा है। परवर्ती युग में आकर उहाने भी रवीन्द्र की तरह लिखा था—

मैं अकला

देखता हूँ, आ रही

मेरे दिवस की साध्य बेला ।^१

अथवा

स्नेह निभर बह गया है

रेत ज्यो तन रह गया है ।

आम की यह डाल जो सूखी लिखी

कह रही हूँ—अब यहा पिक या शिखी

नहीं आते पक्ति मे वह हूँ लिखी

नहीं जिसका अर्थ—

जीवन बह गया हूँ ।^२

परन्तु रवीन्द्र के विपरीत, निराला के ये दुःखपूर्ण भाव या तो सामाजिक विद्रोह अथवा सामाजिक व्यंग के रूप में प्रकट हुए हैं। वास्तव में यह दोनों रूप ही पादचार्य कविया की दम है जो बंगाली कवि नजरुल इस्लाम तथा

१ निराला अर्थिमा

२ निराला अर्थिमा

अमीयकुमार चक्रवर्ती के माध्यम से निराला के काव्य में सयोजित हुई है। नजरूल इस्लाम तथा अमीयकुमार चक्रवर्ती ने व्यक्तिगत अनुभूति से अनुप्ररित होकर अपने काव्य में समाज पर व्यंग्यात्मक चोट की है। पाश्चात्य कवियों में इएटम एलियट, अडेन तथा टुअनर ने कविता में माध्यम से समाज पर कसकर व्यंग्य बसा है जहाँ से अनुप्ररित होकर एव परिस्थितिजन्य प्रभावस्वरूप वह व्यंग्य-तत्त्व बगला काव्य में पदापण करता है और काफी अग तक वही से रस ग्रहण कर निराला ने अपने काव्य में सामाजिक व्यंग्य का स्थान दिया है। इस सम्बन्ध में प्रभाकर माचवे का कहना है कि बगला का उदाहरण में निराला के व्यंग्य काव्य की समानता है, किन्तु मराठी गुजराती उर्दू में जो उदाहरण मिलते हैं वे व्यंग्य युक्त भले हो, उनमें अभिव्यक्ति का वह बलक्षय नहीं जिसका कारण ही निराला की व्यंग्य-कविताएँ विशेषरूप में उल्लेखनीय हैं।^१ उदाहरणस्वरूप अमिय चक्रवर्ती की एक कविता ली जा सकती है—

मोटर गाडि चकाय ओडाय धुलो,
 यारा सोरे पाय तारा शुषु लोकगुलो,
 कठिन, कातर, उद्वल असहाय,
 यारा पाय यारा सबड धेक्कि नाहि पाय
 केन किछु आछे बोभानो, बोभा ना पाय मेलावेन।^२

और निराला—

दाप गई गाडी, बायें मुडो जसे, एक कोर
 कटो चबूतरे की त्रि कुटिया से निकली
 काली एक नारी गाली देती, खाली टिकली
 देखकर चबूतरा।^३

रवीन्द्रनाथ की विषय वस्तु को ग्रहण कर रचित कविताएँ

यहाँ हम निराला की कविताओं का उन विषयों पर विवचन करेंगे जो रवीन्द्र काव्य से निराला ने ग्रहण किया है। वास्तव में रवीन्द्र-काव्य से प्रेरित होकर निराला जी ने इन विषयों का अपनी कविताओं में लिए चुनाव है परन्तु इन विषयों का अपनी अनुभूति से रंग कर निराला इन ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि कहीं भी यह दूसरे का प्रभाव नहीं लगना है। यहाँ निराला प्रभाव का आत्मसात कर लेते हैं।

१ निराला का काव्य में अतिव्यंग्यवाद, माहित्य का पैप अंक २००७

२ आधुनिक बंगला कविता, पृ० ८०

३ निराला नये पत्ते

१ पुरातन वैभव का अवन

इस सम्बन्ध में डा० रामविलास शर्मा कहते हैं कि रहस्यवाद छायावाद का एक पहलू था। शोना को एक मान लेने पर बहुत तरह के भ्रम उत्पन्न हो जाते हैं। अथ रामाटिक आन्दोलनों की तरह छायावाद में भी विरोधी प्रवृत्तियाँ और असंगतियों का अभाव नहीं है। पलायन और अध्यात्मवाद के साथ उसमें सधप का स्वागत और क्रान्ति की चाह भी है। पलायन का रूप अध्यात्मवादी ससार की कल्पना ही नहीं है इतिहास से वे युग ढूँढकर निकाल जाते हैं जिनसे कवि को आंतरिक सहानुभूति होती है। 'दिल्ली' और खण्डहर कविताओं में पुरातन वैभव के प्रति भावुक सहानुभूति प्रकट की गई है। शिवाजी का पत्र 'गुरु गाविन्दसिंह पर और 'जागो फिर एक बार' नामक कविता में उस हिंदू पुनर्जागरण के चिह्न मिलते हैं जो गुरु में हमारे राष्ट्रीय जागरण के ही एक अंग रहे थे। 'यमुना' में उन्होंने पौराणिक ससार को नवीन जीवन दिया है। ब्रज और यमुना को दबकर अनेक आधुनिक कवियों ने नटनागर श्याम और 'पनघट पर गापिया की मधुर प्रमलीला' के जो चित्र अंकित किये हैं उनका आरम्भ इसी कविता से होता है। परन्तु हम डा० रामविलास शर्मा के इस पलायन विवेचन से सहमत नहीं हैं। निराला ने रवीन्द्र की तरह प्राचीन वैभव का चित्राकन रोमांटिक कवियाँ की तरह पलायन (escape) मनोभाव को प्रदर्शित करने के लिए नहीं किया था वरन् इसके पीछे अपनी मस्तिष्क तथा प्राचीन वैभव के प्रति श्रद्धा प्रदर्शन करना ही मुख्य उद्देश्य था। यद्यपि रवीन्द्र का तरह निराला भी प्राचीन वैभव के अभाव में दुःखी अवश्य हो जाते हैं परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि वे भाव राज्य (Eutopia) में जाने के इच्छुक हैं। वे तो मानव से प्रेम करते हुए सम्पूर्ण मानव के साथ इस पृथ्वी में रहकर इस पृथ्वी को सुखमय बनाना चाहते हैं।

रवीन्द्र—

सेइ बदनबेर मूल यमुनार तीर,
सेइ से गिखीर नृत्य
एखनो हरिछे चित्त,
फेलिछे विरहछाया आवण तिमिर ।
आजओ आछे वृदावन मानबेर मन ।

गरतेर पूर्णिमाय
 श्रावणेर वरियाय
 उठे बिरहेर गाया बने उपवने
 एखनो से धागि बाजे यमुनार तीरे ।
 एखनो प्रेमेर खेला,
 सारा दिन, साराबेला
 एखनो कादिछे राधा हृदय-कुटोरे ।

और निराला—

यमुने, तेरी इन लहरों में
 किन अधरों की आकुल तान
 पयिक प्रिया-सी जमा रही है
 उस अतीत के नीरव गान ?
 बता कहा अब वह बगीचट ?
 कहा गए मटनागर श्याम ?
 चल चरणों का व्याकुल पतघट
 कहां आज वह वृदाधाम ।^१

यही पलायनवाद की प्रवृत्ति नहीं बरन् यह दुःख का अर्ध है। रवीन्द्र 'मत्स्य गिव मुन्दरम' के कवि थे और मत्स्य कठोर मूर्ति होता है उसकी पूजा के लिए दुःख अर्ध ही सफल समझा जाता है। निराला ने रवीन्द्र के इस भाव को ही ग्रहण किया है।

२ ससृष्टि

उपयुक्त विवचन से स्पष्ट हो जाता है कि निराला ने रवीन्द्र से भारतीय ससृष्टि की दोगा ग्रहण की थी। दार्शनिक विचारपन में भारतीय ससृष्टि का सबसे मन्त्रवपूष्ण विचार अद्वैतवाद का भाव निराला की कविता में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त पश्चिम के भौतिकवाद के विरुद्ध अपनी ससृष्टि की महत्ता का प्रतिपादन रवीन्द्रनाथ ने अपनी बहुत-सी कविताओं तथा दो गीत-नाट्य तासेर 'दा' और 'रत्नकरवी' में किया है। उदाहरणतया—

गतागौर मूय आजि रक्तमेघ भाभे
 अस्त गेलो,—हिसार उत्सवे आजि बाजे

१ निराला : परिमल

अस्त्रे अस्त्रे मरएर उ माद—रागिनी
मयकरी ! दयाहीन सम्यता नागिनी
तुलेछे कुटिल फण चम्भरे निमिषे ।

निराला ने भी पश्चिम के भौतिक विकास के विरुद्ध हमारी आध्यात्मिक सस्कृति की महत्ता का प्रतिपादन किया है—

आज सम्यता के बज्ञानिक जड विकास पर
गर्वित विश्व नष्ट होने को और अग्रसर
स्पष्ट दिख रहा, सुख के लिए खिलौना जैसे
बने हुए बज्ञानिक साधन, केवल पसे
आज लक्ष्य में हैं मानव के, स्थल जल अम्बर
रेल तार बिजली जहाज नभयानों से भर
दप कर रहे हैं मानव, बग से यगगण
मिडे राष्ट स राष्ट, स्वाप से स्वाप विचम्भण ।^१

तथा—

किन्तु क्या ?
योग्य जन जीता है,
पश्चिम की उक्ति वहीं
गीता है, गीता है
स्मरण करो बार बार—^२

परन्तु पश्चिम के प्रति घृणा के भाव प्रदर्शन करना भारतीय सस्कृति के अनु रूप नहीं था और इसी लिए रवीन्द्र की तरह निराला ने सम्पूर्ण विश्व की उन्नति की कामना कर विश्वधम का प्रतिपादन किया है जो हमारी सस्कृति की सबसे महत्वपूर्ण धारा है—

शृत्वति विश्वे अमृतस्य पुत्रा
आये धामानि दिग्यानि तस्थु ॥ श्वेताश्वतर अध्याय २।५

स्वामी विवेकानन्द ने इसी विश्वधम का प्रचार सम्पूर्ण जगत में किया । निराला विवेकानन्द तथा रवीन्द्र दोनों में इस विचार का ग्रहण कर अपने काव्य में विश्वधम का प्रतिपादन करते हैं—

१ निराला अग्रा

२ निराला पराल

वर दे, वीणावादिनि घर दे ।
 प्रिय स्वतंत्र रवश्चमृत मात्र नव
 भारत में भर दे ।
 क्लृप भेद तरहर प्रकाश भर
 जगभग जग कर दे ।
 नव गति, नवलय, ताल छन्द नव
 नवल कठ, नव जलद मद्र रव
 नव नम के नव विहग वृन्द को
 नव पर, नव स्वर दे ।^१

यहाँ कवि स्वदेश में ही स्वातन्त्र्य रव फतन की आकांक्षा नहीं करता अपितु सम्पूर्ण विश्व को ज्यातिपूर्ण दखन की अभिनाया कर रहा है। रवीन्द्र की कविताप्रायः यह विश्वप्रेम सवय भवता है—

हे मोर चित्त, पुण्य तीर्थ
 जागोरे घीरे—

एह भारतेर महामानवेर
 सागरतीरे ।

हेषाय दौंडाय दु बाहु बाडाये
 नमि नरदेवतारे,

उदार छन्दे परमानन्दे
 वन्दन करि तारे ।

३ स्वदेश प्रेम

श्रीमती महादेवी वर्मा 'आधुनिक कवि सीरीज' वाले संग्रह की भूमिका में छायावाद युग की सामाजिक और राष्ट्रीय कविताप्रायः के बारे में लिखती हैं—
 'राष्ट्रीय भावनाओं का लेकर लिखे गए जय-भराजय के गान स्थूल धरातल पर स्थित मूल्य अनुभूतियाँ में जो मामिकता ला सके हैं वह किमी और युग के राष्ट्र-गीत कहेंगे या नहीं, इसमें सन्देह है। निराला की राष्ट्रीय या स्वदेश प्रेम की कविताप्रायः पर युगपत बगल के स्वदेशी आन्दोलन द्विजेन्द्रलालराय, रवीन्द्रनाथ तथा नजरुन इस्लाम का प्रभाव लक्षित होता है। भारत प्रगति, विद्रोह-गान तथा स्वदेश में विश्व का मिलन यह सभी भाव निराला का नजरुल, द्विजेन्द्रलालराय तथा रवीन्द्र से प्राप्त हुए हैं। द्विजेन्द्रलालराय की भारत प्रगति देखिय—

ये दिन सुनिल जलधि हड़ते
उठिल, जननी भारतवष
उठिल विश्वे से कि कलरव,
से कि मा भक्ति स कि मा ह्य ।

इसी के अनुरूप स्तोत्र शली म निराला के लिखे हुए भारत प्रशस्ति के गीत प्राप्त हो जाते हैं—

वद पद सुदर तव,
छन्दे नवल स्वर—गौरव,
जननि, जनक जननि जननि^१

ज नमूमि भाषे !
जागो नव अम्बर मर—
ज्योतिस्तर वासे
उठे स्वरोर्मियों मुल्लर
दिक कुमारिका पिक रव ।^२

इसके अतिरिक्त नजरूल की तरह भरव रव म निराला ने स्वदेश गान भी गाया है।

नजरूल—

आसछे एवार अनागत प्रलय नेशार नृत्य पागल
सिधु पारेर सिंह द्वारे धमक हेने मागल आगल ।

मृत्यु गहन अघ कूपे
महाकालेर चण्ड रदे —

धूम्र धूपे
बच्च गिलार मंगल ज्वेले आसछे भयकर—
ओरे ऐ हासछे भयकर ।

तोरा सब जयध्वनि कर्
तोरा सब जयध्वनि कर्

और निराला—

१ निराला ने इन शब्दों को रवांदा से ग्रहण किया है—
आमि भुवन मनोमोहिनी । आमि निमल मयकरो—बल धरणी
जनक जननी-जननी ।

२ निराला गीतिका

जग गद जनता, हुए लुण्ठित मुकुट जीवन सुहाये ।
रुण्ड मुण्डो से भरे हैं खेत, गोलो से बिछाये^१

अथवा—

इस जग के भग को मुक्त प्राण ।
गाओ बिहग ! सदध्वनित गान,
त्यागोज्जीवित, वह उध्व ध्यान, धारा खव^२

जहाँ निराला ने रवीन्द्र के स्वदेश प्रेम की कविताओं से भाव ग्रहण कर अपने स्वदेश प्रेम की कविताओं को मजबूत है वहाँ साधारणतया दो तत्त्व स्पष्ट परि लक्षित होने हैं—

प्रथम, रवीन्द्र ने सम भाव के आदेश से प्रेरित होकर प्रत्येक मानव को सम दृष्टि से देखा है और प्रत्येक को प्रेम के सूत्र में आवद्ध करने की इच्छा प्रकट की है—

कबे देव ए रजनी हवे अवसान ?
स्नान करि प्रभातेर गिशिर सलिले
तदए रविर करे हासिबे पृथिवी ।
अधुत मानवगण एक कण्ठे देव,
एक गान गाइबेक स्वग पूण करि ?
नाहिक दरिद्र धनी अधिपति प्रजा,
कंह कारो कुटीरते करिले गमन
मर्यादार अपमान करिबे ना मने,
सकलेइ सकलेर करितेछे सेवा,
केह कारो प्रभु नय, नहे कारो दास ।
से दिन आसिबे गिरि णखनए येनो
दूर भविष्यत सेइ पतेछि बलित—
येइ दिन एक प्रेमे हइया निबद्ध
मित्तबेक कोटि कोटी मानवहृदय ।

निराला ने भी अपनी कविताओं में इस साम्य भाव का प्रदर्शित किया है परन्तु रवीन्द्र जहाँ 'शृवनि विव अमृतस्य पुत्रा' से प्रभावित हुए थे वहाँ निराला ने युगीन प्रगतिवादी विचारों से प्रभावित होकर इस प्रकार की कविताओं का

१ निराला बेल

२ निराला तुलसीदास

प्रणयन किया है इसलिए पूरात इनम रबीन्द्र का प्रभाव नहीं दिखाई पडता है । उदाहरणतया—

जल्द जल्द पर बढ़ाओ आओ आओ।
आज अमीरा की हवेली
किसानों की होगी पाठशाला

+ + +

सारी सम्यत्ति दग की हो,
सारी आपत्ति देश की बने,
जनता जातीय वेश की हो,
बाद से विवाद यह ठने,
कांटा काटे से बढ़ाओ ।^१

द्वितीयन निराला रबीन्द्र के स्वदेश प्रेम के उस भाव से प्रभावित हुए हैं जहाँ कवि ने स्वदेश की स्वल्प परिधि को त्याग कर विश्व को अपनाया है । इस सम्बन्ध में चारुचन्द्र बन्धोपाध्याय कहते हैं कि रबीन्द्र विश्वप्रमी हैं । अति शशकाल से ही उनका कवि चित्त सकीर्ण ऐशकाल की सीमा में आवद्ध रहने का कारण दुःख तथा दीनता के विरुद्ध युद्ध प्रोपणा करता रहा है ।^२ इसीलिए रबीन्द्रनाथ का स्वदेश प्रेम कभी भी उग्र स्वदेश प्रेम का रूप धारण नहीं कर पाया है । निराला की कविताओं में भी रबीन्द्र के स्वदेश प्रेम की कविताओं की तरह विश्व प्रेम की झनक स्पष्ट प्रतिफलित दिखालाई पडती है । उदाहरणतया रबीन्द्रनाथ—

चिर कल्याणमयी तुम धर्य,
दग विदेगे वितरिछ अन्न,
जाह्नवी यमुना विगलित कहरण
पुण्य पीपूष स्तम्भ बाहिनी

और निराला—

जागो जीवन धनिक
विद्वज पराय प्रिय बरिणके ।^३

१ निराला बला

२ चारुचन्द्र बन्धोपाध्याय रवि-रसिम, भाग २, पृ० ३४-

३ निराला गीतिका

तथा—

नर जीवन के स्वाय सकल
बलि हो तेरे चरणों पर, मा,
मेरे श्रम सञ्चित सब फल ।^१

अशत विश्व प्रेम का यह भावना निराला ने विवकानन्द व विदवधम के भावा से भी ग्रहण की है ।

४ मृत्यु

दासनिक विचार के अतगत मृत्युविषयक मायनाद्या को हम ज सकते हैं । कारण रवीन्द्र और निराला दोनों ही मृत्यु को असीम का ही पर्याय भेद मानत हैं । तथा मोमा और असीम के मिलन हतु आनन्द की प्राप्ति म मोमा असीम क रूपक का अन्न मानत हैं । इस आनन्द-यन के पुरोहित रवीन्द्र के लिए इस ससार का कोई भी व्यापार आनन्दहीन नहीं है । इसलिए जिस मृत्यु क भय स जगत वासी सन्नस्त है उस मृत्यु को रवीन्द्र न अमय-मूर्ति रूप म दखा है एव मृत्यु की विभीषिका का मोघन कर मृत्यु को भी सुन्दर रूप मे प्रदर्शित किया है । मृत्यु यदि नहीं रहनी तो जीवन भी नहीं रह पाता, मृत्यु क द्वारा ही हम जीवन के अस्तित्व को उपलब्ध करत है । रवीन्द्र कहत हैं—

आमि तो मर्युर गुप्त प्रेमे
रय ना घरेर कोसे धेमे ।
आमि चिर घोवनेरे पराइब माला
हाते भोर तारि तो बरणडाला

तथा—

मरण के प्राण बरण करे बचि ।
एव प्रत्यक जीव—

बहिल मरणरूपी जीवन-स्रोत
से ये ऐ नागा गडार ताले ताले
नेचे पाप दगे दगे काले काले ।

मृत्युमन्त्र^१ का निराला क विचार मवना रवीन्द्र के अनुकूल हैं । रवीन्द्र की तरह निराला भी मृत्यु का बरण बरना चाहत है कारण मृत्यु क द्वारा ही हम अपने जीवन के अस्तित्व का अनुभव करत हैं—

१ निराला भातिका

वे में वहाँ वरण

जननि, दुखहरण पद राग रजित मरण ।^१

एव

मुक्ति हूँ मैं मृत्यु मे

आई हुई, न उरो ।^२

रवींद्र की तरह निराला जीवन को मृत्यु के द्वारा ही पाते हैं—

मरण को जिसने बरा है,

उसी ने जीवन भरा है ।

परा भी उसकी, उसी के

अक सत्य यशोधरा है ।^३

५ महापुरुषों की प्रशस्ति

रवींद्र के अनुरूप निराला ने भी महापुरुषों की प्रशस्ति में कविता की रचना की है। रवींद्र की कविता अरविन्द रवींद्र लहो प्रणाम तथा 'सत्येन्द्रनाथ दत्तर प्रति' के अनुरूप निराला ने सम्राट एम्बड अष्टम के प्रति, 'सत कवि रविदास जी के प्रति', आदरणीय प्रसाद जी के प्रति, 'भगवानबुद्ध के प्रति', आचार्य शुक्ल जी के प्रति श्रद्धाजलि 'श्रीमति विजयलक्ष्मी पंडित के प्रति', युगप्रवर्तिका श्रीमती महादेवी वर्मा के प्रति तथा युगावतार परमहंस श्री रामकृष्ण देव के प्रति, कविताओं में इन महापुरुषों की प्रशस्तियाँ गाई हैं।

इस प्रकार रवीन्द्रनाथ की विषय वस्तु को ग्रहण कर निराला की कविताओं की रचना पर प्रभाव सूत्र की धारा स्पष्ट हो जाती है। उपयुक्त विषयों के अतिरिक्त रोमांटिक प्रेम, कवि विरह तथा मिलन भाव जैसे विषयों को ग्रहण कर निराला ने कविताओं का प्रणयन किया है जिसका कारण हमने कला पक्ष के अन्तर्गत प्रतीक वचन 'म विस्तार से बिया है। यहाँ केवल एक और विषय पर विवेचन देना पड़ता है जिसका रवींद्र से ग्रहण कर निराला ने कविता की रचना की है।

६ कविता सम्बन्धित

रवींद्र ने अपनी कविताओं में कहीं-कहाँ कविता को सम्बन्धित कर कविता की रचना की है। जस—

१ निराला अपरा

२ निराला अनामिका

३ निराला अनामिका

४ देखिये कला-पत्र

छन्दे उठिछे चन्द्रमा, छन्दे कनक रवि उदिछे
 छन्दे जगमण्डल चलिछे,
 ज्वलत कविता तारका सबे,
 ए कवितार माभे तुम के गो देवि,
 आलोक आलो प्राधारि ।

कवि और कविता सम्बन्धित कविताएँ निराला ने भी लिखी हैं और यह सम्भव है कि रवीन्द्र की इस प्रकार की कविताओं की विषय वस्तु से प्रभावित होकर निराला ने यह कविता लिखी है—

ऐ, कहो
 मौन मत रहो ।
 सेवक इतने कवि हैं—इतना उपचार—
 लिए हुए हैं दैनिक सेवा का भार,
 धूप, दीप, चन्दन, जल,
 गन्ध सुमन दूर्वादल,
 राग भोग, पाठ विमल मन्त्र,
 पट्टु करतल गत मृदग,
 चपल मृत्यु, विविध भग
 वीणा वादित सुरग तन्त्र ।^१

रवीन्द्र के सौन्दर्य दर्शन से प्रभावित निराला का सौन्दर्य दर्शन—

निराला के विचार-पक्ष पर विवेचन करते हुए हमने स्वतः निराला के भाव-पक्ष पर भी विचार कर लिया है कारण भाव पक्ष के अनन्त विचार-पक्ष प्राप्त जाता है जैसे कि भाव-पक्ष के दो घग से प्रकट है—

(१) बौद्धिक तथा (२) कल्पनिक

इसमें बौद्धिक भाव ही विचार-पक्ष के अनन्त हात हैं । यहाँ इस विषय पर गुलाबराय का मन उदघृत करना उपयुक्त होगा । उनका कहना है कि वाक्य का मूल तत्त्व तो रागात्मक या भावतत्त्व ही है किन्तु उसके साथ पादचात्य दगा म कल्पनात्मक, बुद्धितत्त्व, और शक्तीतत्त्व का भी माना है । कल्पनाभाव को पुष्ट करती है । उसके लिए सामग्री उपस्थित करना है और साथ-साथ ही अभिव्यक्ति में भी सहायक हानी है । कल्पना का सम्बन्ध मानसिक सृष्टि में है, यह चाहे कवि की भावनाओं के अनुकूल ब्रह्मा की सृष्टि का पुनर्निर्माण हो और

चाहे उसमें जोड़ तोड़ और उलट फेर करके बिल्कुल नई (किंतु सुसंगत और सुसम्भव) रचना हो। बुद्धितत्त्व कल्पना का उच्छेद खल होने से बचाये रखता है। बठोपनिषद् में बुद्धि को इन्द्रियरूपी अश्वों की लगाम कहा है। वह इन्द्रियों की ही लगाम नहीं है वरन् कल्पना के घोड़ों की भी लगाम है। हमारा यहाँ औचित्य दोषा और क्रम प्रमाण, सार एकावली आदि अलंकारों में कहीं तो पूरे बुद्धि तत्त्व का और कहीं उसके भावमय आभास का (जस का व्यंग्य आदि में) समावेश हो जाता है। बुद्धितत्त्व से सत्य और शिव की रक्षा होती है और कल्पना तथा भावतत्त्व में सुन्दरम का निर्माण होता है। कल्पना से सुन्दरम का शरीर बनता है और भावना में उसकी आत्मा रहती है। 'सुन्दरम् रस का विषयागत पक्ष है।'

निराला की कल्पना न प्रकृति के विराट रूप, नारी के महिमावित रूप, प्रतीत के भावमय आकलन आदि भाव भूमियाँ के माध्यम से काय में सौन्दर्य को ही प्रकट किया है। क्योंकि कवि का सौन्दर्य दर्शन उसके काय की भाव भूमि से घनिष्ठ रूप में संयोजित रहता है। परन्तु साथ ही जसा कि प्रवास जीवन चौधुरी कहते हैं कि विश्व प्रकृति तथा जीवन को जब निस्वार्थ दृष्टि से देखा जाता है तब उसकी समग्रता तथा उसका सामग्रस्य अंतर को एक महान् सौन्दर्य तथा आनन्द से परिपूर्ण कर देता है। यह सौन्दर्यानुभूति ही काय सौन्दर्य की भित्ति है। रवीन्द्रनाथ ने अपने जीवन में इसी सौन्दर्य का साधन किया था। यही रस की साधना तथा एक और सत्य तथा आत्मापलधि की साधना है। रवीन्द्र न तटस्थ दृष्टि से विश्व प्रकृति तथा जीवन में अपने जीवन देवता को अनुभव किया और इसीलिए उसमें सौन्दर्य एवं आनन्द की उपलब्धि की। यही उनके लिए रसोपलब्धि रही। कारण, जीवन देवता (ईश्वर) ने ही तो रस के लिए इस समस्त विश्व चराचर की सृष्टि की है—रसावस। कवि के व्यक्तिगत जीवन की यही साधना थी।

रवीन्द्र काव्य के अनुरूप निराला ने भी भावभूमियों के माध्यम से अपने जीवन देवता को खोजा है और निराला के लिए उसकी प्राप्ति आनन्द की प्राप्ति तथा रस की प्राप्ति रही जो सौन्दर्य का ही पर्याय है। रवीन्द्र तथा निराला दोनों ने ही कल्पना के द्वारा जीवन के सुख-दुःख आशा निराशा के बीच सृष्टि के उस वृहत् सामग्रस्यपूर्ण सौन्दर्यमूर्ति की उपलब्धि की है—जो उपलब्धि उन्हें उनके

१ गुणावराय भिद्वान और अभ्ययन, पृ० १६

२ प्रवास जीवन चौधुरी रवीन्द्रनाथेर सौन्दर्यदर्शन, पृ० १८०

जीवन-देवता के समीप ले जाती है। तब यह मुग्य दुःख और व्यक्ति भावात्मक मात्र न रहकर रम्य में परिणत हो जाता है। यही रवीन्द्र तथा निराला का सौन्दर्य है जहाँ निराला रवीन्द्र से प्रेरित होकर अपना साहित्य में कल्पना के माध्यम से भाव भूमियाँ के आकलन द्वारा सौन्दर्य की सजावट करता है। रवीन्द्र के अनुरूप निराला के जीवन की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति जब रसात्मक हो जाती है तब सृष्टि के समस्त रूप तथा भाव के भीतर निराला जीवन-देवता का अनुभव करता है और उसका प्रति अपना प्रयोग अर्पित करता है। उस रवीन्द्र—

ये केह भोर बेसेछे भालो
ज्वलेछे घरे ताहारि आलो,
ताहारि मांभे सवारि आनि पेयेछि आमि परिचय,
सबारे आमि नमि ।

और निराला—

जन जन के जीवन के सुन्दर
हे चरणों पर
भाव बरसा कर
दू सन मन धन 'योद्यावर कर ।'

इस प्रकार बौद्धिक-तत्त्व के द्वारा 'सत्य णिव तथा भावत्व तथा कल्पना के द्वारा 'सुन्दरम्' का समाहार निराला काव्य में रवीन्द्र के अनुरूप सृष्टि तथा सुन्दर ढंग से हुआ है। यही निराला की सबसे बड़ी महानता है।

तृतीय अध्याय

निराला के कला-पत्र पर वगला का प्रभाव

१५ अगस्त सन १९३७ को लिखे एक पत्र में निराला जी ने श्री जानकी वल्लभ शास्त्री को अपनी कला के सम्बन्ध में निम्नलिखित बात लिखी थी—

‘कला के सम्बन्ध में पत्र में क्या लिखू ? उसके विकास और सौन्दर्य की बातें लाखों तरह की हैं—एक देखिए—

कोई न छायादार

पेड़, यह, जिसके तले बठी हुई स्वीकार,

श्याम तन भर बंधा यौवन

नत नयन, प्रिया कम रतमन,

गुरु हथौड़ा हाथ, करती बार बार प्रहार

सामने तरु मालिका अट्टालिका प्राकार ।

यहाँ सीधा वगला हाने पर भी हथौड़े की चोट पत्थर पर पड़ने पर भी देखिए, किस तरह अट्टालिका पर पड़ती है लखक व वगला प्रकार के कारण और निर्देग स ।

ऐसी बहुत सी बातें इसमें हैं । वह जहाँ बठी है वह पड़ छायादार नहा है और अट्टालिका तरुमालिका है ।—अट्टालिका भी तरुमालिका है फिर आदमी कितनी चाह में है ।

बधा यौवन छलकता नहीं, कसी पवित्रता है ! स्वास्थ्य भी कसा ! !

‘में तोड़ती पत्थर’—अत का स्वभावत समझ में आ जायगा—’ में तोड़ती पत्थर—हृदय ।’

निराला की सम्पूर्ण कला अभिव्यक्ति में पीछे यह हथौड़ी की चोट काम कर रही है । प्राचीन को छिन्न भिन्न करके नवीन की स्थापना ही उनकी कला की पहली कमीठी है । परन्तु यहाँ प्राचीन की अवमानना नहीं हुई है वरन् नवीन को बाधन के लिए निराला ने नूतन का आह्वान किया है क्योंकि कला की अभिव्यक्ति यदि युग के नवीन भावों की अभिव्यक्ति के साथ बढ़ना न रखे सब नयन-नय

भावा की व्यञ्जना के लिए यदि भाषा प्रस्तुत न हो तो कवि मानस की सृष्टि अवश्य ही सङ्कुचित हो जायेगी। और वैसे भी निराला का युग कला का परिष्कृत युग माना जाता रहा है जिसके सम्बन्ध में लिखते हुए डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि उस युग की कविता में छन्द अलंकार, रस, ताल तुक आदि सभी विषया में गतानुगतिकता से बचने का प्रयत्न था और जिनमें शास्त्रीय ऋतियों का प्रति कोई आस्था नहीं दिखाई गई थी।^१ छायावादी युग की इस विशेषता को स्पष्ट करते हुए डा० बच्चनसिंह अपने प्रबंध 'निराला की कविता'^२ में लिखते हैं कि जिस सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भूमिका पर छायावाद अधिष्ठित हुआ है उसके सम्बन्ध में देखने से प्रतीत होता है कि छायावाद की मूल प्रेरणा स्वतंत्रता या मुक्ति (liberty) की कामना है। इन मुक्ति-कामी कविता को रचनाओं में सबंध इसकी प्रतिध्वनि सुनी जा सकती है। निराला जो इसका सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि हैं। ये छन्द के बंधना में मुक्ति चाहते थे, सडो गली मायताओं से मुक्ति चाहते थे पुराने नतिक मूल्यों से मुक्ति चाहते थे, साहित्यिक रुढ़ियों से मुक्ति चाहते थे। इसीलिए निराला का विद्रोह या आतिकारी कहा गया है। यहाँ मुक्ति का तात्पर्य अभावात्मक से नहीं है बरज निराला जी की मुक्ति की धारणा सबदा भावात्मक ही रही है।

कला के सम्बन्ध में स्वयं कवि निराला ने 'मेरी गीत-कला' शीर्षक निबंध में बहुमूल्य विचार प्रस्तुत किये हैं जिनसे उनकी कला पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। कवि ने लिखा है— भया सिद्ध कर उलटा जापू' यदि किसी पर घट सकता है तो एकमात्र मुझ पर, कबीर उलटवामी के कारण विनापता रखते हैं पर वहाँ छंदा का साम्य है उलटवामी नहीं, यहाँ छन्द का भाव दाना की उल्टी गया बहती है। यह उलट पुलट मैं न जानूँ बूमर नही किया, घोर यह उलट पुलट है भी नहीं इसमें भीषा घोर प्राणा क पास पहुँचता रास्ता, छन्दा के इतिहास में दूसरा नहीं।^३ कवि प्रारम्भ में ही लोक विरोधी परम्परा तथा मायताओं के विद्रोही रहें^४ चाह वह किसी क्षेत्र में क्या न हो। कवि ने इस व्यापक विद्रोह को 'उलटा जापू' कहा है।

कवि ने इस विद्रोह को पीछे अपना इस छायावादी विद्रोह के पाछे मुख्यतया अग्रजी स्वच्छन्दतावाद तथा बंगला-कविता का पूणतया प्रभाव लक्षित होता है।

१ '१० हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य पृ० ४६१

२ 'अन्वेषण' पत्रिका के २५ वें अंक के काव्यान्वेषण विभागक में सङ्कलित

३ निराला प्रबन्ध पत्र पृ० २६७

४ निराला प्रबन्ध पत्र पृ० २६७

दोनो का आधार नवीन चेतना थी। अग्रजी स्वच्छन्दतावाद के सम्बन्ध में प्राज्ञ ने अपनी पुस्तक^१ में बतलाया है कि रामेंटिसिज्म ने एक नवीन चेतना का निर्माण किया था। पर उसकी मायतामा पर प्रापत्ति करत हुए कावेन कहा कि स्वच्छन्दतावाद केवल इतना नहीं है वह अपने चानू तथा ऐतिहासिक ग्रथ में काफी गूढ है। वह अनेक भावा, विचारों मायतामा से भरा पडा है। जो भी हो, यदि स्वच्छन्दतावाद की सर्वाधिक व्यापक प्रवृत्ति का उल्लेख करता हो तो कहना न होगा कि वह प्रवृत्ति स्वच्छन्दता की है। इस प्रकार की स्वच्छन्दता बगला नवीन कविता के प्रकाशस्तम्भ माइकल मधुमूदन तथा जिहारीलाल की कविता के माध्यम से बगला काव्य में समा गई और बाद में जिसने आकर रवीन्द्रनाथ की कविता में पूर्णरूप धारण किया। इस सम्बन्ध में लिखते हुए सुकुमारसेन कहते हैं—पहले पहले बण्णव कविता के द्वारा बगला साहित्य में शक्तिमान साहित्य की सृष्टि हुई थी। पचदश पाँच शताब्दी के बगला साहित्य की भाषा इस कविता के लिए उपयुक्त थी। परवर्ती साहित्य में यह भाषा ही एकच्छत्र साभ्राज्य करती रही। उस ईडियम की हटान की क्षमता या साह्य किमी का न रहने पर ऊन विश शताब्दी के मध्य भाग पर्यन्त बगला कविता सम्पूर्ण बध्य ही रही। माइकल मधुमूदन ने भाव तथा भाषा की ओर मनवजीवन प्रदान करने की चष्टा की। वे आवश्यक ही काफी अश तक साथक हुए थे परन्तु पूरगत नहा। और फिर उनके अनुवर्तिगण उनके साथक सृष्ट उपानाना का काम में नहीं लगा पाय। अपना पथ ढूँ निकालने की योग्यता उन लोगों में नहीं थी। इनके बाद रवीन्द्रनाथ आते हैं। अति शैशव से ही रवीन्द्रनाथ साहित्य की मत् दीक्षा से दीक्षित हुए थे इसी कारण से सामयिक बगला काव्य के प्रति उनकी वितृष्णा जगी थी। भ्रमर के अन्तर्गत बोध को लिए हुए बालक कवि ने बण्णव-पदावली में मधुर को ढूँ निकाला। उसी के साथ सस्कृत तथा अग्रेजी साहित्य का रस भंडार भी उसके अधिगत हुआ। काव्यगित्त के उपादान के लिए उसको और कोई चीज ढूँने की आवश्यकता नहीं रही। बण्णव कविता का ललित माधुर्य सस्कृत कविता की कठिन दीप्ति, अग्रजी कविता का मूढम गित्तकाय रवीन्द्रनाथ के लखना बिन्दु पर त्रिवर्णी मगम के रूप में अधिष्ठित हुआ।^२

हिन्दी छायावादी कवियों ने तथा मुख्यतया निराला जी ने बगला अग्रजी

१ प्राज्ञ रामेंटिक एगाना

२ सुकुमारसेन बगला साहित्यर शि शास, तृतीय खण्ड, पृ० १६

तथा मस्कृत की इस त्रिवली धारा का अपन साहित्य में ग्रहण किया। इस सम्बन्ध में निराला जी ने लिखा है—

संसार का हर एक भाषा स्वाधीन चात से ही चल कर और भिन्न भिन्न भाषाओं से ही गठ लकर अपना भण्डार भरती है। हिन्दी के पद प्रकरणों में अधिक प्रभाव बंगला और अंग्रेजी का पडा है मद्यपि वे एक भाषाओं में मस्कृत का हा गण समथन किया है। अंग्रेजी का असर पडा उसका राज्यभाषा होने के कारण और बंगला ने अपना प्रभाव जमाया अपनी उन्नति की बढौलत।^१

हिन्दी कविताओं पर दूसरा भाषाओं का प्रभाव निराला जी का काम्य था। कारण वे साबते थे कि इस प्रकार ही हिन्दी उन्नति कर पायगी। और उनका यह मत सन् १९२८ से ही स्पष्ट रूप धारण कर चुका था। सन् १९२८ के लेख में उन्होंने लिखा था—

अनादि काल से लहर आते तक समय के परिवर्तन के साथ-ही साथ हमारे भाषा-साहित्य का भी परिवर्तन होता गया है। जिस साहित्य भी सृष्टि की नदरता के नियमा में बधा है— नतीज श्रुति के अनुकूल चल रही है। जो मूढमार्तिभूत कारण युग धर्म के रूप से साहित्य में इस प्रकार के परिवर्तन करते पाये हैं। हमारी पराधीन हिन्दी पर पराधीनता के ही कारण फारसी का प्रभाव पडा अंग्रेजी का पड रहा है और आश्चर्य है उसकी प्रतीय सहजिया बंगला मराठी आदि भी उस पर राव गाठ रही हैं। अंग्रेजी का समय फारसी का छोड़कर दूसरी किसी भी प्रान्तीय भाषा का उस पर प्रभाव छोड़ने का सीमा नहीं प्राण हुआ, बल्कि बंगला जसो प्राणीय भाषाओं पर उसी का प्रभाव पडता रहा। दूसरी भाषाओं में रत्ना का अवश्य ग्रहण करना चाहिए परन्तु प्रभावित होकर नहीं प्रीति से प्रेरित होकर।^२

निराला जी ने अपनी इस प्रीति भावना से उद्बुद्ध होकर अपना कविता के कला पत्र का जहाँ तक सम्भव हो सका है बंगला-कविता के पत्र विन्यास में जोया है। परन्तु मद्रूप विन्यास दासत्व की भावना से प्रेरित होकर नहीं हुआ है बल्कि इनके पीछे छायावादी युग की वह मूल प्रेरणा है जिसके सम्बन्ध में डॉ० हज़ारीप्रसाद द्विवेदी ने अपना मन्तव्य किया है—

मानवतावादी दृष्टिकोण का अपना नान कवि के चित्त में उन काव्य-रुदिया का प्रभाव नहीं रह जाता जो दीपकानेन परम्परा और रातिवद्ध चित्तन पडति

१ निराला 'मया की गीत और हिन्दी का शीला', चयन

२ निराला 'हिन्दी-कविता साहित्य का प्रगति', चयन

के भाग से सरकती हुई सहृदय क चित्त पर आ गिरी होती है और कल्पना क अविरल प्रवाह म तथा आवेगो की निर्माथ अभिव्यक्ति म अन्तराय उपस्थित करती है । इस दृष्टिकोण को अपनाते से सौंदर्य की नई दृष्टि मिलती है क्योंकि मानवीय आचारा और क्रियाया क मूल्य म अन्तर आ जाता है । इस अवस्था म सौंदर्य केवल बाह्य रूप मे नही बल्कि आंतरिक आदाय और मानस गठन म भी व्यक्त हाता है । सौंदर्य के बंधे सधे आयोजना धिसे धिसाए उपमाना और पिटी पिटाई उत्प्रक्षाया पर आधारित चिन्तन शून्य कायरुदियों मे मुक्ति पाया हुआ चित्त मानवता के मापदण्ड से सब कुछ को देखता है और फिर कल्पना के अविरल प्रवाह से घन मसिलष्ट आवेगो की वह उबर भूमि प्रस्तुत होती है जो रोमाटिक या स्वच्छदतावाती साहित्य के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हाती है । मानवीय दृष्टि क कवि की कल्पना, अनुभूति और चिन्तन के भीतर से निबली हुई, वयक्तिक अनुभूतियों के आवेग की स्वतः समुच्छित अभिव्यक्ति बिना किसी आभास और बिना किसी प्रयत्न के स्वयः निकल पडा हुआ भावसात ही छायावाती कविता का प्राण है ।^१ और इस प्रकार कल्पनागत नवीनता की खोज म छायावादी कवि न बगला-साहित्य का अपना प्रेरणा स्रोत बनाया क्यकि उस साहित्य म छायावाती कविता की कल्पना क अनुरूप उपादान उपस्थित थे । निराला जी इनम अग्रगण्य ह और कल्पनागत अनुभूति की तीव्रता के कारण उनकी कविता न बगला कविता की नूतनता को आत्ममात् कर लिया और बगला-कविता क माध्यम से अग्रजी कलागत प्रेरणाए भी उनके काय म समाहित हो गई । निराला क काव्य मस्कार म रवीद्रनाथ के काव्य का बहुत अधिक हाथ है इन स्वयः निराला ने भी कई बार स्वीकार किया है । वे रवीद्रनाथ का सामन रखकर हिंदी को समृद्ध करन का प्रयत्न करत रहे ।^२ कल्पना की दुर्वार शक्ति ने जहाँ निराला की कविता म नव भावों क समावश क लिए बगला-काय से तथा मुख्यतया रवीद्रनाथ से प्रेरणा ग्रहण की वही कलागत रूप कियास म नूतनता रान के लिए बगला-काव्य क कला कियास से अपने का कियस्त किया । ऐस भी कल्पना के दो उपयोग हैं—पहला, जब वह रचना क रूप निर्माण म योग लेती है और दूसरा जब वह स्वयः विषय अथवा विषय की मूल प्रेरणा बनकर आती है । पिछने अध्याय म कल्पना-पक्ष पर विचार करत हुए हमने निराला की कविता क कल्पनागत विचार-पक्ष पर विवेचन किया है यहाँ निराला

१ इजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य, पृ० ४६०

२ नामवरसिंह छायावाद प० १०२

की कविता के कल्पनागत रूप विन्यास का विवचन करेंगे और इसका अन्तगमन मूर्तिविधान प्रतीकचयन तथा रूपक पर बगला प्रभाव हमारा विवच्य विषय होगा क्योंकि मूर्तिविधान, प्रतीकचयन तथा रूपक के द्वारा भावों को परिवर्तित रूप देने में कल्पना सत्रय अधिक दौड़ लगाती है और छायावादी युग में तो उसने नभान ही कर दिखाया है।

कल्पनागत रूप विन्यास

नामवरविह बहने हैं कि भाव-वेग से उत्पन्न अन्तर्दृष्ट दायिनी और सृष्टि विधायिनी कल्पना ने कविता के रूप विन्यास में इतना क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया कि बड़े बड़े मुग्ध समासाचका को भी छायावाद बबल नई काव्य गली प्रतीत हुआ।^१ और यह रूप विन्यास आंतरिक सौन्दर्य भावना—जिमका सम्बन्ध में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत पिछले पृष्ठ में द्रष्टव्य है—का परिणाम है। परन्तु यह सौन्दर्य भावना रीतिकालीन सौन्दर्य भावना से प्रभावित न होकर यूरोपीय तथा बगला प्रभाव-स्वरूप हिन्दी में आई यद्यपि इनमें प्राचीन मसृष्ट माहिय का प्रभाव भी निमन्त्रेह है। छायावादी कविता में रीतिकालीन कविता का इतिहासिक और कृत्रिमता को अक्षी तरह भाष लिया या इमलिए उन्हींने कविता के रूप विन्यास में नवीन भावों को समाहित करने के लिए प्राचीन रूप विधि का निराध कल्पनागत रूप विन्यास के आधार पर किया। जसाकि हम बता चुके हैं कि कल्पनागत रूप विन्यास के प्रमुख तीन आधार हैं—रूपक प्रतीक तथा चित्र।

रूपक

रूपक की योजना में वस्तु सत्य प्रभावशील और मनोरम बनता है। कल्पना के प्रमुख उपकरणों में से यह एक है जसाकि धा० ए० रिचर्ड्स ने कहा है कि अलङ्कृत भाषा में प्रयोग में भी कल्पना ही कार्य करती है। रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलङ्कारों का निर्माण इसी के अन्तर्गत आता है जब असाधारण रूप में इनका प्रयोग किया जाता है।^२ और इस असाधारण प्रयोग का कारण यह अलङ्कारमात्र न रहकर पद्धति विशेष बन जाता है। अर्थात् मन के असाध्य को मुसप्ट

१ नामवरविह छायावाद, पृ० ८३

२ The use of figurative language is frequently all that is meant. People who naturally employ metaphor and simile especially when it is of an unusual kind are said to have imagination.—I. A. Richards, Principles of literary Criticism page 249

सज्जा दन क' लिए कवि रूपक का आश्रय ग्रहण करता है। रूपक पद्धति' भाव बोध का एक अत्यन्त सशक्त रूप है और उसमें कल्पना का जो प्रौढ और सयत रूप समाविष्ट है, उसकी उपेक्षा करना श्रेष्ठ कवि के लिए असम्भव है। यहाँ रूपक से रूपक काव्य (allegory) हमारा आशय नहीं बरन् रूपक (metaphor) अलंकार है जो कल्पना के संयोग में एक पद्धति विशेष बन जाता है। इस पद्धति विशेष को स्पष्ट करत हुए मोहित लाल मजुमदार लिखते हैं कि भाव यदि अशरीरो अर्थात् लेखक क' अन्तर से उत्थापित हुआ हा तब उसे रूप देने के लिए लेखक के मानस भण्डार में प्रचुर इंद्रिय संयुक्त रूप-स्मृति क' सचित काय का रहना आवश्यक है। लेखक उसी में से लेकर भाव की रूप रचना करता है यहाँ भाषा रूपात्मक बन जाता है। यह अलंकार नहीं भाव प्रकाशन का यथाथ उपाय मात्र है। उदाहरणार्थ—

बादल छाये

य मेरे अपने सपने

आँखों से निकल, मडलाये^१

मानविक भाव-वेग क' विस्तार के द्वारा निराला जी बहिः प्रकृति को नवीन रूप में रूपायित एवं नव रस में रमायित कर विघाता के प्राचीन सृष्टि-पट पर नवीनतर चित्र प्रस्फुटित करने में समर्थ हुए हैं और यह रूपक के द्वारा संभव हो सका है। यद्यपि कल्पनागत रूपक का प्रसार निराला जी में बहुत कम ही प्राप्त हुआ है तथापि जो कुछ भी है वह काव्य के रूप विन्यास में सफलता क' साथ प्रयोग में लाया गया है। यह रूपक-पद्धति मुख्यतया रवीन्द्र के प्रभाव स्वरूप उनके काव्य में संयोजित हुई है। मन के किसी भाव का प्रकट करने के लिए प्रकृति की सहायता लना रवीन्द्र काव्य की एक विशेष प्रक्रिया है। इस रूपक भाव से विन्यस्त रवीन्द्र की कविता में वर्षा जीवन मत्ता की चिरंतन निर्गुण अस्तित्व का प्रतिफलन करती है और इस प्रकार वर्षा रूपक रवीन्द्र क' काव्य का एक विशेष रूपक बन जाता है। उदाहरणार्थ—

भर भर भरे जल, बिजुलि हाने

पवन मानिछे बने पागत गाने।

आमार परमाणु पुरे कौन खाने ध्यथा फुटे,

कार क्या बेजे उठे हृदय—कोणे।

१ मोहित लाल मजुमदार 'माहित्येर स्टाल'।

२ निराला 'अग्नि'।

निराला की कविता में भा मन की कदम-चपला वपा के रूप के माध्यम से धीरे धीरे कल्पित बन जाती है—

बादल रे, जी तडप ।

शिये उपाय सफ़्तों तन के,

मन के, चरण मिले सज्जन के,

‘यय प्रायना जन भव है

पञ्जर पिञ्जर करके ।

भव अधियाली ही बन्ती है,

ध्याया ध्याया पर बड़ती है

प्राणों के धन श्याम गगन से

बूदों कभी न बरम ।

छिप जाती है छवि बिजली में

सरसर से दबती है ही में,

बूदों की धन-धन से उमन

प्राण न मेरे ह्रस ।^१

रवीन्द्रनाथ की मन् रूपक वधुगव पदावली में मिला है जैसेकि मुकुमारमन कहत है —

वधुगव-पदावलीन वर्षामध विरहिलीर अन्तर दिगन्त मेदुर करिया दियाद्य ।
धादिक मेघमाम झाकाग डाका समासनीपकुजे रसर उत्सवर डाक पाडितधे
दानुर-नादुरी डाहक डाहकी । गदिके गृहकोणपड विरहिलीर हृदय अश्रुविगलित ।
गमनि करिया वधुगव पदावलीत वर्षा मेघ चनिधगु सण्ड रूप द्याडिया अपरूप
अवग परिवरा रचना करियाद्ये ।^२

परन्तु जहाँ वधुगव-कविता में वर्षा केवल राधाकृष्ण का प्रणय-लीला का अत्यन्त प्रधान परिवेश है वहाँ इसके विपरीत रवीन्द्रनाथ का कविता में वर्षा आवसत्ता का चिरन्तन, निरूढ़ अकृषि का प्रतिफलन करती है । रवीन्द्रनाथ में वर्षारूपक कवि तथा गृहन्तर मानव जीवन का करण व्यथा है—

ए मरा बादर दिने

क धीरे-धीरे म्याम दिने

काननर पय दिने मन येते चाय ।

१ निराला गान्धु व

२ मुकुमारमन, कविता मञ्जरी, कथा, गृन्थ मठ, निर्णय मरकरण

विजय यमुना—कूले
 विकसित नीममूले
 कादिया परान बुले विरहव्यथाय ।

निराला जी म भी यह रूपक प्राप्त है—
 घन आये घनश्याम न आये ।
 जल बरसे आँसु हृग छाये ।
 पडे हिंडोले, पडका आया,
 बढी पैंग, घबराई काया,
 चले गये गहराई छाया,
 पायल बजे, होग मुरभाये ।
 मूले छिन, मेरे न बटे दिन
 छुले कमल, मैने तोडे तिन,
 अमलिन मुख की सभी सुहागिन
 मेरे मुख सीधे न समाये ।^१

रवीन्द्र तथा निराला के काव्य में विश्व प्रकृति का हम इस प्रकार नूतन रूप में देखते हैं । यहाँ वहि प्रकृति पर मानव प्रकृति की छाया पड रही है । जैसे, बंदिब-कविता के निसर्ग चित्रों में दबलीला की अभिनय अनुकृति काफी अंश तक मानवलीला के अनुसरण पर होती रही और इसीलिए श्रृंगार की कविता में वहि प्रकृति के चित्र में मानव प्रकृति की छाया पडती है । और इस छाया का स्पष्ट रूप जसाकि सुकुमारसेन कहते हैं रूपक—उत्प्रक्षा के माध्यम से ही प्रतिफलित हुआ है ।^१

जस अहोरात्रि का द्वत नृत्य—

नाना चक्राते यम्या यपूषि ।
 तयोत्पद रोचते कृष्णमयन् ।
 श्यावी च यदरुषी च स्वसारो ।

महद्देवानामसुररत्नमक्षम ॥—श्रृंगार, ३ ५५ ११

(यमज कायाद्वय पृथक सञ्जा स मज्जित होनी हैं । एक की सञ्जा स दीप्ति तथा दूसरे की मज्जा स कालिमा विच्छुरित हाती है । श्याम तथा श्वेत दो बहनें वे हैं । देवगणा की महत् महिमा एक ही है) ।

^१ निराला ग'तयुज पृ० ८

^२ सुकुमारसेन कागला मार्गस्यैर कथा, तृतीय खण्ड

कालिदास के काव्य में वहि प्रकृति दबमभा को त्याग कर मनुष्य के गृह के पास आ खड़ी हुई है। कालिदास की कल्पना ने मानव प्रकृति के साथ वहि प्रकृति का सादृश्य तथा साम्य प्रदर्शित कर सहृदय काव्य रूप धारण किया है। मुकुमारमन कहते हैं कि कालिदास जीव तथा जड़ लीला के बीच प्रभेद काफी अंश तक हटाने में समर्थ हुए हैं।^१ जग स्वयंवर सभा में रघु इन्दुमती का दृष्टि विनिमय—

तत सुनन्दावचनावसाने

लज्जां तनूकृत्य नरेद्रक्या ।

दृष्ट्या प्रसादमलया कुमार

प्रत्यग्रहीत सवरणस्रजेव ॥—रघु०, ६।८०

जड़ प्रकृति को मानव प्रकृति का रूप देकर मेघदूत काव्य में कालिदास आधुनिकता की ओर अग्रसर हो आये हैं—

गत्वा चोद्ध दग्मुखभुजोच्छवासित प्रस्य सधे

कलासस्य विदग्बनितादपणस्यातिथि स्या ।

गड गोच्छाय कुमुदविणदलधो वितत्य स्थित

रागीभूत प्रतिविगमिष अम्बकस्याट्टहास ॥

—मेघदूत, पूर्वमेघ, ५८

रवीन्द्र काव्य में आकर यह वहि प्रकृति का मानव प्रकृति पर विस्तारण नूतन रूप धारण करना है कारण रवीन्द्र कालिदास की तरह विषय प्रधान (objective) कवि न होकर विषयो प्रधान (subjective) कवि थे और इसीलिए अपने भाग का सप्रसारण (Projection) उन्होंने रूपक के द्वारा वहि प्रकृति में किया जग जनगूय नती-भक्त पर सध्यागगन के अस्तराग का दलकर अनजान ही विरह की अभाविन स्मृति जग पडती है—मालूम होता है—

विधुर हयधे सध्या मुधे

याधोया तोमार सिदुरे ।

यह अस्तिगत भाव विगम मन का छोड़कर निर्विगम (universal) बन जाने के कारण ही इतना प्रपणाय बन सका है। कल्प्य भाव निराला जी में भी पाया जाता है—

१ बगला माहित्वे रथा, सुनीय रायट (निर्णय सरकार) पृ० ६

डूबा रवि अस्ताचल,
साध्या के दृग छल छल ।^१

सूर्यास्त के द्वारा रवीन्द्र की तरह निराला जी न भारतीय मस्कृति के विनाश का भी रूपक प्रस्तुत किया है। जमे—

रवीन्द्र—

गताब्दीर सूय आजि रक्तमघ माझे
अस्त गेलो,—हिंसार उरसये आजि बाजे
अखे अखे मरणेर उमाद रागिनी भयकरी ।

श्रीर निराला—

भारत के नम का प्रभापुम
शीतलच्छाय सास्कृतिक सूय
अस्तमित आज रे—तमस्तूय दिष्ट मण्डल,^२

फिर गभीर यामिनी में झिल्लिरव को रवीन्द्र न ध्यानमग्न विश्व प्रकृति का रूपक देकर प्रस्तुत किया है जो—

अधकारेर जयेर मालाय एवटाना सुर—गूथता जा रहा है। निराला ने भी अधकार को ध्यान निमग्न व्यक्ति रूपक में प्रकट किया है—

स्तब्ध अधकार सघन
मन्द गध भार पवन,
ध्यान मग्न नश गगन
मूदे पल नीलोत्पल ।^३

अथवा

है अमा निगा उगलता गगन घन अधकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान स्तब्ध है पवन धार,
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विनाल,
सूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल ।

इसके अनिश्चित यमत्त प्रभान में प्रकृति की उज्ज्वल परिपूर्णता के बीच अज्ञानक नदि रवीन्द्र चौर जात हैं—बहनी हवा में उह किसी का आभास मिलता है—

१ निराला गीतिका

२ निराला तुलसीदास

३ निराला गीतिका

४ निराला राम की गीतिका

आसा-याघोआर आनास भासे बातासे चबल ।

कवि निराला का भी यह नाम होता है—

ऊषा के अधरों में अदृष्ट अघोर
भर मुग्धा की चितवन में अनजान,
तदृष्ट अदृष्ट यौवन प्रभात विज्ञान,
प्रथम सुरमि में भर उमाद—विकास
अनी अनो आई थी मरे पास ।
वातायन में कर कोमल आघात
स्वप्न-जदित जीवन-रंगोर,
उच्छ खलता की गह डोर,

छोच रहो थी अपनी ओर,—प्रजात ।^१

इस प्रकार निखिल चराचर क ऊपर मानविक अनुभूति की यह स्थिति सत्य ही एक अभूतपूर्व प्रक्रिया है । कही वही रवीन्द्रनाथ क रूपक विराट महिमा म महाकाव्य कल्पना का छाड भाग क जात हैं, जम—

कातेर राखाल तुम सध्याय तोमार गिगा बाजे,
नि धेनु किरे आसे स्तम्भ तब गोष्ठ गृह माध,
उत्कण्ठित बेगे ।

निजन प्रातरतले
घानेयार आतोज्वले
विष्पुन—वहिनर सप हाने युगातेर मेघे ।

मुकुमारान इसका 'cosmic metaphor' की आख्या दत हैं । इस प्रकार के cosmic metaphor का प्रयोग निराला की कविता म नी प्राप्य है—

गत गत अर्था की सांध्य काम
यह आकृषित—भ्रू कुटिल भाल
दाया अम्बर पर जलब—जाल ज्यों दुस्तर,^२

अथवा—

सोई घर गगन का मन, फन,
कुण्डली—नगनलीन विन्व जन ।^३

१ 'निगल' परिवर्तन

२ 'निराला' मुद्रमागम

निराला कविता

डूबा रवि अस्ताचल
संध्या के दृग छल छल ।^१

सूर्यास्त के द्वारा रवीन्द्र की तरह निराला जी ने भारतीय मस्कृति क विनाग का भी रूपक प्रस्तुत किया है। जमे—

रवीन्द्र—

शताब्दीर सूप आजि रत्तमेघ माफे
अस्त गेलो,—हिंसार उत्सवे आजि बाजे
अखे अखे मरणेरे उमाद रागिनी भयकरी ।

श्रीर निराला—

भारत के नम का प्रभापूय
शीतलच्छाय सास्कृतिक सूप
अस्तमित आज रे—तमस्तूय दिङ् मण्डल,^२

फिर गभीर यामिनी म भिल्लिरव का रवीन्द्र ने ध्यानमग्न विश्व प्रकृति का रूपक देकर प्रस्तुत किया है जो—

अधकारेर जयेर मालाय एकटाना सुर—गूथता जा रहा है। निराला ने भी अधकार को ध्यान निमग्न व्यक्ति रूपक म प्रकट किया है—

स्तब्ध अधकार सघन
मद गध भार पवन,
ध्यान मग्न नश गगन,
मूदे पल नीलोत्पल ।^३

अथवा

है अमा निशा उगलता गगन घन अधकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान स्तब्ध है पवन वार,
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विनाल,
भूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल ।

इसके अतिरिक्त बगल प्रभान म प्रकृति की उज्ज्वल परिपूर्णता के बीच अचानक कवि रवीन्द्र चौक जात हैं—बहनी हवा म उह किसी का आभास मिलता है—

१ निराला गतिका

२ निराला तुलसीदास

३ निराला गतिका

४ निराला राम की गतिपूजा

आसा पाओआर आभास भामे बालासे बचल ।

कवि निराला का भी यह नात होता है—

ऊपा के अधरों में अरुण अधीर
 मर मुग्धा की चितवन में अनजान,
 तरुण अरुण यौवन प्रमात विज्ञान,
 प्रथम सुरभि में मर उमाद—विकास
 अनी अनी आई थी मरे पास ।
 चातायन में कर कोमल आघात
 स्वप्न-जटित जीवन कशोर,
 उच्छ ललता की गह डोर,

खींच रही थी अपनी ओर,—अज्ञात ।^१

इस प्रकार निखिल चराचर के ऊपर मानविक अनुभूति की यह स्थिति कवई एक अभूतपूर्व प्रक्रिया है । कहीं कहीं रवीन्द्रनाथ के रूपक विराट मन्त्र में महाकाव्य कल्पना को छोड़ आग बरू जात हैं, जम—

कालेर राखत तुम सध्याय तोमार गिगा बाट,
 दिन धेनु फिरे आसे स्तम्भ तव गोष्प-गृह मान.
 उत्कण्ठित वेगे ।

निजन प्रातरतले
 आलेपार आलोज्वले
 विद्युत—बहिनर सप हाने युगान्तर मेंसे ।

मुकुमारगन शक । cosmic metaphor का उदाहरण—
 cosmic metaphor का प्रयोग निराला का कवि—

गत गत अर्थों की सांध्य कव
 यह आकृति—भू कृष्ण-
 छाया अम्बर पर उतर—

अथवा—

सोई घर समय का क
 बुझती—

१ निराला परि
 २ निराला सुर
 ३ निराला मन्त्र

प्रतीक

कल्पनागत रूप विन्यास का दूसरा सूत्र प्रतीक है। प्रतीक के सम्बन्ध में किमी आलाचक का मत है कि प्रतीकारम्भ काव्य में रूपक जस विस्तार की आवश्यकता नहीं है। सूक्ष्मता और योजकता 'प्रतीक' के विशिष्ट गुण हैं। प्रणय की उत्कटता दिखाने के लिए दीप पतंग जैसे प्रतीक आदिम काल से चल आते हैं। नये-नये प्रतीकों की खोज और पुराने प्रतीकों का नये सन्दर्भ में उपयोग कविता की भाव-युक्त सम्बन्धी वृद्धि के लिए अनिवार्य है।

नामवरसिंह प्रतीक को रूप अथवा फाम से अलग मानते हैं। उनका कहना है कि अंग्रेजी में जिसे फाम कहते हैं उनका सटीक अर्थ सगति है अर्थात् फाम वह है जिसमें भाव के साथ रूप की पूर्ण सगति हो।^१ यह कथन प्रसिद्ध आलोचक ए० सी० ब्राडल का है। वे कहते हैं कि विषय और रूप में कोई भेद नहीं है। यह एक प्रकार की ऐसी अभेदमयी स्थिति है जस रक्त तथा जीवन की। और यह अभेदमयी स्थिति ही कविता है, और कला भी है।^२ नामवरसिंह इसके उपरांत कहते हैं कि भाव और रूप की पूर्ण सगति के बाद कभी-कभी काव्य की रूप विधि एक और काय करती है। अपनी सायकता प्रमाणित कर चुकने के बाद जब रूप अथवा फाम किसी अतिरिक्त भाव को व्यञ्जना करता है तब वह 'प्रतीक' हो जाता है। भूभा जब अपनी ध्वनि से आधी पानी दाना को पूर्ण बोध कराती है ता उसके रूप की सायकता पूरी हो जाती है। किन्तु इसमें आगे बढ़कर जब वह किसी हृदय की व्यथा और क्षाम की धार संकेत करती है तो अपनी सायकता के अतिरिक्त काय करती है।^३ नामवरसिंह का प्रतीक के सम्बन्ध में यह मत स्वतोव्याघात (self contradiction) से युक्त है क्योंकि प्रतीक रूप विन्यास की एक प्रक्रिया है और रूप वास्तव में भाव का विन्यास है और इस प्रकार भाव और रूप की सगति के भीतर ही प्रतीक को स्थान मिलना चाहिए उससे अलग नहीं। श्रीमान् केदारनाथसिंह का भी यही मत है—

१ नामवरसिंह छायावाङ्, पृ० ८७

२ It is a unity in which you can no more separate a substance and a form than you can separate living blood and the life in the blood. And this identity of content and form you will say is no accident it is of the essence of poetry in so far as it is poetry and of all art in so far as it is art. Oxford lectures on poetry Page 15

३ नामवरसिंह छायावाङ् पृ० ८८

काव्य का कलात्मक रूप (फ़ार्म) न तो केवल बिम्ब में होता है, न प्रतीक में न उत्प्रेक्षा में और न शब्द मगीत अथवा छन्द के प्रवाह में। वह इन सबकी 'एकान्विति' या 'सुमघटन' में होता है। यह 'सुमघटन' वहीं बाहर से नहीं आता। यह स्वयं वस्तु का गुण है। कल्पना इसी 'सुमघटन' की छात्र करती है।^१ इस प्रकार कल्पनागत रूपविन्यास प्रतीक आदि 'सुमघटन' अर्थात् 'सगति' के लिए काय करती है। 'मगति' में ही उसका अन्त है। प्रतीक की परिभाषा देते हुए बेदारनाथमिह लिखते हैं कि मनुष्य के भावलोका में बहुत-सी ऐसी बातें होती हैं जिन्हें हम सामान्य व्यवहार की भाषा अथवा स्थानाश्रयी बिम्बा के माध्यम से नहीं व्यक्त कर सकते। ऐसे मूर्त तथा अदृश्य भावों के लिए मनुष्य प्रतीकों की सृष्टि करता है। मानव-सम्पत्ता के विकास में प्रतीका का उतना ही योग है जितना हमारे जीवन के विकास में मूल तथा जन का।^२ उनका और कहना है कि साहित्य और कला में प्रयुक्त ज्ञान वाले प्रतीका का क्षेत्र बहुत व्यापक है। अथ क्षेत्र में बौद्धिक प्रतीका का प्राधान्य होता है, काव्य में सर्वनात्मक अथवा भावात्मक प्रतीक ही प्राण्य होना हैं। कारण यह है कि वहाँ प्रतीकों का निमाण सचयन और मयाजन कल्पना के द्वारा होता है। इस काम में कल्पना का विनाश सांस्कृतिक उपलब्धियों और चिराचरित भावना-सदृशियों से सहायता मिलती है। केवल यही नहीं कल्पना के माध्यम से कभी-कभी नूतन प्रतीकों की खोजना भी होती है और आधुनिक काव्य में नये प्रतीकों की महत्ता ही सबसे अधिक है।

छायावादी कवियों की प्रताक योजना आधारणतया नवीनता के लिए हुए है। बेदारनाथमिह का कहना है कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताओं के द्वारा पहल-पहन नवीन प्रतीकों की अथगत सभावनाओं की भार लागों का ध्यान गया। शिन्धी की छायावादी कविता पर भी इसका प्रभाव पडा।^३ जसाकि हम बता चुके हैं कि प्रताक 'गल्पना' का मूल उद्देश्य है परन्तु व्यवहार करने से प्रतीक का रंग पीलापड जाता है बिनाय वात माधारण उक्ति में परिणत हो जाती है। तब प्रयाजन होता है नूतन प्रताकों का अथवा पुराने प्रतीकों का नवस्थापन। रवीन्द्र ने यह काय करलागा कि माय किया परन्तु कुछ आलाचकों के मतानुसार इन नये प्रतीकों का प्रयाग रवीन्द्र ने प्राप्त कि बिम्बवादी सांकेतिक स्कूल (Imagist school of symbolic poetry) के प्रभाव स्वरूप अथवा प्रभाव है। यह सिद्धांत

१ बेदारनाथमिह कल्पना और छायावादी, पृ० १००

२ कल्पना और छायावादी, पृ० १६

३ बेदारनाथमिह कल्पना और छायावादी, पृ० १०३

भ्रमात्मक है। कारण फ्राम व साकेतिक कविगण न विशेष अय-यजना के लिए नूतन शब्दा की सृष्टि की है। इस प्रकार व शब्दों को पारिभाषिक या साकेतिक कहा जाता है। व्यापक रूप से उस प्रकार के शब्दा का व्यवहार काव्य में नहा किया जा सकता। भाषा और साहित्य के अतीत इतिहास को मान लेना ही पड़ता है और रवीन्द्र ने उसको मानकर अपनी स्वकीयता का परिचय दिया है। साधारण अत्यन्त परिचित प्रतीकों का अपन विचारा के प्रसंग में व्यवहार कर रवीन्द्र ने अपनी मौलिकता प्रदर्शित की है और जहाँ तक उनके आध्यात्मिक रहस्यवादी प्रतीका का प्रश्न है वहाँ भी व उपनिषद के अद्वैत सिद्धान्त से प्रभावित है न कि फ्रास के प्रतीकवादी पाल भलेरी आदि की तरह ईसाई सत-कविया के द्वारा। इसका स्पष्ट समझने के लिए आधुनिक काव्य के नवीन प्रतीकों के समारम्भ पर विचार कर लेना होगा।

ऊनविंश शताब्दी के जडवादी वस्तुविज्ञान के प्रभाव से फ्राम के साहित्य में मनचले वस्तुवाद की उद्भावना हुई थी। परन्तु धीरे धीरे जोला, फलवयर की यह कामना पकिल वस्तुवादा दृष्टिभंगी की प्रचंडता शिथिल होने लगी एवं इसकी स्वाभाविक प्रक्रियास्वरूप एक विरोधी नवीन आदर्श क्रमशः साहित्य में पनपने लगा। लखका न समझ पाठक ने भी अनुभव किया कि इस वस्तुपूज के अंतराल में जो असूत आध्यात्मजगत विराजमान है उसी का जानना होगा और जतलाना होगा। तभी से प्रतीकात्मक काव्य (सिम्बोलिक पायटी) का सूत्रपात हुआ। इन्द्रिय सुरा के माध्यम में अतीन्द्रिय सुधा का सधान प्रारम्भ हुआ। यह अन्तर की मुक्ति है आत्मा की मुक्ति है परमात्मा की मुक्ति है। साइमन ने अपनी पुस्तक में भी यही बात कही है।^१ इसका स्पष्ट करने के लिए यह कहा जा सकता है कि मानव अपूर्ण है उसकी भाषा भी अपूर्ण है इसीलिए उस भाषा के द्वारा कोई पूर्णभाव या आदर्श प्रकट गित करना सम्भव नहीं है। परन्तु उस पूर्णता का आभास प्रतीक में प्राप्त हो जाता है। नारी सौंदर्य को समझने के लिए यदि एक गुलाब के फूल का उदाहरण दिया जायता नारी सौंदर्य का पूर्ण आदर्श प्रतिभासित हो उठता है। इएटस ने यही बात कही है।^२ मानव जिस प्रकार अपूर्ण है मानव प्रेम भी उसी तरह अपूर्ण है किन्तु जब वह अपना प्रेम भगवान् के चरणों पर अर्पित करता है तब उसका पूर्णता का आस्वाद प्राप्त होता है, उसका प्रेम परिपूर्ण तथा साधक बनता है। मानव तथा भगवान् का यह प्रेम सम्बन्ध पाल भलेरी तथा रवीन्द्रनाथ ने

१ It is all an attempt to spiritualise literature to evade the old bondage of rhetoric the old bondage of exteriority २ Symbols are the only things free enough from all bonds to speak of perfection

स्थापित किया है। परन्तु रवीन्द्र उपनिषद के अद्वैत सिद्धांत में प्रभावित थे तथा पॉल भनरी ईयार्ड सतकवियों से प्रभावित होकर बियाण्ड की खोज में लगे थे। दोनों का विषय एक है परन्तु प्रभाव सम्पूर्ण अलग।

रवीन्द्रनाथ की रचना में भारतीय अध्यात्म भावना तथा साहित्य-साधना का समन्वय प्राप्त होता है। मुकुमारमन कहते हैं कि मनन में तथा प्रकाशन में परम्परागत चली आती हुई भारतीय साहित्य में जो कुछ मौलिक विगिष्टना हो वही रवीन्द्र रचना में अवश्य ही अंतर्लौकिक है एवं किसी किसी भाव में व्यक्त है। भारतीय साहित्य-साधना पहले से ही अध्यात्म भावनामय है इसी लिए अधिक प्रतीकात्मक है। तथा इसी कारण रवीन्द्र के वाणी गल्प में प्रतीक का व्यवहार अनपेक्षित नहीं है।

मुकुमारमन रवीन्द्र-काव्य की इस अध्यात्म भावना का स्पष्ट करत हुए कहते हैं कि अस्तित्व-नास्तिक के गति स्थिति के पण्डितों में महाकाव्य की निमेष-गणना चल रही है। रवीन्द्रनाथ का कवि-कल्पना तथा अध्यात्म भावना भी इनामिन है यद्यपि वह इनतत्त्व नामिन् वोजन है उसका कहा जा सकता है सर्वोत्थितादी। एक और जीवन इवता अभिभार के लिए बड़ा चला आ रहा है और दूसरी ओर धनधामी स्वयंवर के लिए बनी चला आ रही है। कवि हृदय के इस द्विधाभिन सत्य (Ego and super ego) की सहायिता में ही जीवन पूर्णता की ओर प्रयत्न होता है। यही रवीन्द्र रचना का इतना है। और यह इतना गभीरतर अद्वैतानुभूति के ऊपर प्रतिष्ठित है। रवीन्द्रनाथ के काव्य में प्रतीक की सजायना इस भाव के सप्रयत्न के लिए समोजित हुई है जो समायत तीन प्रकार के हैं

१ परिचित वस्तु तथा भाव घटित प्रतीक।

२ पुराने कहानी कालिदास के काव्य तथा बष्णुव-पदावली से गृह्यत परम्परागत प्रतीक।

३ आध्यात्मिक प्रतीक।

रवीन्द्रनाथ के इन प्रतीकों द्वारा निराला बहुत ही प्रभावित हुए हैं और मुख्यतया रवीन्द्र के आध्यात्मिक प्रतीकों द्वारा कथानि निराला का विचार-रूप रवीन्द्र के अध्यात्म विचारा से बहुत ही प्रभावित है। इसका विवचन हम रवीन्द्र के प्रतीकों के वर्णन द्वारा करेंगे।

जगत्कि हम बता चुके हैं कि रवीन्द्र ने नये प्रतीकों का सृष्टि अपना अद्वैत-

भावना को प्रकट करने के लिए की है परन्तु यह काव्य उन्होनें पूर्व परिचित वस्तुओं में नवीन अर्थ भर कर दिया है। निराला ने भी व्यजनागर्भी प्रतीकों का प्रयोग रहस्यात्मक सत्ता का प्राणवान बनाने के लिए किया है। नामवरसिंह यही बात कहते हैं—छायावादी कवियों ने कभी कभी व्यजनागर्भी प्रतीकों का प्रयोग किया। ऐसा प्रायः वहाँ हुआ है जहाँ किसी रहस्यात्मक सत्ता की ओर संकेत है। परन्तु रवींद्र के प्रतीक जहाँ अद्वैत विचार पक्ष की दृष्ट भावना को प्रकट करने के लिए मुख्यतया संयोजित हुए हैं और इसी कारण दो प्रतीकों का इकट्ठा संचयन सुकुमारसेन के शब्दों में गतिस्थिति की तरह द्रव्य रूप में रवींद्र काव्य में पाया जाता है वसी कोई स्थितिहीनता निराला-काव्य में नहीं है। कारण निराला का दार्शनिक विचार रवींद्र की तरह एकी-मुखी नहीं है इसलिए निराला के प्रतीक सामान्यतः द्रव्य भावना के प्रतीक नहीं हैं। यद्यपि मोटे रूप में वे अद्वैत की व्याख्या करते हैं। रवींद्र ने जहाँ-कहाँ से भी दार्शनिक विचारों का चयन किया है वह उनका मूलभूत अद्वैत विचार को प्रतिष्ठित करने के लिए है न कि विभिन्न दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति के लिए। इसीलिए उनके सभी प्रतीक एक ही द्रव्य भावना का प्रकाशमय करते हैं जो कि अद्वैत अनुभूति की भूमिका पर अधिष्ठित हैं। सुकुमारसेन ने इसकी एक सूची तैयार की है जहाँ द्रव्य रूप में दो प्रतीकों का प्रस्तुत किया गया है। पथ स्रोत, पथ घर, पथ-रथ, हाट बाट आगुन प्रदीप बगि वीणा धूला घास आदि। इन युग्म प्रतीकों के द्वारा रवींद्र ने अद्वैत की ही प्रतिष्ठा की है। निराला के प्रतीक इस प्रकार एक निश्चित रूप रखा के अतगत नहीं समा सकते हैं यद्यपि अर्थ की दृष्टि से रवींद्र के व्यजनागर्भी प्रतीकों का अर्थ ही इन्होंने ग्रहण किया है जो अद्वैतधर्मों है। यह सभी रहस्यात्मक प्रतीक के अतगत हैं।

रवींद्र के परिचित वस्तु तथा भाव घटित प्रतीक द्वारा प्रभावित निराला के प्रतीक—

पथ—रवींद्र के लिए पथ के सामान्यतः तीन अर्थ हैं—

(क) पथ व्यक्ति के जन्म जीवन का प्रतीक है—

यत आगा पथेर आगा

पथे जेतैइ मालबासा,

पथे चलार नित्य रस

दिने दिने जीवन उठे माति ।

निराला न भी पथ प्रतीक का यही अर्थ ग्रहण किया है—

नयन ज्योति मे ज्ञान अकम्पित
 चलो जा रही नत मुख, विकसित,
 जीवन के पथ पर अविचल चित्त,
 छवि अपार सुन्दर ।^१

यथवा— पथ पर मेरा जीवन भर दो ।^२

(ख) यहाँ रवीन्द्र के लिए पथ प्रयास का प्रतीक है
 घरेड तोमार आना गोना पथे
 कि धार तोमाय भुक्ति ।

निराला ने इसे भी ग्रहण किया है—

कब से मैं पथ देख रही, प्रिय,
 उर न तुम्हारे देख रही, प्रिय ।^३

(ग) पथ प्रतीक का तीमरा अर्थ रवीन्द्र के लिए कवि-सत्त्व की सचेष्ट जीवन
 लीला है

पथे चले येते येते कोया
 कीन्सानि, तोमार परस आसे
 कलन के जाने ।

निराला ने भी पथ के द्वारा कवि का जीवन-लीला का प्रकट किया है—

मैं बठा था पथ पर,
 तुम आये खड़ रथ पर ।
 हँसे किरण फूट पथी
 टूटी जुड़ गई बडी
 मूल गये पहर घडी
 आई रति रथ पर ।^४

रथ

रवीन्द्र के लिए रथ जीवन-देवता का धाकिर्भाव है । परम ध्यानन्द का
 अनुभव है

१ निराला गानिका

२ निराला अपरा

३ निराला गानिका

४ निराला अपरिभा

तोमार कि रथ पौछये ना मोर ड्यारे ।

निराला क उपयुक्त पथ प्रतीक नविता के चरणा म रथ का यही प्रतीकात्मक अर्थ ग्रहण किया गया है यद्यपि निराला के लिए रथ क श्रीर भी प्रतीकात्मक अर्थ है जस—

जीवन के रथ पर चढ़कर
सदा मृत्यु पथ पर बढ़कर ।

अथवा—

नव बाया का माया रथ ।
रोका लख सु दर जानन ।

चरण-चिह्न

रबीन्द्र के लिए चरण चिह्न का प्रतीक, मुकुमारसन के अनुसार जीवन देवता का गोपन आविर्भाव है

हृदये मोर कलन जानि पडल
पायेर चिह्नखानि ।

निराला का प्रतीक भी इसी भाव का चातक है—

प्रथम पलक खुलते ही देखा
चरण चिह्न, नूतन पथ रेखा ।^१

घाट तथा बाट

घाट, मुकुमारसन क अनुसार रबीन्द्र क लिए ससारकी अभिनता का प्रतीक है तथा बाट ससार की कमधारा है

आमारे ये नामते हबे घाटे घाटे ।

एव— तोरा कोन रुपेर हाटे चलेछिस भवेर बाटे ।

निराला न भी वित्कुल *सी अर्थ को प्रकट करने क लिए इन दोनों प्रतीका का बरण किया है ।

रुके नहीं धनि चरण घाट पर,
देखा मैंने मरण बाट पर,
दूट गये सब घाट ठाट, घर,
छूट गया परिवार ।^२

१ निराला गीतिका

२ वही

द्वार

मुकुमारमन क अनुमार रवीन्द्र के लिए द्वार के दो प्रतीकात्मक अर्थ हैं।

(क) रुद्र द्वार जा अनानजनित बाधा तथा मूढ़ता प्रकाशित करता है

ये राने मोर दुयारगुलि मांगलो भडे

निराला ने भी 'रुद्र द्वार' से यही अर्थ ग्रहण किया

रुद्र द्वार पर रखे ये मने कितने ही बार

अपने वे उपहार कृपा के लिए तुम्हारी अनुपम ।'

अथवा—

वह खुला न द्वार, दिवस बीता,

हो गई निरख सकल गीता

में सोया पथ पर लिनमना

मुद गई दृष्टि ज्योति कारा ।'

(ख) उन्मुक्त द्वार—प्रस्तुति तथा स्वागत का चातक है

तोमार कि रय पौछवे ना मोर दुयारे

निराला ने भी यही अर्थ ग्रहण किया है

प्रात तय द्वार पर,

आया, जननि, नग अथ पथ दार कर ।'

वसन्त

मुकुमारमन क अनुमार रवीन्द्र के लिए वसन्त क भी प्रतीकात्मक अर्थ दो हैं।

(क) सामान्य रूप से वसन्त ऋतु

फागुन ये बान डकेछे माटिर पायारे ।

निराला के लिए भी 'वसन्त' का एक अर्थ सामान्य वसन्त ऋतु है

ससि वसन्त आया ।

भरा हय वन के मन्त्र,

नवोत्पन्न आया ।

(ख) रवीन्द्र के लिए 'वसन्त' का दूसरा अर्थ है—कवि भक्ति का जीवन स्मृति

१ निराला परिचय

२ निराला गणितिका

३ निराला कविता

आमार हेयाय फागुन वृथाय
बारे बारे डाके ये ताय ।

निराला के लिए भी 'वसन्त यौवन का प्रतीक' है
अमी न होगा मेरा अन्त ।
अमी अमी ही तो आया है
मेरे बच मे मृदुल वसन्त—
अमी न होगा मेरा अन्त ।^१

वासुरी और बीणा

मुकुमारसन कहते हैं कि रवीन्द्र के लिए 'सिम्बल की दृष्टि से वांसुरी व दो अर्थ हैं'—

(क) ससार म व्यस्त जावन दवता की पुकार
आमार ए तार बाधा बाधेर सुरे,
ऐ बांशि य बाजे दूरे ।

निराला क वासुरी प्रतीक का एक अर्थ यह भी है
हृदय मे कौन जो छेड़ता वांसुरी ?^२

(ख) जीवन की दुःख बदना के मध्य से उत्पन्न अकारण हृष क अनुभव
का प्रतीक

परारो बाजे बांशि नयने बहे धारा ।

और निराला म भी

वासुरी जो बजी

साज फूल की तजी ।

यमुना पुलिन अजन,

आजे नयन, सजन

तन, बसे फूल जम

मन देखकर लजी ।^३

बीणा रवीन्द्र के लिए जीवन और भुवन का आनन्द-स मयता है
तोमार बीणा आमार मनोमाझे
कखनो शुनि कखनो भुलि कखनो शुनि ना ये ।

१ निराला परमल

२ मुकुमारसेन बागचा माहत्येर कथा, तृतीय खण्ड द्वितीय म स्करण, पृ० ३७०

३ निराला गीतिका

४ निराला आराधना

निराला के लिए भी वीणा की भकार आनन्ददायक है

नाथ, तुमने गहा हाथ वीणा बजी

विश्व यह खो गया साथ द्विविधा लजी ।'

मुकुमारमन के अनुसार वणु तथा वीणा रवीन्द्र-वागी का गद्यसे बड़ा मिम्बल है। वणु के लिए व वण्णव-पदावली क ऋणी हैं परन्तु वीणा का रूपक रवीन्द्र का प्रयोग है। निराला इन दोनों प्रतीकों के लिए रवीन्द्र के ऋणी हैं यद्यपि वीणा क स्थान पर उन्होंने कभी-कभी 'मिनार' का प्रयोग कर अपनी स्वकीयता का परिचय दिया है

फिर सवार सितार लो।

बाँधकर फिर टाट अपने

प्रक पर भकार दो ।'

वह्नि तथा दीप

मुकुमारमन कहते हैं कि रवीन्द्र के लिए वह्नि दुःखदहन का भस्म निर्वाण पर्याय भस्म-परीक्षा है

ज्वलते डे तोर प्रागुन टारे,

मय किछु ना बरिस तारे

छाई हये से निमये यलन ज्वलते ना प्रार कथु तये ।

निराला न भी वह्नि' का कही-कही इस प्रतीक अर्थ में प्रयोग किया है

मुझे स्नेह क्या मिल सकेगा ?

स्तब्ध, दग्ध मेरे मय का तरु

क्या बहरणाकर खिल न सकेगा ।'

प्रदीप रवीन्द्र के लिए शोक दहन का मंगल प्रतीक है।

प्रामार सकल दुखेर प्रदीप ज्वेले

दिवस गेले करब निवेदन ।

निराला के लिए भी दीप इस भाव का प्रतीक है

जीवन प्रदीप घेतन तुमसे हृष्ठा हमार

ज्योतिष्क का उजासा ज्योतिष्क स उतारा ।'

१ निराला केना

२ निराला भरा

३ निराला : मीनिका

४ निराला केना

तरी

रवीन्द्र के लिए जीवन देवता के पास पहुँचन का वाहन है—

एबार भासिये दिते हूँ अमार एइ तरी ।

तीरे बसे याय ये बेला मरि गो मरि ॥

निराला के लिए भी नौका जगत के पार पहुँचन का प्रतीक है

जीवन की तरी खोल दे रे

जग की उत्ताल तरंगों पर ।^१

प्याला

सुकुमारसन कहत हैं कि रवीन्द्र के अनुसार प्याला जीवन के दख सुख की मकीलता तथा सक्षिप्तता को यजित करता है

मिलनेर पात्रटि पूण ये विच्छेद वेदनाय ।

परंतु इस अर्थ में निराला के प्याला प्रतीक का व्यवहार नहीं हुआ है ।

सुकुमारसन के अनुसार रवीन्द्र ने प्याला का एक और प्रतीक गर्भित अर्थ लिया है

जिमके अनुसार प्याला जन्म मृत्यु यवच्छिन्न मृत्यु जीवन का प्रतीक है

आमार पात्रखाना याय यदि याक भेंगे चुरे ।

निराला ने कबल इस अर्थ में 'प्याला' को ग्रहण किया है

मृत्यु निर्माण प्राण-नइतर

कौन देता प्याला भर भर ?^१

अथवा—

आज प्याले गरल के घन,

कह रही हो हँस—पियो, प्रिय

पियो प्रिय निरुपाय ।

मुक्ति हूँ मैं, मृत्यु मे

आई हुई, न डरो !^१

राखी

रवीन्द्र तथा निराला दाना के अनुसार राखी जीवन के सम्पूर्ण अर्थ की भागा की प्रतीक है ।

रवीन्द्र—तोमार हातर राखीयानि बांधो आमार दखिन—हाते ।

१ निराला कीनिका

२ निराला अनामिका

३ निराला कइ

निराला—उड़ी, तमिऴा की रक्षा की राखी जो बाधी।

शेफालिका

निराला काव्य में रामरत्न भटनागर के अनुसार शेफालिका या शेफाली आत्मा की प्रतीक है। आत्मा के परमात्म विलाम का कवि ने इस सुन्दर रूपक द्वारा स्पष्ट किया है।^१ रवीन्द्र ने भी शेफाला का प्रयोग काव्य में किया है परन्तु उनके लिए शेफाली जस मभी फूल, सफलता के प्रतीक हैं —

ताराय ताराय रचे तारि

वासी कुमुम कुटिबे प्राण ।

निराला के लिए भी फूल सफलता का प्रतीक है और उमीलिये उसका कुम्हाना उनका अभीष्ट नहीं है

मेरा फल न कुम्हला पाये,

जल उलीच कर, मूल सींच कर

लौटे तुम तरु-तरु के सोय।^१

परम्परागत प्रतीक

रवीन्द्र की वृष्णव पदावली से गृहीत प्रतीकों का निराला पर प्रभाव

मुकुमारमेन कहते हैं कि रवीन्द्र रचना में—विशेष कर गान में—अन्तर्भावित प्रतीकों में विनिष्टतम है कविसत्त्व की नायिका-कल्पना। यह कल्पना प्रधानत वृष्णव कविता की राधा के आधार पर निर्मित है और इसमें कालिदास का प्रभाव भी पाया जाता है। पदावली की राधा और मेघदूत की यशकान्ता (एक यश) समा गई हैं कवि चित्त की विरह भावना में। दर्शन पर रवीन्द्र में राधा भाव के सब रसों का इंगित मिल जायगा।^१ निराला भी रवीन्द्र की तरह इन वृष्णव कविता की प्रमभक्ति से प्रभावित हुए थे परन्तु रवीन्द्र की तरह इनकी भी यह विशेषता रही अर्थात् कि रामरत्न भटनागर कहते हैं कि वृष्णव भक्ति-काव्य में इनके नये ही रूपका का प्रयोग निराला ने किया है। राधा वृष्ण और गोपिया के रूपक इतने प्रचलित हो गये थे, और दागनिवों ने उमकी इतनी व्याख्याएँ कर दी थी कि जनता में रम्य-दर्शन का बड़ा भरपूरता में समझ पैदा हो।^१

१ रामरत्न भटनागर कवि निराला एक अध्ययन, पृष्ठ ३३

२ निराला आत्मना

३ मुकुमारमेन बाल्या साहित्यर कथा, नृतीय खण्ड चि ११ सुन्दर, पृ० =०

४ रामरत्न भटनागर कवि निराला एक अध्ययन, पृ० १००

मुकुमारसेन के अनुसार रवीन्द्र की कविता में नवीन प्रतीक की सहायता से मानिनी के प्रति सखि की उक्ति ही प्रकाशित होती है

बाजबे बागि दूरेर हाभोयाय,
चोखेर जले शूय चाभोयार काटबे प्रहर—
बाजबे बुके विदाय पथेर चरण फला
दिनयामिनी, हे गरबिनी ॥

निराला में वष्णव कवियों की यह रोमाण्टिक भावना रामानी प्रताको के माध्यम से प्रतिफलित होती है।

अब नहीं आती पुलिन पर प्रियतमा,
श्याम कृष्ण पर बठने को, निरूपमा
बह रही है हृदय पर केवल अमा,
क्षणिक मिलन के उपरान्त वेदना की याकुलता रवीन्द्र में
आमार काजेर माभे माभे
कानाहासिर दोला तुमि यामते दिले ना ये।
आमाय परदा करे
प्राण सुधाप मरे
तुमि याओ ये सरे
बुझि आमार ध्ययार आडालेते दाडिये याक
ओगो दुख जागानिया

निराला में भी यह वष्णव भावना प्राण हाती है

तुम छोड़ गये द्वार
तब से यह सूना ससार ।'

मुकुमारसेन कहते हैं कि विरह के उपरान्त मिलन है। रवीन्द्र के कविसत्त्व की स्वयंवर-कल्पना वष्णव पदावली की सब तकुज में राधा अभिसार के साथ तथा रघुवंग की राज-सभा की इन्दुमती स्वयंवर के साथ सम्मिलित हो गई है। इसको हम स्वयंवर-अभिसार कह सकते हैं। रवीन्द्रनाथ के काव्य में अभिसार मिलन का प्रतीक है—जीवन-देवता कविसत्त्व के साथ सम्मिलित होता है। अभिसार प्रतीक का प्रयोग निराला में सामान्यतः नहीं मिलता है (केवल अनामिका की 'क्षमा प्रायना कविता में मिलता है और वह भी रवीन्द्र के भावा से अनुप्ररित होते हुए क्षण मिलन के उपरान्त वरना का प्रतीक स्वरूप है— 'जीवन-वन-अभिसार

निगा का यह कसा झबसान !") यद्यपि निराला ने एक स्थान पर इसका स्पष्ट उल्लेख किया है—'तुम्हारी मुधि की अतिम साँस लाव लज्जा की पर्दा-पाड, चलने चली प्रीति अभिसार चपल छिपती पलका की आड है। यह रवीन्द्र के "आजि भडेर राते-तोमार अभिसार' क अनुसूच्य हैं। परन्तु अभिसार के फल स्वरूप मिलन का समारोह रवीन्द्र की तरह नहीं होते हुए भी निराला रवीन्द्र के भावों के उच्छ्रवाम का प्रकट कर देता है। जम रवीन्द्र

तोमाय आमाय मिलन हवे आलोय आकाग मरा,
तोमाय आमाय मिलन हवे बले कुल्ल श्यामल घरा।

तथा निराला

उठी है तरंग
बहा जीवन निस्सग
चला तुमसे मिलन को
खिलने को फिर भर भर ।'

अथवा—

बांगुरी जो बजी
साज कुल की तजी ।
घमुना पुलिन अजन
तन, बसे फूल, जन
मन देखकर तजी ।'

रवीन्द्र के पुराण कहानी आश्रित परम्परावादी प्रतीक से प्रभावित निराला के प्रतीक

पुराण कहानी आश्रित परम्परागत प्रतीक 'मिथ' के अतगत आते हैं। यहाँ 'मिथ' के सम्बन्ध में विवेचन कर लेना उचित होगा कारण निराला ने निव हू तथा देव अमुर जम मिथ का प्रयोग प्रतीकार्थक रूप में किया है जो रवीन्द्र तथा बंगाली गति पूजा का प्रभाव है।

मिथ

मिथ पौराणिक कल्पना-आधार का कहते हैं। बदरनायमिह का कहना है कि जा काम कला अथवा मोदयमूलक प्रयागों के द्वारा करती है वही काम

१ निराला अर्पण

२ निराला अर्पण

‘मिथ कभी विधिया और सस्कारा द्वारा करता था ।’ इस प्रकार मिथ भी काव्य में कल्पनागत रूप वियोग का काम करता है । यहाँ मिथ पर ‘रास्त्रीय आलोचना अपक्षित नहीं है । कवन इतना ही कहना है कि आधुनिक साहित्य में मिथ का प्रयोग तान रूपा मपाया जाता है—

(क) उपमा रूपक, प्रतीक अथवा त्रिम्बक रूप में

(ख) प्रबन्ध का य नाट्यो एव उपधासो क कथानक के रूप में

(ग) कुछ अत्याधुनिक अथ विश्वासपरक धारणाओं के रूप में जिन्हें सुविधा के लिये आधुनिक मिथ कह सकते हैं ।

रवीन्द्र ने प्रबन्ध काव्य तथा नाट्यो क कथानक के रूप में एवं प्रतीक के रूप में मिथ का प्रयोग कल्पनागत रूप वियोग के लिए किया है । रवीन्द्र के पुराण कहानी आश्रित प्रतीक शिव रुद्र का प्रयोग निराला ने भी किया है । रवीन्द्र के लिए सुकुमारमन कहते हैं—‘शिव सुन्दर रूप के प्रतीक हैं । निराला के लिए भी शिव सुन्दरता का प्रतीक है जो रूनी डान का हरा भरा कर देता है

मधु व्रत में रत बधू मधुर फल

देगी जग को स्वाद तोष दल

गरलामृत शिव आमुतोष रल

विश्व सकल नेगी,

वसन वासन्ती सेगी ।’

सुकुमारमन के अनुसार रू रवीन्द्र के लिए ताण्डव उमत्तता का प्रतीक है जो गपन क्रोध दाह संघ पाय पाय को ध्वंस कर भुवन को माजित करता है तथा जीवन की भा माजना करता है । निराला का रुद्र प्रतीक भी इसी भाव का मप्रपण करता है

नाचो हे रुद्रताल,

आँचो जग श्रुजु अराल

भरे जीव जीण-गीण

उद्भव हो नव प्रकीण

करने का पुन तीण

हों गहरे अतराल ।’

१ कल्पनाथमिद कल्पना और द्वायात्रा

२ निराला गालिका

३ निराला अरारथना

रवीन्द्र का दूसरा पौराणिक प्रतीक उदशी का भाव निराला में नहीं मिलता है यद्यपि बनबेला में उमका विविध सकेत मिल जाता है जो अन्त की सुरभिवास सिर पर लहर उठती है

मन्त्र पर लेकर उठी अन्तल की अनुल सास,
उषों मिद्धि परम,
भेदकर कमजीवन के दुस्तर बनेंग, सुषम
आई ऊपर,
जसे पारकर क्षीर सागर
अप्सरा सुधर ।^१

जहाँ तक रवीन्द्र के अथ पौराणिक कल्पनागत कथानक का सम्बन्ध है वहाँ निराला रवीन्द्र से अधिन प्रभावित नहीं हुए हैं। निराला की 'राम की शक्तिपूजा' में जो प्रचलित 'मिष' का आधार है वह रवीन्द्र का प्रभाव नहीं है बरन बगल की 'गतिपूजक सप्रणय' का प्रभाव है और इसमें अतिरिक्त विष्णुकानन्द का प्रभाव भी है। कान्दनाथसिंह कहते हैं कि निराला ने इस 'मिष' को प्रतीकात्मक रूप देकर मानव जीवन में जागृत रहने का न सत और अमृत स्वी और धामुरी गतिपूजक' अपराजय समर का बड़ा भव्य चित्र खींचा है। बीच में राम का एक मो घाट इनीवरा में न घटित एक का महसा अहस्य हो जाना कल्पना का उत्कृष्ट प्रमाण है।^२

रवीन्द्र के आध्यात्मिक प्रतीका द्वारा अनुप्रेरित निराला के प्रतीक

आध्यात्मिक प्रतीक 'धामि-नुमि मा' सुकुमारमन के अनुमार रवीन्द्र के लिए कमल अर्थात्मीमा कवितात्व, जीवन दवता तथा विश्वसुवन का प्रतीक है। "धामि-नुमि" अन्तर्यामी जीवन-देवता का इतम्प है जो अद्भुत का हो दृष्टि भद है

सुमि धन छोड़ आकाश उदार
धामि धेन छोड़ क्षमीय पापर,
आकुल करेदे माभयाने तार
आनन्द-पूर्णिमा ।
एकत्रि प्रेमेर—माभारे मिनेदे

१ निराला अन्त

२ रामकान्दनाथसिंह कवि निराला एक अहस्य, पृ० १२०

३ कान्दनाथसिंह कवि अन्त और आकाश, पृ० १२८

सकल प्रेमेर स्मृति,

सकल कालेर सकल कविर गति ।

निराला म 'तुम में क इम आध्यात्मिक प्रतीक वा प्रयाग प्राप्त होता है
तुम नभ हो में नीलिमा'

अथवा—

तुम्हारा में तुम्हारा ता तुम्हारा ही विपुल धन जन
समझकर मी न समझा मन, मिटाओ मोह घन गौरव ।'

रवीन्द्र का तुम अपने आलोक स 'में व अधकार को दूर करता है और
निराला म भी तुम धाकर सातप्त 'में' को उपहार से खुश करता है ।

यथा—

रवीन्द्र—

तोमार एइ लोके लोके प्रदीप ज्वाला,
आमार एइ आंधार टुकु धुचले परे ॥

तथा निराला—

विश्व पादव छाया मे म्लान—
मन बटा, व्याकुल थे प्राण,
तिमिर तर प्रभा दृष्टों मे ज्ञान
उत्तर आई तुम ले उपहार ।'

निराला के कुट्ट प्रतीक विवेकानन्द से प्रभावित हैं जम अद्वैत ब्रह्म को 'मा
रूप म सम्पादित करना । रवीन्द्रनाथ की अध्यात्म चिन्ता म जीवन श्रेयता को
मातृरूप म सूचित नहीं किया गया है । सुकुमारसन कहते हैं कि रवीन्द्र म यह
सबसे बड़ा 'अ-वगालीत्व' का परिचय है यद्यपि रवीन्द्र म मातृदेवता का अध्व
रचा ही नहीं गया यह गावना मूर्त्ता होगी । परन्तु वहाँ 'मा' बजल देश
प्रम व स्वर म जननी को आह्वान करना है—

आय मागो यात्रा करि जगतेर काजे
सुच्छ करि निज दु ख गोक ।

निराला म भी यह भावना प्राप्त है—

१ निराला परिचय

२ निराला अग्निमा

३ निराला गादिका

४ सुकुमार मेन बंगला साहित्येर इतिहास, तृतीय खण्ड (द्वितीय संस्करण) पृ० ३६०

घाय कर दे भा वय प्रसून
दिला जग ज्योतिमय, मुख चूम ।^१

परन्तु 'प्रतीक' नहीं वह सक्त है। प्रतीक रूप में निराला ने जहाँ 'मा' का प्रयोग किया है वह साधारणतया विवकानन्द के अद्वैत ब्रह्म का प्रतीक है—

एक ही आशा में सब प्राण
बाँधे मा, सत्री के सेवान ।^२

बिम्ब (चित्र कल्पना)

कल्पनागत रूप विद्याम के अन्तर्गत तीसरा सूत्र है बिम्ब अथवा चित्र कल्पना। आई० ए० रिचर्ड्स ने इसकी कल्पना के प्रमुख उपकरणों में एक माना है।^३ बिम्ब तथा प्रतीक में भेद बनाने हुए कदारनार्थसिंह ने कहा है कि बिम्ब अप्रत्याक्ष अथवा स्वच्छन्द (arbitrary) और नाना अर्थ-व्यञ्जक हान हैं जबकि प्रतीक नियत और अचूक रूप से एकाध-व्यञ्जक हान हैं।^४ रसा का स्पष्टीकरण येट्स (Yeats) के शब्दों में हम प्राप्त हो जाता है। उनका कहना है कि एक बिम्ब जब एक ही कवि अथवा कलाकार की रचना में बारबार प्रयुक्त होता है तो उसमें प्रतीक की-सी निश्चितता आ जाती है और उसकी उत्तर कालीन रचनाओं में वह अमूर्तिरूप में प्रतीक हो जाता है।

पर प्रश्न है, बिम्ब है क्या ?

मिस्त्रि डे लुइस (cecil de lewis) ने इसकी परिभाषा देते हुए लिखा है कि काव्यगत बिम्ब स्वयं मानव मन का ही दूसरा नाम है जो प्रत्येक जीवित अथवा मृतवस्तु के साथ अपने सम्बन्ध की घोषणा करता है और इस घोषणा का अच्छी तरह विज्ञान करता है।^५ इस प्रकार कवि की जीवनानुभूति ही बिम्ब को प्रकट करती है जो जीवन तथा प्रकृति से सम्बन्धित है। एड्रियता मूर्तिविधान की अनिर्वाय विधिपता है। पारचात्य आलाचका ने बिम्ब के मुख्यतया तीन गुण माने हैं—

१ निराला गानिका

२ निराला गानिका

३ Richards Principles of Literary Criticism Page 237

४ कदारनार्थसिंह 'कला और अद्वैत', पृ० ७३

५ The poetic image is the human mind claiming kinship with everything that lives or has lived and making good its claim Poetic image Page 25

६ Evocativeness Freshness Intensity

(१) पूव स्मृति का जगद न की शक्ति (२) नवीनता (३) तीव्रता ।

बिम्ब केवल वस्तु का 'चित्रण' ही नहा करता बरन अपनी सत्ता स कवि की किमी विशेष मनोश्या और दृष्टिकोण की भी सूचित करता है ।

निराला क बिम्बो के आधार प्रकृति और मुख्यतया प्रकृति का विराटत्व रामानो भावावेश और वामना का उदात्त प्रवाह तथा आधुनिक जीवन क प्राय प्रत्यक्ष क्षेत्र हैं । कारण मनुष्य की ऐन्द्रिय चेतना का तृप्त करना तथा उसका रागतत्रियो का भकृत करना बिम्ब का ही काम है । इस दृष्टि से निराला म ऐन्द्रियता तथा मूर्तिमत्त की प्रधानता है । कदारनाथसिंह कहते हैं कि अकल निराला ही ऐस है जिनकी कविताया म अत्याधुनिक सम्यता तथा सस्कृति के क्षेत्रा स गृहीत बिम्ब भी कभी कभी मिल जाते है । निराला क इस बिम्ब विधान पर रवीन्द्र का प्रभाव मुख्यतया है । जहा विराटत्व का प्रश्न है वहा रवीन्द्र क माध्यम स कानिदास का प्रभाव है और कही कही अग्रजी प्रभाव भी रवीन्द्र तथा अमिषकुमार चक्रवर्ती क माध्यम स उनके काय म आया है जस अत्याधुनिक सम्यता तथा सस्कृति क क्षेत्रा स गृहीत बिम्ब । जहाँ प्रेम की वासना क उदात्त प्रभाव का बरण बिम्ब क माध्यम स किया गया है वहाँ भी चण्डीदास विद्यापति का प्रभाव है जा रवीन्द्र के माध्यम स उनके काय म प्रस्फुटित हो उठा है ।

इसके विवेचन क लिए हम बिम्ब क लभिन तथा उपलभित वर्गीकरण का ग्रहण करेगे ।

लक्षित चित्र योजना

लक्षित चित्र योजना म बरण क द्वारा चित्र प्रस्तुत किया जाता है । गल वहा पर रेखा और रंग का काम करते हैं । इसक सामान्यत तीन भेद होत हैं—

(क) मामूहिक चित्र म साधारणतया नीड, प्रकृति अथवा गिकार आदि का मामूहिक चित्र प्रस्तुत किया जाता है । इस प्रकारकी चित्र योजना म निराला का मौलिकता की छाप अधिक स्पष्ट है । जस खुला आसमान म—

बहुत दिनों बाद खुला आसमान
निकली है घुप हुआ खुग जहान ।
दिलीं दिगाएँ भन्के पेड,
चरने की घसे डोर गाय भस भेड,

खेलने लगे लड़के छेड़ छेड़ —

लडकियाँ घरा को घर भासमान ।^१

रवीन्द्र की कविता में इस प्रकार की सामूहिक चित्र योजना भी प्राप्त हो जाता है जहाँ निराला से नहीं अधिक गभीरता परिलक्षित होती है—

तखन एमनि करेइ बाजबे बाणि एइ नाटे,

काटबे गो दिन येमन छाजो दिन काटे ।

घाटे घाट सपार तरी एमनि सेदिन उठब भरि

सरये गारि, खेलब राखाव आइ माटे ।

(ख) ललित व्यक्ति चित्र योजना का सुस्पष्ट चित्र निराला की श्रम लखका तथा बुद्ध के प्रति श्रद्धाजलि में प्रकट हुआ है । यद्यपि रवीन्द्र ने भी ऐसी ही श्रद्धाजलियाँ कवि सत्यत्रिपायदत्त तथा अरविन्द के प्रति अर्पित कर कविताएँ लिखी हैं तथापि निराला की मौलिकता ही इन चित्रों में प्रकट हुई है ।

(ग) जहाँ तक ललित प्रकृति चित्रण का प्रश्न है निराला रवीन्द्र से बहुत ही प्रभावित हुए हैं । और कवलय मान प्रकृति चित्रण ही नहीं बल्कि प्रकृति चित्रण के माध्यम से वातावरण के निर्माण का कार्य निराला ने बहुत ही सुन्दर तथा सुष्ठु ढंग में किया है । निराला मृगान्त का चित्र अर्पित करते हुए वातावरण के गान्धर्व तथा विषादमय भाव को भी चित्रित करते हैं—

हूवा रवि अस्ताचल,

सध्या के हंग छल छल ।

स्तब्ध अथकार सघन

मन्द गन्ध मार पवन ,

ध्यान सन्न नग गगन

भूदे पल नीमोत्पल ।^१

रवा इ भाव्य लक्षित चित्र-कल्पना द्वारा सध्या का विषादमय चित्र अर्पित करते हैं अपनी एक भावना में—

रवि अस्त याव

अदृश्यत अथकार आकाशात आलो ।

सध्या नत आति

धीरे धीरे दिवार पञ्चात

१ निराला अनामिका

२ निराला मयिका

उपलक्षित चित्र योजना के अन्तर्गत उन प्रतीक चित्रों का वर्णन भी अप्रतिष्ठ है जो सम्पूर्ण चित्र को उभार कर पाठक के सम्मुख प्रस्तुत कर दते हैं। इसके साथ ही हम अभी अभी ऊपर कह आये हैं कि ये चित्र कवि की प्रेरणा के एक स्पर्श से उभर आते हैं। इनके द्वारा चित्र का चरम बिन्दु स्वतः उभर आता है। राम की शक्तिपूजा में निराला ने "जलती एक मशाल" प्रतीक का वर्णन कर सम्पूर्ण चित्र के गाम्भीर्य तथा व्यञ्जित अर्थ का प्रकट किया है। रवीन्द्र भी 'शाहजहान' में 'नयनेर एक बिन्दु जल' प्रतीक का प्रयोग कर सम्पूर्ण चित्र को उसके व्यञ्जित अर्थ को, सफलता के साथ प्रकट करते हैं। यहाँ उपलक्षित चित्र योजना के उक्त प्रमुख तीन गुण संयोजित मिलते हैं। भाव और कल्पना का यहाँ पूरणरूप से सामंजस्य प्राप्त होता है।

निराला के चित्र या बिम्बों में धूमिलता अस्पष्टता और अनव प्रकार की विकृतियाँ पाई जाती हैं किन्तु वह निराला के अर्थात् कल्पना के विस्तारित वर्ग के कारण हुआ है। अरथाधुनिक सम्प्रदाय तथा संस्कृति के क्षेत्र से गृहीत बिम्बों के अर्थ के समय इस प्रकार की धूमिलता अधिक प्रकट हुई है। रामरतन भटनागर इन चित्रों को dream fantasy के अन्तर्गत रखते हैं। उनका कहना है कि कवि ने अपने अर्धचेतन (subconscious ego) का मुक्त चलने दिया है।^१

कलागत में शरत् तथा स्फटिक शिला के चित्र दसो ढंग के हैं। यद्यपि यह प्रभाव जसाकि रामरतन भटनागर का कर्ना है युरोपीय बिम्बवादी स्कूल (इमजिस्ट स्कूल) का है। रवीन्द्र के स्थान पर नई पीढ़ी के नरेश अमियकुमार चक्रवर्ती आदि ने बगला में हमका प्रयोग किया था। हो सकता है कि निराला ने वही से प्रेरणा ग्रहण की हो। यद्यपि रवीन्द्र की बहुतन्त्री कविता में आधुनिक समाज के चित्र अर्थात् चित्रित हुए हैं जहाँ कवि का तटस्थता तथा भाव और कल्पना का सामंजस्य सबसे अधिक दर्शनीय वस्तु है वह निराला के इन चित्रों में नहीं है।

कलागत रूप विन्यास

कल्पनागत रूप विन्यास के अन्तर्गत तीन सूत्रों यथा रूपक, प्रतीक और बिम्ब पर विवचन करते हुए हमने यह देखा कि छायावाद कवियों की तथा मुख्यतया निराला की कविताओं की मूल प्रेरणा रूढ़ि में मुक्ति पाना था। "सर्व सम्बन्ध में डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि मानवीय दृष्टि के कवि का कल्पना अनुभूति और चिंतन के भीतर से निकली हुई व्यक्तिक अनुभूतियों के आवरण की स्वन

समुच्चित्त अभिव्यक्ति बिना किसी आशय की धीर बिना किसी प्रयत्न के स्वयं निकल पड़ा हुआ भावस्रोत ही छायावादी कविता का प्राण है।^१ और इस व्यक्ति-अनुभूति से प्रेरित जगत् कि हम "व्यक्ति-धोर कृति-व" अध्याय में कह चुके हैं। छायावादी कविता ने काव्य के अन्तरगत सौन्दर्य का प्रकाशन किया। और इस प्रकार छायावादी कवि ने आत्माभिव्यक्ति द्वारा सौन्दर्यानुभूति का चित्रण करना काव्य का लक्ष्य समझा है। डा० रामभूनाथसिंह कहते हैं कि सौन्दर्य का भी व वक्रातिवादिया या अभिव्यजनावाद्या की तरह हां बाह्य और वस्तुगत नहीं, आत्मगत और आन्तरिक मानते थे। व वस्तु के स्थूल गारोरेक सौन्दर्य से अधिक उसके सूक्ष्म परां सौन्दर्य का महत्त्व दते थे।^२ इस सूक्ष्म परां सौन्दर्य को महत्त्व देने के कारण जिस प्रकार उन्होंने अपने काव्य का कल्पनागत रूप विन्यास द्वारा सजोया उसी प्रकार कलागत रूप विन्यास में भी उनका कल्पनामयी सौन्दर्य भावना ही काय करती रही। इस कारण ही व परम्परागत कला विन्यास में बिछुटा गया। परम्परागत अलंकार पद विन्यास छंद, काव्य रूप सभी से मुक्ति पाना ही उनका काम्य रहा और इसके पीछे उनकी नवीन सौन्दर्यानुभूति काय करती रही।

अलंकार

नामवरसिंह कहते हैं कि रोनिवाल और छायावादी कविता के रूप विन्यास का अन्तर अलंकारों की बहुलता और यूनता का नहीं बल्कि उन अलंकारों के पीछे काम करने वाली रुचि अथवा सौन्दर्य भावना का है। एक के पीछे मध्य युगीन रुचि है तो दूसरे के पीछे आधुनिक रुचि।^३ इस आधुनिक रुचि का प्रसार निराला के काव्य में मुख्यतया रवी के माध्यम से हुआ। आधुनिक रुचि के प्रभावस्वरूप निराला में चार प्रकार की अलंकार-याचना का बहुलता नितलाई पड़ता है—पहला उपमा—त्रिमम आकार-नाम्य से अधिक प्रभाव-नाम्य पर धन दिया गया। प्रभाव-नाम्य की विशेषता बतसात हुए गुणवत्ता कहते हैं कि मित्र कवियों की दृष्टि एक ही अस्तित्व की धार जाती है जो अस्तित्व के समान ही सौन्दर्य, दीप्ति कानि, कीमलता प्रचंडता भाषणता उपमा, उदासी अवादाद विप्रेता इत्यादि की भावना जगाते हैं।^४ प्रभाव-नाम्य के अन्तगत निराला ने

१ हजाराप्रवाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य, पृ० ४६२

२ हिन्दी काव्य निबंध, प्रथम अध्याय

३ रामभूनाथ सिंह छायावादी युग पृ० २६१

४ नामवरसिंह छायावाद, पृ० ८६

५ रामभूनाथ सिंह हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० ६५०

मनुष्य तथा प्रकृति के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का काव्य इन्हें उपमय तथा उपमान मानकर किया। लघु तथा विराट् उपमाओं की याजना भी की। दूसरा, मानवीकरण, तीसरा विगणन विषयय तथा चौथा ध्वनय-यजना। इन सब पर रवीन्द्र का प्रभाव बहुत ही स्पष्ट परिलक्षित होता है जिसका बरान अग्रहम प्रस्तुत करते हैं।

उपमा

उपमाया की याजना से कवि का कल्पना शक्ति का पता चलता है। इसी कारण आई० ए० रिचर्ड्स ने अलंकारों को कल्पना व उपादाना में एक माना है। उनका कहना है कि अलंकारों के प्रयोग में भी कल्पना ही कार्य करती है। रूपक उपमा उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का निर्माण इसी कर्मगत आता है।^१ निराला ने उपमा व अतगत प्रभाव साम्य पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया है। यथा—बादल के आगमन की ध्वनि का प्रभाव प्रस्तुत करने के लिए रथ के पहियों की घघर ध्वनि का उपमान प्रस्तुत किया गया है—

तुम आए

रथ का घघर—नाद

तुम्हारे आने का सवाद

ऐ त्रिलोक जित ! इन्द्र—धनुधर !^२

रवीन्द्र ने भी काल-बसाखी बादल के लिए यही उपमान प्रस्तुत किया था—

रथ चक्र घघरिया ऐसेछ विजयी राज सम

गर्वित निभय—

बख्त्रमन्त्रे की घोषित बुभित्ताम ना—इ बुभित्ताम,

जय तब जय ।

‘तुलसीदास’ में निराला ने रत्नावली का ‘गान’ की उपमा देकर एक ऐसी रूपक प्रस्तुत किया है जो तुलसीदास का और भी गौकान्तुर बना देता है—

वह आज ही गई दूर तान

इसलिए मधुर घट और गान ।^३

१ The use of figurative language is frequently all that is meant. People who naturally employ metaphor and simile especially when it is of an unusual kind are said to have imagination. Principles of literary Criticism P. 239

२ निराला परिमल

३ निराला तुलसीदास

निराला के कला-पक्ष पर बंगला का प्रभाव

रवीन्द्र—

अधिसन्ध्या,
अनन्त आकाशतले बसि एकाकिनी,
केश एलाइया

निराला—

सुलाती उन्हें अक पर अरने,
दिललाती फिर विस्मृति के वह कितने मोटे सपने ।
अद्वैतरात्रि की निश्चिता मे हो जाती वह लीन,

रवीन्द्र—

अधिसन्ध्या, स्नेहमय तोर स्वप्नमय कोले
साइ आसि आसि निति निति,
स्नेहेर आचल दिये प्राण मोर दिस् डेके,
एने दिस् अतीतेर स्मृति ।

अध्या व 'दोष-सिखा' ले उतरने का वणुं निराला ने 'आग्रह' कविता मे विलुल
उसी प्रकार किया है—

उतर रही है लिए हाथ मे प्यारा तारा-दीप ।'

यामिनी के केशा का वणुं भी निराला ने बहुत-से स्यानी पर किया है—
खुले केश अशेष शोभा भर रहे ।'

इसी प्रकार तरगा के मानवीकरण की पद्धति निराला ने रवीन्द्र से ग्रहण की
है जो अपनी उदात्त रागिनी छेड़ रही है—
निराला—

किस अनन्त का नीला अंचल हिला हिलाकर
आती हो तुम सजी मंडला कर ?
एक रागिनी मे अपना स्वर मिला-मिलाकर
गाती हो ये कैसे गीत उदार ?'

रवीन्द्र—

बलेछो ये निरद्वेष सेइ धता तोमार रागिणी,
शब्दहीन मूर ।
अन्तहीन मूर ।

1. निराला : परिचय
2. निराला : अररा
3. निराला : अररा

बीणा बजी;
विश्व यह हो गया साय, द्विविधा लजी ।
खुल गये डाल के फूल, रंग गये मुख
बिहग के, घूल मग की हुई विमल सुख;^१

रवीन्द्र की कविता में प्रभात बीणा को बजाकर ससार को जगाता है—

अमनि प्रभात तार बीणा हाते बाहिरिया भासे,
दून्य भरे गाने,
ऐश्वर्य छड़ाये देय मुक्तहस्ते आकाशे आकाशे,
क्लाम्बित नाहि जाने ।

मानवीकरण

गिरीशचन्द्र तिवारी कहते हैं कि मानवीकरण की प्रवृत्ति हिन्दी साहित्य में प्राचीनकाल से चली आ रही है। फिर भी इस भ्रूलकार में उतनी कुशलता नहीं आ पाई थी जितनी छायावादी युग में आ सकी। इसका एकमात्र कारण पाश्चात्य प्रभाव है^१ परन्तु यह प्रभाव केवल पाश्चात्य प्रभाव नहीं बरन् निराला पर इसका मूलगत प्रभाव रवीन्द्र का है। उपर्युक्त 'प्रभात' का मानवीकरण स्पष्टतया रवीन्द्र का प्रभाव है। इसके और भी दृष्टान्त निम्नलिखित है—

निराला—

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या—मुन्दरी परी-सी
धीरे-धीरे-धीरे,^१

रवीन्द्र—

नामै संध्यातन्द्रालसा सोनार आंचल खसा
हाते दीपशिखा ।

निराला—

गुंथा हुआ उन घुंघराते काले-काले बालों से
हृदय—राज्य की रानी का यह भरता है अन्वियेक ।

१. निराला : बेना

२. गिरीशचन्द्र तिवारी कवि निराला और उनका काव्य-साहित्य, पृ० १७०

३. निराला - परिमल

निराला के कला-पक्ष पर बगला का प्रभाव

शब्द बधा ध्वनिमय साकार" रहे। गिरीशचन्द्र तिवारी इन सम्बन्ध में कहते हैं कि इससे काव्य में संगीतात्मकता की वृद्धि होती है तथा एक प्रकार के माधुर्य का अनुभव होता है। इससे चित्रमयता, नादव्यजकता एवं भाव-व्यजकता की वृद्धि होती है। यह अलंकार रीतिकालीन परम्परा के काव्यों में भी प्राप्त होता है। इसमें काव्य में छिपी चित्र-भाषा स्पष्ट होती जाती है।^१ नामवरसिंह छायावादी कवियों की इस कला के विषय में लिखते हैं कि शब्द-रचना सम्बन्धी संगीत का जहाँ तक प्रश्न है छायावादी कवियों ने अलग-अलग एक-एक शब्द के संगीत पर ध्यान रखने के साथ ही सम्पूर्ण शब्द-मगति अथवा शब्द-गुम्फन के संगीत पर भी ध्यान रखा। शब्द-संगति बँटाने में इन कवियों ने स्वर अथवा व्यंजन सम्बन्धी अनुप्रास का सहारा लिया है। निराला में यह प्रवृत्ति अधिक प्रबल दिखाई पड़ती है, जैसे—

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सध्या-सुन्दरी परी-सी
धीरे-धीरे-धीरे।

यहाँ "दिवसावसान-आसमान", "समय मेघमय" तथा "सुन्दरी परी-सी धीरे" में स्वर और व्यंजन सम्बन्धी अनुप्रास की छटा देखने योग्य है।^२ कहना न होगा कि यह प्रभाव सम्पूर्ण बगला-काव्य का निराला पर है। रवीन्द्र ने इस प्रकार ध्वन्यार्थ-व्यंजना की अपूर्व संयोजना अपने काव्य में की है—
नाम सध्या तन्द्रालसा, सोनार-घ्रांचल-खसा,
हाते दीपशिला।

अथवा—

दीपशिलासम कपि भीत मालोवासा।

ध्वन्यात्मक व्यंजना रवीन्द्र-काव्य की एक विशेष निधि है। इस अलंकार के प्रयोग में कवि ने ससृष्ट शब्द का अत्यधिक सहारा लिया है और निराला ने बिल्कुल यही किया है—

रवीन्द्र—शिला शानि शानि पश्चिमे लसे।

निराला—अल शानि-शानि जूल पर चढ़ता साता पड़ाह।^३

^१ गिरीशचन्द्र तिवारी 'कवि निराला और उनका काव्य साहित्य', पृ० १६८
^२ नामवरसिंह : छायावाद, पृ० १०६
^३ नामवरसिंह : पश्चिम

इस प्रकार मानवीकरण के उदाहरण निराला में बहुलता से प्राप्त हो जाते हैं और इन पर रवीन्द्र का प्रभाव स्पष्टतः दिखाई पड़ जाता है।

विशेषण विपर्यय

इसमें विशेष्य के गुण का विशेषण पर आरोप होता है। इसमें एक ऐसे विशेषण की सहायता ली जाती है, जिसमें विशेष्य प्रायः अरूप रहता है। उसमें एक ऐसा विशेषण लगा दिया जाता है कि एक अरूप चित्र सहसा पाठक के सामने आ जाता है :—

घरा के खिल्ल दिवस के दाह !

बिदाई के अनिमेय नयन !

विशेषण विपर्यय से काव्य में कलात्मक बोध तथा चित्राकन शैली द्वारा बातों को ग्रहण कराने में बड़ी सहायता मिलती है। यह अलंकार निराला में बहुलता से नहीं मिलता, क्योंकि ये नाद-व्यजना के कवि हैं। तो भी कुछ उदाहरण प्राप्त अवश्य हो जाते हैं

किस विनोद की तृपित-गोद में,

आज पौछती वे हग नीर ।

अथवा—

शियिल सेज निद्रित जीवन ।

अथवा—

बल घरणों से व्याकुल पनघट

कहाँ आज वह घुन्दाघाम ।

डा० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय कहते हैं कि उक्त नूतन प्रयोग कवि ने रवीन्द्र की कविताओं से प्रेरणा लेकर किये हैं।^१ एक उदाहरण प्रस्तुत है—

निराला—यह निशीथ की नग्न वेदना

रवीन्द्र—फैलिछे बिरह छाया आवण तिमिर ।

ध्वन्यर्थ ध्वंजना—

नाद-व्यजना विशेषतः समास-शैली वाले कवियों के काव्यों में मिलती है। “मेरे गीत और बला” निबन्ध में निराला जी ने ससृष्ट के “क्षण बल” और हिन्दी के “स म ब ल” संगीत की जो रोचक व्याख्या की है, वह ध्वन्यर्थ ध्वंजना वाली प्रकृति की सूचक है। उनके लिए “बर्ण-चमत्कार” इसी में था कि “एक एक

१. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय : महाकवि निराला काव्य बला और कृतियाँ, पृ० ११८

के माध्यम से प्रकट करना ही काव्य का धर्म है। जिसको प्रकट करना है वह लेखक की अपनी सृष्टि है इसीलिए उसकी भाषा भी लेखक को अपने आप ही प्रस्तुत करनी पड़ती है, शब्द-योजना तथा शब्दार्थ-व्यञ्जना से उस भाव को वही रूप देना पड़ता है। भाव जिस प्रकार अभिनव और मौलिक होता है, शब्द विन्यास तथा वाक् पद्धति को भी वही अभिनव रूप देना आवश्यक है। भाषा की शक्ति उमकी प्रकाश-शक्तता है और युग के भावों की अग्रगति के साथ ही कदम बढ़ाकर भाषा यदि चल न पाये तो कवि-मानस की सृष्टि में बाधा आ जाती है। द्विवेदी युग के इतिवृत्तात्मक काव्य के लिए भाषा का जो रूप प्रयुक्त हो रहा था, उसमें वह शक्ति न थी जो छायावादी नूतन सूक्ष्म भावनाओं के भार को वहन कर सके। अतः जैमि दा० विश्वम्भरनाथ कहते हैं कि छायावादी कवियों को भाषा का बहुत कुछ रूप गड़ना पड़ा, बंगला की पद्धति पर एक और कोमलकान्त पदावली का सन्निवेश हुआ और दूसरी ओर अंग्रेजी के अनुकरण पर लक्षणात्मक प्रयोगों का प्रचलन हुआ।^१ डा० श्रीकृष्णलाल ने इस सम्बन्ध में कहा है कि स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन के द्वितीय चरण में काव्य-भाषा का आदर्श विलुप्त बदन गया और एक समृद्ध भाषा संसार का विकास होने लगा, जिसमें सस्कृत-नूतन तथा ध्वनि-व्यञ्जक शब्दों का प्राधान्य था। वह चमत्कारपूर्ण और आलोकमय विशेषणों तथा चित्रमय और ध्वन्यात्मक शब्दों का युग था।^२ परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि द्विवेदी-युग में सस्कृत-नूतन तथा ध्वनि-व्यञ्जक शब्दों का प्रयोग ही नहीं हुआ। परन्तु द्विवेदी-युग में इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करने में उस युग के साहित्यकार भाव को प्रेयणीय नहीं बना सके कारण वे यह नहीं समझ सके थे कि कविता की भाषा में भावात्मकता की ही प्रधानता रहती है। आर्द० ए० रिचर्ड्स ने अपनी पुस्तक में यही बात कही है।^३ भाषा शब्दों की सख्या से घनी नहीं होती, घनी होती है उनकी भाव-व्यञ्जकता से। निराला ने भाषा के सम्बन्ध में कहा है—

“भाषा बहुभावात्मिका रचना की इच्छामात्र में बदलने वाली देह है। रचना युद्ध-कौशल है, भाषा तदनु रूप अस्त्र। इस अस्त्र का पारंगत वीर साहित्यिक ही यथामय समुचित प्रयोग कर सकता है। जानि को भाषा के भीतर से भी देख सकते हैं। बाहरी दृष्टि से देखने की अपेक्षा साहित्य के भीतर से देखने का महत्त्व

१. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय : महारवि निराला : काव्य कला और दृष्टियाँ, पृ० २७४
 २. श्रीकृष्णलाल : अपुनिक हिन्दी साहित्य का विश्लेषण
 ३. But it may also be used for the sake of the effects in emotions and attitude produced by the reference in occasions. This is the emotive use of languages—Principles of Literary Criticism, P. 267

अथवा—

रवीन्द्र— अरुणमयी तरुण उषा जागाये दिल गान ।

निराला— तरुण-प्ररुण-धीवन-प्रभात विज्ञान ।^१

अथवा—

रवीन्द्र— ककण भंकार नूपुर बजे ।

निराला— कण-कण कर ककण, प्रिय
किए-किए रव किंकरी ।^२

अथवा—

रवीन्द्र— गुरु गुरु मेघ गुमरि गरजे गगने गगने, गरजे गगने ।

निराला— भूम भूम मृदु गरज-गरज घनघोर ।^३

अथवा—

रवीन्द्र— रथेर घर्घरमन्त्रे ।

निराला— रथ का घर्घर नाद ।^४

अथवा—

रवीन्द्र— आज वारि भरे भर भर मरा बावरे ।

निराला— भर भर भर भर धारा भर ।^५

निष्कर्षतः निराला के श्लकारो पर बगला-काव्य का प्रभाव काफी है जो रवीन्द्र-काव्य के माध्यम से उनके काव्य में संप्रेषित हुआ है । यद्यपि निराला ने इन प्रभावों को, जैसा कि उपर्युक्त दृष्टान्तों से पता लग सकता है, आत्मसात् कर अपना बना लिया है ।

पद-विन्यास

पद-विन्यास के अन्तर्गत भाषा और शैली के प्रश्न पर विवेचन करेंगे । निराला के पद विन्यास पर भी रवीन्द्र का प्रभाव विस्तारित है । काव्य-सृष्टि के दो उपादान हैं, कवि का मन तथा काव्य की भाषा । भाषा में हम शब्द-विन्यास पर विचार करते हैं । शब्द-समूह रूप विन्यास का मूल घन है । मन के भावों को भाषा

- १ निराला परिमल
- २ निराला : गीतिरा
- ३ निराला : परिमल
- ४ निराला बही
- ५ निराला : गीतिरा

की दृष्टि में इसका अनास प्राप्त होता है—निराला की पहली कविता “जहाँ की कर्ना” के पदों में बंगला-कविता की पदावली का अनुगुञ्ज स्पष्ट सुनाई पड़ता है, विशेषतः उनके आरम्भ में—

विजन-वन-वन्तरी पर
सोनी थी मुहागनरी
स्नेह स्वप्न मग्न-अमल-ओमल तनु तरणो
लुही की कली,
हृग बंद किए, सिधिल, पत्राक मे ।

नामवरतिह कहते हैं कि यहाँ “विजन-वन-वन्तरी”, “स्नेह-स्वप्न-मग्न”, “अमल-ओमल-मग्न” अथवा अमले चरणों में “कुज-लता-पुज” और “उपजन-सर-मरित गहन गिरि वानन” जैसे पदोच्चय रवीन्द्रनाथ की कविताओं के पदों की गुंज में भरें हैं। ये पद-मूह एक ही रवीन्द्रनाथ की किसी कविता में मिले ही न मिलें और निराला जी ने जान-बूझकर एक ही जगह से उन्हें भले ही न उठा लिया हो, परन्तु हममें कोई सन्देह नहीं कि ऐसी पद-रचना का प्रेरणा स्रोत वही है, यहाँ तक कि इनका उच्चारण भी थोड़ा-सा बंगला की मुख-मुख-परम्परा की अपेक्षा रहता है। निराला की “मन्नाट एडवर्ड अष्टम के प्रति” कविता को रवीन्द्रनाथ की ‘माहजहा’ कविता के साथ पढ़ने से दोनों के ध्वनि-साम्य का पता चलता है।

निराला—सम्राट् ! दिख्ताया
सत्य कीनसा वह मुग्धर ।
जो प्रिया, प्रिया यह
रही सदा ही अनामिका
रवीन्द्र—हे सम्राट् कवि
एइ तब हृदयेर छवि
एइ तब नव मेघदूत
अपूर्वं अद्भुत
छन्दे गाने
उठियाछे अलक्षयेर पाने
येथा तब विरहिणी प्रिया
रयेछे मिनिषा

अधिक होगा।^१ निराला ने और एक स्थान पर भाषा के सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है “प्रकृति की स्वाभाविक चाल से भाषा जिस तरफ भी जाय—शक्ति-सामर्थ्य और मुक्ति की तरफ या सुखानुशयता, मृदुलता और छन्दनालित्य की तरफ। यदि उसके साथ जातीय जीवन का भी सम्बन्ध है तो यह निश्चित रूप से कहा जायेगा कि प्राण शक्ति उस भाषा में है।” पत ने इसी को दूसरे शब्दों में रागत्व कहा है जो भाषा का और मुख्यतः कविता की भाषा का प्राण है।^१

भाषा के भावात्मक प्रयोग के लिए छायावादी कविगण और उनमें मुख्यतया निराला ने बगला के महाकवियों से प्रेरणा ली। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग द्विवेदी-युग में प्रारम्भ हो जाने से भी छायावादी कवियों ने इस विशेषता को बंगाली कवियों से ग्रहण किया है कारण बंगला कवियों में उन्होंने भावात्मक भाषा के रूप का अन्वेषण देखा था। इस सम्बन्ध में नामवरसिंह कहते हैं कि हिन्दी की अपनी परम्परा के असह्य लोक-प्रचलित तथा साहित्यरूढ शब्दों के स्थान पर संस्कृत शब्दों को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया गया। इस दिशा में बंगला हिन्दी की अग्रणी है। माइकेल मधुसूदनदत्त और रवीन्द्रनाथ ने बंगला भाषा को संस्कृत के तत्सम शब्दों की सहायता से एकदम नया रूप दिया है। हिन्दी में इस तरह का प्रयत्न आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, अयोध्यासिंह उपाध्याय आदि ने भी किया परन्तु छायावादी कवियों ने अपने आचार्यों की अपेक्षा बंगला के महाकवियों से प्रेरणा ली।^१ तात्पर्य यह कि छायावादी कवियों ने संस्कृत के तत्सम शब्दों को सीधे संस्कृत कोशों अथवा वाक्यों से न लेकर बंगला के माध्यम से लिया और इसका कारण था। रवीन्द्र ने कालिदास जैसे कवि के शब्द-संस्कार से तत्सम शब्दों को लेकर भी नवीन भावों को ऐसे प्रवाह में सजो दिया कि वे नई अर्थवृत्ता से भर उठें। रवीन्द्रनाथ ने निर्जीव से लगने वाले संस्कृत शब्दों में भावों की नवीन सजीवनी डालकर उन्हें सजीव कर दिया। इसीलिए इन पुनर्जीवित शब्दों में छायावादी कवियों का ध्यान विशेष आकृष्ट किया।

निराला ने शब्द-रचना व पद-संश्लेष की दृष्टि से क्रान्ति की है यद्यपि प्रभाव अधिकतर रवीन्द्र का है। डॉ० सुधाकर चट्टोपाध्याय के अनुसार निराला की वाक्य-भाषा का माध्यम भाटे तीर पर रवीन्द्रनाथ की भाषा है, उनके काव्य-प्रय

१. नया साहित्य, निराला अत्र, मन् १६५३

२. निराला की कविता—बच्चन सिंह का लेख अलोचना में २५ वें पूर्णांक में उद्धृत।

३. नामवरसिंह छायावाद, पृ० १००

निराला ने अश्रेणी शब्दों का भी प्रयोग परवर्तीकाल में ज्यों का त्यों कर दिया है। गिरीशचन्द्र तिवारी कहते हैं कि इसका मुख्य कारण कवि के मन की दुःख दशा है, जिससे एक व्यंग्य की भावना निकलती है। इस सम्बन्ध में प्रभावकर माचवे का कहना है कि बगला के उदाहरणों से निराला के व्यंग्य-वाच्य की समानता है। वस्तुतः अभियन्तकवर्ती के प्रभाव-स्वरूप ही निराला की कविता में इम प्रकार के व्यंग्य की अभिव्यक्ति हुई है।^१ डा० मुधाकर चट्टोपाध्याय निराला की कविता में प्रयुक्त यथार्थ दुनियावादी शब्दों के प्रयोग को रवीन्द्र को "शेष रागिणी प्रथम धूयाँ" का प्रभाव बतलाते हैं।^२ इसको स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि निराला में समास-गुम्फिन तत्त्वम शब्दों का पुष्प-प्राचुर्य रवीन्द्र के यौवन बसन्त काल के प्रभाव-स्वरूप लक्षित होना है, और फिर शप काल में, कविगुरु का वादंक्षय—शीत-जर्जर आवेगविहीनता ने प्रभाव विस्तारित किया है निराला की गद्य-कविता में। वहाँ निराला की काव्यलता से तत्त्वम शब्द तथा प्राणवेग-चञ्चल भाषा के रगीन माधुर्य भर कर गिर पड़े हैं।^३

भाव जितना अभिनव और मौलिक होगा, शब्द-विन्यास तथा वाक्यरचना का भी उन्ही प्रकार अभिनव होना आवश्यक है। और फिर जिनको भाषा का माध्यम में प्रकट करना है वह कोई चिन्नावस्तु नहीं—केवल एक भाव है और इस भाव या भावावस्था को एक मन से दूसरे मन में मक्रमित करना ही काव्य-सृष्टि है। इस प्रकार भाव को भी सुस्पष्ट, सुनिर्दिष्ट अर्थवाचक शब्द में हम बांध नहीं सकते, नहीं तो वह भाव न रहकर एक अर्थ-ममन्वित तत्त्व का रूप ग्रहण करेगा—जिमी एक चिन्ता का आकार धारण करेगा। प्रत्येक तत्त्व ही एक निविशेष माधारण बुद्ध प्रकट करता है किन्तु भाव ठीक उसके विपरीत है, विशेषत्व (particularity) ही उसका सर्वस्व है। अतएव वाक्य के जिमी निविशेष अर्थबन्धन को निषिद्ध करके जिमी एक अतिशय विशिष्ट भाव का भाषा-रूप निर्माण करना ही काव्य की समस्या है। यही शैली की समस्या है। काव्य की शैली जिस प्रकार होगी वह लेखक की आन्तरिक अनुभूति ही निर्णय कर लेती है, एक जब भाषा में लेखक की यह अनुभूति हमारे सम्मुख उद्भासित हो उठती है, तब हम समझ पाते हैं—इस रचना की यही यथार्थ भाषा है, यथार्थ-

१. निराला के काव्य में अर्थ-वाचक, माहित, पंख २०००

२. मुधाकर चट्टोपाध्याय : आधुनिक हिन्दी साहित्य का अन्वय, १० ६६

३. वही, पृ० १०२

इस प्रकार एक ओर—

वीक्षण अराल, बज रहे जहाँ जीवन
के स्वर भर छन्द ताल मौन में मग्न ।

तो दूसरी ओर है—

हीरा मुक्ता मणिक्पेर घटा
जेनो शून्य दिगन्तेर इन्द्रजाल इन्द्रधनुच्छटा ।

संस्कृत शब्दा का प्रयोग, निराला ने विराटत्व के प्रदर्शन के लिए, माइकेल तथा रवीन्द्र के प्रभावस्वरूप किया है । और इस प्रक्रिया में वे बगला कविताओं की भाँति क्रियापद का लाप कर बैठे हैं परन्तु उससे ओज बढ़ गया है ।

निराला ने बहुत ध्वन्यर्थ व्यञ्जक शब्दों का भी अपनी काव्य भाषा में प्रयोग किया जैसे—उत्ताल तरंग, अट्टहाम, लोल हिलार, भूम-भूम, गरज गरज, घनघोर निभरपात, घर्षरनाद, कलकल, छलछल, भरभरभर निभर, खलखल, धकधक, थरथर, लकलक आदि । यह सब बगला-भाषा के प्रभाव-स्वरूप निराला ने अपनाया है जिसके उदाहरण 'ध्वन्यर्थ व्यञ्जना' के विवरण में हम दे चुके हैं । डा० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय कहते हैं कि मौलिकता की दृष्टि से 'निराला' ने बगला से संगीत व शब्द-विधान लिया है किन्तु यह प्रेरणा मात्र है उन्होंने हिंदी में जो संगीत व शब्द साधना की है, वह उनकी अपनी है, आज तक कोई कवि उनका अनुकरण नहीं कर सका ।^१

निराला एक ही शब्द को दो दो बार एक ही वाक्य में प्रयुक्त करते हैं । जैसे तृण-तृण, गहन गहन, रणन-रणन पादप-पादप, रेणु रेणु, क्ण-क्ण, पुज-पुज । गिरिशचन्द्र तिवारी इसका रवीन्द्र का प्रभाव कहते हैं—

छन्दे छन्दे नाचि उठे सिंधु माझे तरंगेर दल ।

अथवा— वाजितेष्टे रागिनि तोमार तृण तृणे पल्लवे पल्लवे ।

इसके प्रतिरिक्त निराला ने बगला और उर्दू शब्दों का भी व्यवहार किया है जिसमें सम्बन्ध में डा० शम्भूनाथसिंह कहते हैं कि पन्त तथा निराला ने बगला के 'तकाल' का व्यवहार कई जगह किया है ।^२ कौटना, सिहरना छलछल अथु-पात आदि शब्द भी बगला से ग्रहण किये गये हैं । उर्दू तथा फारसी शब्दों का व्यवहार एक ओर तो निराला की मौलिक विद्यपता है और दूसरी ओर बगला कवि नज़रुल इस्लाम का प्रभाव है ।

१ विश्वम्भरनाथ उपाध्याय महाराष्ट्र निराला—काव्य और कृतियाँ, पृ० १८०

२ गिरिशचन्द्र तिवारी कवि निराला और उनका काव्य साहित्य, पृ० १८८

३ शम्भूनाथसिंह छायावादी युग, पृ० ३४७

स्वयं लिखा है—

बल्फना की सुन्दर भूमि में हिन्दी के अभिनय की सफलता पर विचार करते हुए, बोलते हुए, पाठ खोलते हुए, जिस छन्द की सृष्टि हुई, वह यही है और पीछे से विचार करके भी देखा तो हमें स्वभाववशा निम्बल हृदय की सत्य-ज्योति की तरह इसे निजला हुआ पाया।

यहाँ मुक्तगीत तथा मुक्त-छन्द में भेद समझ लेना उचित होगा। मुक्तगीत के चरणों को भावानुबल घटाया बढ़ाया भ्रवश्य जाता है, किन्तु उसमें तुकों की भ्रवहेलना नहीं की जाती। मुक्त-छन्द में तुकों का न कोई विचार है और न चरणों में नियत मात्रा का आग्रह। मुक्तगीत का प्रवर्तन हिन्दी में निराला से पूर्व हो गया था। मुक्तगीत वास्तव में असमपदी मित्राक्षर छन्द है। इसके वास्तविक निर्माता रवीन्द्रनाथ हैं जिस कारण इसको "बलाना" छन्द भी कहा गया है। इसकी पक्तियों में स्वर की तरह प्रसरणशीलता व ह्रस्व-दीर्घ-कुचन होने पर भी अन्त में तुक की भ्रवहेलना नहीं की जाती है। निराला से पहले हिन्दी में रवीन्द्र के प्रभावस्वरूप इसका प्रवर्तन हो गया था यद्यपि निराला ने भी इसका प्रयोग किया है—

ध्यान नहीं है मुझे और कुछ चाह

अर्थ-विषय इस हृदय कमल में धातू

प्रिये छोड़ कर बन्धनमय छन्दों की छोटी राह।

गजगामिनी रह पय तेरा सकीर्ण, कटकाकीर्ण।

परन्तु हिन्दी में निराला ही सर्वप्रथम मुक्त छन्द के प्रवर्तक हैं। इस सम्बन्ध में डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं—

यह ध्यान देने की बात है कि निराला जी के आरम्भिक प्रयोग छन्द के बन्धन से मुक्ति पाने का प्रयास है। छन्द के बंधनों के प्रति विद्रोह करके उन्होंने उस मध्ययुगीन मनोवृत्ति पर पहला आघात किया था जो छन्द और कविता को प्रायः समानार्थक समझने लगी थी। निराला जी ने जब छन्दों के प्रति विद्रोह किया तो उनका उद्देश्य छन्द की अनुपयोगिता बताना नहीं था। वे बवल कविता में भावों की—व्यक्तिगत अनुभूति के भावों की—स्वच्छन्द अभिव्यक्ति को महत्व देना चाहते थे। जिसे वे मुक्त छन्द कहते थे उसमें भी एक प्रकार का भंगार और एक प्रकार की ताल विद्यमान है। उदाहरणार्थ—

विजन-वन-वल्तरों पर

सोती थी मुहाण-मरी

रवीन्द्रनाथ भी मुक्त छन्द के सम्बन्ध में कहते हुए प्राचीन संस्कृत की बात करते हैं जो मत श्री क्षितिमोहन सेन ने अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है—

‘संस्कृत छन्दे विषमेर देखा पाओया याय । वसें—लिबेरेतेओ ता आछे । शार्ङ्गल-विक्रीडित स्रग्धरा प्रभृति संस्कृत छन्दे चमत्कार ध्वनि ऐश्वर्य (म्यूजिक) रयेथे । ताके नृत्य-छन्देर गुरुगम्भीर वा चल-चचल नाना ताले सजानो याय । प्रकृतिर क्षेत्रेओ ताइ ।’

पाश्चात्य आलोचकों के भी मुक्त छन्द के सम्बन्ध में निराला जैसे विचार हैं । कालरिज का कहना है कि—श्रेष्ठतम कविता बिना छन्द के भी संभव है।^१

छायावादी युग, जैसा कि हम इस अध्याय के प्रारम्भ में कह चुके हैं, रूढ़ि से मुक्ति पाने की कामना पर आधारित रहा । इसलिए रीतिकाल के विरुद्ध छायावादी कविया ने वाणिक छन्दों में उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रा, शार्ङ्गल-विक्रीडित, वसस्य-वृत्त, द्रुतविलम्बित, वसततिलका, मन्दाक्रान्ता और शिखरणी का प्रयोग खूब चलाया । मात्रिक म उर्दू के बहरो, बंगला के पयार, अंग्रेजी के सानेट तथा फारसी की रुवाइयाँ भी हिन्दी में इस युग में लिखी जाने लगी । फिर तुर्क के विरुद्ध प्रति-क्रियास्वरूप मुक्त छन्द का प्रसार भी इसी युग में चला । डा० उपाध्याय कहते हैं कि मुक्त छन्द बंगला में माइकेल मधुसूदन द्वारा प्रवर्तित हुआ था, गिरीशचन्द्र नाट्याचार्य ने नाटकों में इस छन्द का प्रयोग किया था, निराला ने ‘माइकेल’ के समान हिन्दी में इसका प्रवर्तन किया।^२ मुक्त छन्द के बारे में निराला ने लिखा है—मुक्त छन्द वह है जो छन्द की भूमि पर रहकर भी मुक्त है, मुक्त छन्द का समर्थक उसका प्रवाह है, वही उसे छन्द सिद्ध करता है, और उसका नियम-राहित्य उसकी मुक्ति।^३

डा० बच्चनसिंह का कहना है कि बचपन से ही बंगाल में रहने के कारण निराला को बंग साहित्य के समुचित अध्ययन का अवसर मिला । बंगाली रगमच पर अभिनय देखने के सुयोग भी मिले । उस समय हिन्दी-रगमच के लिए भी बलकृता प्रसिद्ध स्थान था । हिन्दी-रगमच के अलफ़ेड और कोरोन्धियन के नाटक इन्हें पसन्द न आते थे । पात्रों के भेद अस्वाभाविक कथोपकथन को ठीक करने की कल्पना से ही मुक्त छन्द की सृष्टि हुई।^४ ‘पतञ्जलि और पल्लव’ लेख में इन्होंने

१. कालरिज-काव्य परिचय में उद्धृत

२. Poetry of the highest kind may exist without meter

३. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, महाकवि निराला : काव्यज्ञान और कृतिता, पृ० २७०

४. यहीं से उद्धृत

५. बचनसिंह आन्तरिकी कवि निराला, पृ० २४

किन्तु उसमें तुक का निर्वाह नहीं। इसके विपरीत निराला ने "राम की शक्ति-पूजा" में तुकान्त का निर्वाह करते हुए भी धारावाहिकता बनाये रखी है। इस छन्द में निराला का अपना नयापन झलकता है।^१ यह विचार भ्रमात्मक है क्योंकि माइकेल तथा रवीन्द्र दोनों ने ही तुकान्त का प्रयोग भ्रमिन्नाक्षर छन्द में किया है। जैसे रवीन्द्र का उद्धरण मिन्नाक्षर-भ्रमिन्नाक्षर छन्द के सम्बन्ध में देते हुए श्री भ्रमूल्यधन मुखोपाध्याय कहते हैं—

हे भ्रावि जननी सिन्धु, वसुन्धरा सन्तान तोमार
एकमात्र बन्धा तव कोले ताड तन्द्रा नाहि धार ।

इसके अतिरिक्त "भेषनाय-वध" को मुक्त-छन्द (पी वगै) हम नहीं बह सकते कारण वह पयार छन्द में भ्रमिन्नाक्षर तथा यति-भ्रनिश्चयता को लेकर बना है और ऊपर का उदाहरण मिन्नाक्षर होते हुए भी यति की भ्रनिश्चितता पर स्थित है इसलिए इसको मिन्नाक्षर-भ्रमिन्नाक्षर कहा गया है।

निराला न जहाँ गद्यमय कविता की रचना की है वह निश्चय ही रवीन्द्र-नाय तथा भ्रमियकुमार चक्रवर्ती का प्रभाव है। वास्तव में गद्यमय कविता को ही मुक्त-छन्द कहा जाता है। मुक्त-गीत में तुक का बन्धन रहता है जिसे असम-पदी मिन्नाक्षर छन्द कहना अधिक उपयुक्त है। और मुक्त-छन्द विलुप्त ही मुक्त है। इसके उदाहरण "नये पत्ते" तथा "कुकुरमुत्ता" में प्राप्त होते हैं।

गद्य-कविता का लक्षण है—विषयमात्रिक यति, असम छन्द-स्पन्दन एवं गद्योचित वाचनभंगी। गद्य के साथ गद्य-कविता का भेद पक्ति सजाने में नहीं है वरन् यह भेद छन्द के बहाव तथा वाचन-रीति के द्वारा प्रनामित होता है। गद्य तथा पद्य के बीच गद्य-कविता स्थित है। मुकुमारनेन इसको स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि गद्य का छन्द वाक्यार्थ का अनुसरण करता है, वहीं यति वाक्य के मध्यास पर पठती है जहाँ अर्थ के साथ ही द्राम-वायु के लिए भी सामयिक विराम प्रावश्यक है, एवं वहीं वाक्य के बीच ताल अथवा मात्रा-ममता का प्रश्न नहीं उठता है। पद्य का छन्द मात्रा अथवा ताल की समता का अनुसरण करता है, वहीं विराम निर्दिष्ट मात्रा अथवा ताल के बाद होता है। गद्य-कविता के छन्द में यति गद्य-छन्द की तरह अर्थ-समाप्ति के साथ द्रामवायु के स्वल्प विराम पर पठता है, और यह भी बात है कि निर्दिष्ट मात्रा समता के नहीं रहने पर भी वाक्य के बीच ताल के सामित्य का अनुभव होता है। मोटी बात तो यह है

१. कवि निराला और उनका कान्य-साहित्य, पृ० १२०
२. भ्रमूल्यधन मुखोपाध्याय : बाल्या छन्दैर मूलसूत्र

स्नेह-स्वप्न-मग्न अमल-कोमल-तनु तच्छणी

बुही की कली

दृग बन्द किए-शियल-पत्रांक में ।

निराला के कथनानुसार इसकी सफलता के लिए कवित्त-छन्द का आधार ग्रहण करना होगा । कवित्त का सौन्दर्य पढ़ने के ढग पर अवलम्बित है । इस तरह मुक्त छन्द में आर्ट ऑफ़ म्यूजिक (Art of music) नहीं मिल सकता वहाँ है आर्ट ऑफ़ रीडिंग (Art of reading) ।^१ निराला ने इस छन्द को अपने नवीन भाव के संप्रेषण के लिए ही अपनाया जैसाकि "मेरे गीत और बला" निबन्ध में उन्होंने लिखा है—

भावों की मुक्ति छन्दों की भी मुक्ति चाहती है । यहाँ भाषा, भाव और छन्द तीनों स्वच्छन्द है । भाव के संप्रेषण के साथ-साथ प्रथाह तथा गति की दृष्टि से साधारण छन्दा की अपेक्षा मुक्त-छन्द अधिक स्वाभाविक सिद्ध होता है । निराला ने मुक्त-छन्द की प्रेरणा भूमि रवीन्द्र का मानने से सवथा इनकार कर दिया है और "पत और पल्लव" में इस कारण पत को वे नीचा दिखाते हैं । इसकी वास्तविक प्रेरणा गिरीशचन्द्र से मिली है । इसका सकेत उन्होंने अनेक स्थानों पर दिया है । परिमल की भूमिका के अन्त में उन्होंने लिखा है—

बंगला में माइकेल मधुसूदनदत्त द्वारा अनुबान्त कविता की सृष्टि हो जाने पर नाट्याचार्य "गिरीशचन्द्र" ने अपने स्वच्छन्द छन्द का नाटको में ही प्रयोग किया । यह बात ठीक है कि मुक्त-छन्द (अभिवासर छन्द नहीं) का सर्वप्रथम और उचित व्यवहार-कर्ता गिरीशचन्द्र है न कि रवीन्द्रनाथ । यह बात "बंगला छन्देर मूलसूत्र" के प्रणेता प्रख्यात विद्वान् श्री अमूल्यधन मुल्लोपाध्याय मानते हैं । उनका कहना है—

गिरीश घोषेर नाटके ये छन्द व्यवहृत हइयाछे ताहाकेह वर फ्री वर्स नाम देघोया येते पारे ।^२

इस प्रकार वे गिरीश घोष को ही फ्री वर्स (Free verse) अर्थात् मुक्त-छन्द का प्रथम प्रणेता मानते हैं जहाँ से निराला ने प्रेरणा ग्रहण की है । हिन्दी-साहित्य में इसका प्रयोग निराला ने सर्वप्रथम किया है । 'पंचवटी प्रसंग' ही इसका प्रथम उदाहरण है । श्री गिरीशचन्द्र तिवारी का कहना है कि भेषनाद भी मुक्त-छन्द में है,

१. निराला पत और पल्लव

२. गिरिश घोष के नाटक में जो छन्द व्यवहृत हुआ है उसको ही फ्री वर्स (Free verse) कहा जा सकता है—पृ० १६३

निराला के कला-पक्ष पर बंगला का प्रभाव

१३५

पुइवाइ चलती है,
जुही फूलों से भरी;
दूर तक हरियाली ज्वार की, झरहर की...
श्रीर रवीन्द्र—

पश्चिमेर गंगातीर शहरेर शेष प्रान्ते वासा ।
दूर प्रसारित घर
शून्य आकाशेर नचे शून्यतर
भाष्य करे येन ।
हेया-होया चरे गर
शस्य-शेष बाजरार सेत,
गद्य-नबिता का आभासयुक्त अन्त्यानुप्रास-विरहित काव्यमय स्पन्दनयुक्त
छन्द का एक उदाहरण प्रस्तुत है—
रवीन्द्र—

पत्तेदवरी । नदी तीरे । पत्तीदेर प्राम
तार बेघो...ी रेर मंये, ।
प्रभागार । साये तार । विवाहेर । छिन ठिक । ठाक ।
इगवा प्रभाव निराला पर स्पष्टतया लक्षित होता है—
दूर तक । हरियाली ज्वार की । झरहर की ।
सन मुग । उड़द घोर ।
चनो के हरे सेत ।
दूर के । पहाड़ों की । घोर घानी । नीलिमा ।
बंगला से प्रभावित होकर निराला ने 'मित्राक्षर-प्रमित्राक्षर', 'मुक्तगीत' या
'प्रथमपदी मित्राक्षर' तथा 'मुक्त छन्द' (की वसंत) या 'गद्य-गीत' का प्रयोग
सपने काव्य में किया है । डा० मुधाकर चट्टोपाध्याय ने निराला-काव्य में कुछ
उदाहरण उद्धृत कर यह भी प्रमाणित कर दिया कि उपर्युक्त छन्दों के अतिरिक्त
निराला ने रवीन्द्रनाथ के प्रथम युग के छन्दों से भी प्रभाव ग्रहण किया है ।

१—कल-कल-कर ककल, प्रिय
किल-किल-रव किकिली,
रएन-रएन नूपुर, घोर साज सोट रगिलि...
तया—नदि-कल कल, छन-सी
रह छवि विगन्त पल की

कि गद्य अतिताल, पद्य समताल एव गद्य-कविता विषमताल पर स्थित है ।^१ 'पुनश्च' की भूमिका में गद्य-कविता के सम्बन्ध में रवीन्द्रनाथ ने कहा था—

गद्य-काव्य में अतिनिरूपित छन्द का बन्धन तोड़ना ही यथेष्ट नहीं है, पद्य काव्य की भाषा तथा प्रकाशरीति में जो एक ससज्ज सलज्ज भ्रवगुण्ठन की प्रथा है उसी को हटाने से ही गद्य के स्वाधीन क्षेत्र में उसका सचरण स्वाभाविक होगा । असकुचित गद्य-रीति के द्वारा काव्य के अधिकार का प्रसार करना संभव होगा । यह मेरा विश्वास है एव इसी की ओर दृष्टि रखकर हम ग्रन्थ में प्रकाशित कविताएँ मैंने लिखी हैं ।

उदाहरण के रूप में—

रवीन्द्र—

हठात् सन्धाय ।

सिन्धु चारोर्षाय लागे तान ॥

समस्त आकाशे बाजे

आदि कालेर विरह वेदना

हठात्—खबर पाइ मने

आकबर बादशार सगे

हरिपद केरानीर कोन भेद नेइ ॥

निराला की गद्य-कविताओं में रवीन्द्र की उपर्युक्त कविताओं का प्रभाव स्पष्टतया लक्षित होता है । उदाहरण के लिए—

निराला—

“मैंं कुकुरमुत्त हूँ,

पर बेनजोइन (Ben zoin) बंसे,

घने वशनं शास्त्र जंसे ।

ओमफलस (omphalos) ओर ग्रहावर्तं,

घंसे ही दुनिया के गोले ओर पतं” ।^१

अथवा—

निराला—

घने घने बादल हैं

एक ओर गडगडाने,

१. सुकुमारमेन बगला माहिस्वेर इतिहास, पृथीय खण्ड, द्वितीय सस्वरण, पृ० १५४

२. निराला कुकुरमुत्ता

निराला के कला-पक्ष पर बगला का प्रभाव

के कारण यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। अपने युग की इस प्रवृत्ति को रवीन्द्रनाथ ने 'धाणिक' की एक कविता 'शक्तिपूरण' में बहुत अच्छी तरह व्यक्त किया है—

शाम नाबवो महाकाव्य

सचरने

छिलो मने—

टेकलो कखन तोमार कांजन—

किकिणीते

कल्पनाटि गेलो फाडि

हाजार गीते ।

महाकाव्य सेइ शमाव्य

दुर्घटनाय

पायेर बाछे छडिऐ भाजे

बराय बराय ।

यद्यपि निराला तथा रवीन्द्र दोनों ने ही लम्बी आख्यानात्मक कविताएँ (Narrative Poems) लिखी हैं तथापि निराला की 'पंचवटी प्रसंग', 'राम की शक्ति-पूजा' तथा 'गुलसीदास' रवीन्द्र की 'बच-देवयानी मवाद', 'गापारीर भावेदन', 'पुजारिनी', 'शिशुतीर्थ' आदि कविताएँ महाकाव्य के उदात्त-भाव (Epic Grandeur) को लिए हुए हैं। फिर निराला ने रवीन्द्र तथा युगीन विचारधारा से प्रभावित गीत, प्रगीत, गीतिनाट्य, शोकगीत सबोधगीत आदि गीतों की रचना की है। इन पर प्रभाव का विवेचन चतुर्यं अध्याय में किया गया है। निराला ने रवीन्द्र की कुछ कविताओं पर पैरोछी भी लिखी है जिसके सम्बन्ध में द्वितीय परिशिष्ट में विवेचन किया गया है। जहाँ व्यंग्य—काव्य-रूपों का गद्यमयी भाषा में प्रयोग दिलाई परता है वह वस्तुतः रवीन्द्र तथा अन्य बंगाली कवियों का प्रभाव है। येंस्को डायलोग, कुकुरमुत्ता आदि निश्चय रूप से बगला व्यंग्य-काव्य के प्रनुरूप हैं जैसाकि प्रभाकर माधवे कहते हैं—

बगला के उदाहरणों से निराला के व्यंग्य-काव्य की समानता है, किन्तु मराठी, गुजराती, उर्दू में जो उदाहरण मिलते हैं वे व्यंग्य-युक्त मते हों, उनमें अभिव्यक्ति का वह वैलक्षण्य नहीं जिसके कारण ही निराला की व्यंग्य-कविताएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।^१

'मानेट' का उल्लेख हम 'छन्द' के विवेचन में कर चुके हैं। इसके

१. निराला के काव्य में अनियमाधर्मावाद, 'माहिरप' का पौन ६८, १०००

घन-गहन-गहन
बन्धु बहन
असहन निस्तल की***

उपर्युक्त इन दोनो उदाहरणों में रवीन्द्रनाथ की "श्रीगो मरण, हे मोर मरण" कविता के छन्द का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। इसके अतिरिक्त—

२—सौध शिखर पर प्रात मनोहर

कणक गात तुम अरुण चरण धर
सरणि-सरणि पर उतर रही मर
छन्द-भ्रमर-गुजित नीलोत्पल

इसमें "कल्पना" काव्य की कविता "भारतलक्ष्मी" के छन्द की अनुकृति स्पष्ट लक्षित होती है। इस प्रकार डा० चट्टोपाध्याय कहते हैं कि निराला की भाषा तथा छन्द की आलोचना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि रवीन्द्र के प्रारम्भिक जीवन का उद्दाम तथा शेष जीवन का स्तिमित माधुर्य का युगपत् प्रकाश निराला की भाषा तथा छन्द में हुआ है।^१

इसके अतिरिक्त निराला ने अंग्रेजी 'सॉनेट' का भी प्रयोग किया हुआ है। 'अणिमा' में 'रविदास जी के प्रति' और 'विजयलक्ष्मी पंडित के प्रति' वाली कविताएँ सॉनेट के ढंग में लिखी गई हैं। इस सम्बन्ध में डाक्टर शम्भूनाथसिंह लिखते हैं कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कुछ सुन्दर चतुर्वंशपदियों की रचना की थी जिनकी देखा-देखी हिन्दी के आधुनिक कवि भी इस ओर प्रवृत्त हुए : किन्तु यह विदेशी शैली हिन्दी-कविता की प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं थी, अतः वह अधिक प्रचलित न हो सकी।^२

काव्य-रूप

छन्द की ही तरह काव्य-रूपों की दृष्टि में भी निराला का काव्य छायावाद में सबसे अधिक विविधतापूर्ण है। निराला ने महाकाव्य की रचना नहीं की। नामवर-सिंह कहते हैं कि यह आधुनिक युग की विशेषता है कि किसी भी कवि ने महाकाव्य की रचना नहीं की और यदि "कामायनी" जैसे महाकाव्य लिखे भी गए तो वे सम्बे प्रतीत होकर ही रह गए।^३ रवीन्द्रनाथ का परोक्ष प्रभाव छायावादी कवियों पर पड़ने

१. मुभाकर चट्टोपाध्याय आधुनिक हिन्दी साहित्ये कागनार स्थान, प्रथम खण्ड, पृ० २०२

२. शम्भूनाथसिंह : छायावाद युग, पृ० २३१

३. नामवरसिंह : छायावाद, पृ० १२६

चतुर्थ अध्याय

निराला के गीत पर वंगला-प्रभाव

पिछले अध्याय में निराला के कला-पक्ष पर विवेचन करते हुए हमने यह देखा है कि निराला के कला पक्ष में नवीनता का समावेश वस्तुतः नूतन भावाभिव्यक्ति के समागम के कारण ही हुआ है। भावाभिव्यक्ति की तीव्रता के कारण ही काव्य में प्रगीतात्मकता का समावेश होता है जैसा कि संगीत के प्रख्यात फालोचक हर्बर्ट स्पेन्सर ने कहा है।^१ नूतन भावाभिव्यक्ति के उच्छलन ने उस युग में प्रगीतात्मकता का संयोजन ही नहीं किया वरन् वह सजाजना पूर्णतः नूतन ढंग की हुई। खड़ी बोली में रीतिकाल के विरुद्ध बिल्कुल नए ढंग के गीतों की रचना 'प्रसाद' ने आरम्भ की। ये गीत उनक नाटकों के पात्र विशेष वातावरण में गाते हैं। निरपेक्ष रूप में अलग गीत लिखने का श्रेय सर्वप्रथम निराला को ही है। डा० बच्चनसिंह का कहना है कि विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की भाँति इनका मुझाव भी संगीत-काव्य की ओर विशेष रहा है।^२ दोनों ही ने नई ढंग की गीतों की रचना की। पुरानी लीक के विरुद्ध निराला का मत बहुत ही तीव्र था। उनका कहना था—

हिन्दी गवयों का ममपद पर घाना मुझे ऐसा लगता था जैसे मखरूर सन्धी का बोक मुकाम पर लानर धम्म से फोककर निश्चित हुआ।

निराला ने गीतों की नवीन ढंग की रवीन्द्र तथा द्विजेन्द्रलालराय से ग्रहण किया था। इस सम्बन्ध में डा० बच्चनसिंह का कहना है कि अग्रणी और बगला कविता के प्रभाव से छायावादी कवियों ने भावानुवृत्त व्यंजना, साक्षात्क-वैचित्र्य, मूर्तप्रत्यक्षीकरण, भाषा की वक्रता के नवीन विन्यास से खड़ी बोली को काफ़ी समृद्ध बनाया। काव्य की तरह संगीत का क्षेत्र भी पाश्चात्य प्रभावों से प्रदूषित न बच सका। प्रत्येक क्षेत्र में अष्टादशवीं का प्रभाव सबसे पहले बगला

१ Music is but an idealization of the natural language of emotion, and that consequently, must be good or bad accordingly, as it conforms to the laws of natural language.—The origin and function of music

२ बच्चनसिंह, भाषा-विशारदी कवि निराला, पृ० ७६

अतिरिक्त गजल का विवेचन गीतिकाव्य नामक अध्याय में किया गया है। निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि छन्द की ही तरह काव्य-रूपों की दृष्टि से भी निराला का काव्य छायावाद में सबसे अधिक वैविध्य-सम्पन्न है जिसकी प्रेरणा उन्हें निश्चय रूप से बंगला कवियों से प्राप्त हुई।

कला का अंतिम रूप

शैली-पक्ष पर विचार करते हुए हमने कहा है कि काव्य की शैली किस प्रकार की होगी, उसका निर्णय लेखक की आन्तरिक अनुभूति ही कर लेती है, एव जब भाषा में लेखक की वह अनुभूति हमारे सम्मुख उद्भासित हो उठती है, तब हम समझ पाते हैं—इस रचना की यही यथार्थ भाषा है, यथार्थ वाणी रूप है। जब हम यह समझ पाते हैं, तब उस रचना के समग्र वाङ्मय की भाव की समग्रता के साथ मिलाकर देखते हैं—शब्द या वाक्य का कोई पृथक् मूल्य स्वीकार नहीं करते हैं। भाव के आधार पर यदि उनका पारस्परिक सम्बन्ध सामंजस्यपूर्ण तथा अभिन्न है तभी उनका चयन और उनकी योजना सार्थक है। इस प्रकार भाव तथा भाषा का एकांगी सम्बन्ध है। ब्रैडले तथा क्रोचे ने इसी मत का प्रतिपादन किया है।¹ निराला के अपने नूतन काव्यजात भावों की व्यञ्जना के लिए नूतन भाषा तथा रूप-विन्यास के उपकरणों की आवश्यकता हुई। और इन नूतन उपकरणों की खोज में उन्होंने बंगला काव्य से प्रेरणा ग्रहण की। यदि वे ऐसा न करते तो नवीन अनुभूतिजन्य भावाभिव्यक्ति में शायद समर्थ न होते और यदि होते तो शायद भाव तथा भाषा का एकांगी रूप हमारे सम्मुख उद्भासित नहीं हो पाता।

1 And this identity of Content and Form, you will say, is no accident, it is of the essence of Poetry in so far as it is Poetry, and of all art in so far as it is art—Bradley Oxford lectures on Poetry, P. 15

कारण अनादिकाल से गीत के मूल में वेदना की छाया ही सबसे अधिक प्रस्फुटित दिखाई पड़ी है। संगीत चिरकाल का है। वेद तथा उपनिषद् के ऋषियों ने गम्भीर ध्यान के द्वारा यह जानना चाहा था कि संगीत का मूल कहीं है, क्यों वह हमारे मन को आकर्षित करता है, एवं क्यों संगीत एक अनिर्देश्य आवेग के द्वारा प्राण को पूर्ण करता है तथा मन को उदास बना देता है। शान्तिदेव घोष कहते हैं कि इन ऋषिगण ने चिन्ता के गम्भीर स्तर में उतर कर एक दिन अनुभव किया कि सृष्टि की गम्भीरता में एक विश्वव्यापी प्राण-कम्पन की ध्वनि गूँज रही है और गाना सुन कर उसी का वेदनावेग मानो हम अपने चित्त में अनुभव करते हैं।^१ रवीन्द्र के गीतों में भी यह विरह वेदना व्यजित हुई है—

ग्रामि ये द्वार सहते पारि ने
सुरे बाजे मनेर माझे गो, कया दिये फडते पारिने ।
तुमि ये ग्रामारे चाग्रो ग्रामि से जानि
केन ये मोरे कांदाग्रो ग्रामि से जानि ।

और निराला ने भी—

माँ वहाँ तू ले चल
देखूँगा वह द्वार-दिवस का पार
बेसुध पडा जहाँ बेबना का ससार
आ वेदनें ! मैं भी तुझको गा गाकर जीवन दूँ ।

विषय की दृष्टि में निराला के गीत पाँच भागों में विभक्त हो सकते हैं—

- (१) प्रार्थना-प्रधान गीत ।
- (२) नारी-सौंदर्य-प्रधान गीत तथा प्रेम-गीत ।
- (३) प्रकृति प्रधान गीत ।
- (४) राष्ट्रीयता-प्रधान गीत ।
- (५) दार्शनिक गीत ।

इन पाँचों वर्गों के गीतों में रवीन्द्र का तथा नजरूल इस्लाम का विषयगत-प्रभाव सबसे अधिक परिलक्षित होता है। गीतिका के गीतों के सम्बन्ध में लिखते हुए डा० रामरतन भटनागर कहते हैं कि बगला में रवीन्द्रनाथ इस प्रकार के गीतों की सहस्रों रचना कर चुके थे। अतः रवीन्द्रनाथ के गीतों की छाया में चलने

निराला के आध्यात्मिक हास्य-प्रधान गीतों में रवीन्द्र की आध्यात्मिकता की छाप स्पष्टतः परिलक्षित होती है। सुकुमारसेन कहते हैं कि रवीन्द्रनाथ के गीतों में वैष्णव पदावली का प्रभाव उतना नहीं है जितना वाउल गान का प्रभाव लक्षित होता है।^१ यहाँ 'अणिमा' के एक गीत में यह प्रभाव दिखाई पड़ता है—

सुन्दर हे, सुन्दर

दर्शन से जीवन पर

बरसे अविनश्वर स्वर ।

परसे ज्यों प्राण,

फूट पड़ा सहज गान,

तान-सुर सरिता वही

तुम्हारे मंगल पद छूकर ।

उठी हैं तरंग,

बहा जीवन निस्सग

चला तुमसे मिलने को

खिलने को फिर-फिर भर-भर

इसे पढ़कर रवीन्द्र का यह गीत स्मरण हो आता है—

एहे लोमिनु सग तव,

सुन्दर, हे सुन्दर

पुण्य हल अग मम

धन्य हल अन्तर

सुन्दर, हे सुन्दर

आलोके मोर चक्षु छूटि

मुग्ध हये उठल फूटि,

हृदयगगने पवन हल,

सौरमते मन्यर,

सुन्दर, हे सुन्दर

एहे तोमारि परदा-रागे

चित्र हल रजित,

एहे तोमारि मिलन-मुषा

रइस प्राणे सचित

१. सुकुमारसेन बागना साहित्येर कथा, एतोय खण्ड, पृ० ३६६

पुण्य के शुभ प्रसवण ये,
हृदय द्वार गये ।

घोर रवीन्द्र —

ऐसी श्यामल मुन्दर

भ्रानो तव तापहरा तृपाहारा सगमुया ।
विरहिणी चाहिया आधे आकासे ।

निराला के इस वर्ण-गीत में तथा अन्य प्रकृति के गीतों में रवीन्द्र का प्रभाव होने पर भी रवीन्द्र की रागात्मक अन्विति (जो गीतों की मुख्य विशेषता है) की प्रेरणा को निराला ग्रहण नहीं कर पाये हैं। इसीलिए ये चित्र रवीन्द्र की तरह इतने प्रवाहमय नहीं दोख पड़ते हैं। निराला ने कहीं-कहीं अपने प्रकृति-प्रधान गीतों में नजरूल-इस्लाम के भाव की प्रेरणा को भी ग्रहण किया है जैसाकि बादल-राग की कविता के सम्बन्ध में डा० रामविनास शर्मा कहते हैं कि बादल-राग की दूसरी कविता में जहाँ नजरूल-इस्लाम के 'विद्रोही' की तरह विप्लव का नव जल-धर है वहाँ कली की श्री त्रिखेरकर उसे पीड़ित करने वाला उद्दण्ड नायक भी है। 'गीतगुज' के एक गीत में भी प्रेरणा का सूत्र स्पष्ट दिखाई पड़ना है—

निराला—बड़ बड़ कर बहती पुरवाई,
धुन मतार-कजली की छाई ।

नजरूल—बुरत वायु पुरवइयां बहे
अधीर भानन्दे ।

स्वदेश-प्रेम के गीत

निराला रवीन्द्र के स्वदेश-प्रेम का बखान करते हुए लिखते हैं कि महाकवि रवीन्द्रनाथ ने केवल दूगरे विषयों को उत्तमोत्तम कविताओं की रचना में ही अपने सम्पूर्ण बाल नहीं बिताया, उन्होंने देश के सम्बन्ध में भी बड़ी मर्म-स्पक्षिनी कविताएँ लिखी हैं। वास्तव में उस समय के प्रत्येक कवि ने स्वदेश-प्रेम की कविताएँ लिखी हैं। निराला ने भी रवीन्द्र आदि कवियों से प्रेरणा ग्रहण कर स्वदेश-प्रेम के गीतों का प्रणयन किया। इनका स्वदेश-प्रेम भारतवर्ष के प्राचीरों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसमें रवीन्द्र की तरह सम्पूर्ण विश्व को बरा गया है।

निराला—

१. रामविनास शर्मा : निराला, पृ० ५६

२. निराला : रवीन्द्र कविता बानन, पृ० ५२

सब मधु तार चरणे तोमारि धरिया ।

कही-कही नारी के चित्रण द्वारा सात्विक प्रेम का रूप प्रकट किया गया है। जैसे निराला के इस गीत में प्रकट होता है—

कौन तुमि शुभ्रकिरण बसना ?
सोखा केवल हंसना, केवल हंसना

प्रथवा—

बहा स्नेह का सरस सरोवर
श्वेत-बसन लौंटी सालज घर,
मलख सखा के ध्यान-लक्ष्य पर
हूबो, ममल धुली ।

नारी के इस प्रकार के चित्र रवीन्द्र की कविता में भी मिलते हैं—

आजि निर्मलवाय शान्त ऊषाय
निर्जल भवसाने शुभ्रयसना
चलियाछो धीरे-धीरे ।

प्रकृति-प्रधान गीत

निराला ने प्रकृति से सम्बन्धित दो प्रकार के गीत लिखे हैं। एक में बारा प्रकृति-चित्रण होता है और दूसरे में प्रकृति के माध्यम से हृदय में उत्पन्न विविध विचारों का चित्रण। निराला के प्रकृति-वर्णन पर रवीन्द्र के प्रभाव का विवेचन हम कर चुके हैं और प्रकृति में नारी-रूप के आरोप का भी वर्णन हा चुका है। यहाँ प्रकृति-प्रधान गीतों का वर्णन करेंगे जहाँ प्रगीतात्मक विशेषता से युक्त होकर इनमें बला की अपेक्षा सहज मन्त प्रेरणा तथा प्रवाहमयी शैली का प्राधान्य रहा है। वर्षा के वर्णन में यह रूप सबसे अधिक फूट पड़ा है और इनका वर्षा-वर्णन जैसाकि डा० रामविलास शर्मा कहते हैं—नद और दनदल के वर्णन से स्पष्ट है कि यह वर्षा बगाल की है।^१ परिमल के वर्षा-गीतों में बगाल तथा बगला-बवियों का, मुख्यतया रवीन्द्र का प्रभाव लक्षित होता है। उदाहरणतया 'गीतगुज' का एक गीत लेते हैं—

गगन मेंघ छये
नए नयन नये
प्राण धन के श्याम धन ये
तापजल शीतल प्रवण ये,

‘मिथलजि’ प्राप्त होती है परन्तु वहीं-कही गीत सार्वजनीनता के पद को प्राप्त कर गए है—

जागो शोनो के बाजाय,
वनकुलेर मालार गन्ध बासिर ताने मिने पाय ।
अधर छुये बांसिलानि.. ।

जीव और ब्रह्म सम्बन्धी रहस्यवाद निराला का प्रिय विषय है । डा० भटनागर कहते है कि जिस गीताञ्जलि से आधुनिक छायावादी काव्य को विशेष प्रेरणा मिली, उसमें भी आत्मा-परमात्मा के रहस्यात्मक और भक्तिभावपरक अनेक गीत हैं । गीत में निराला ने जहाँ-वहीं भी इस भाव को व्यक्त किया है वह आत्मपरक भावना में उदयुद्ध होने के कारण रवीन्द्र की तरह विरागपूर्ण बन गया है—

कितने बार पुकारा,
खोल दो द्वार, बेचारा ।^१

रवीन्द्र— तोमाय डाकिनु यबे कुजवने
तलनो धामेर वने गन्ध छिल,
षानि ना की लागि छिल अन्धमने
तोमार दुयार केन गन्ध छिल ।

उम ब्रह्म को बुलाने के लिए निराला सितार की झंकार से वातावरण को मुखर कर देने हैं और जहाँ गितार खराब हो जाता है वहाँ निराला रवीन्द्र की तरह मितार को मथारने में लग जाते हैं—

फिर सवार सितार लो ।
बाँधकर फिर ठाठ, अपने
अंक पर झंकार दो ।^१

और रवीन्द्र—

एकटि एकटि करे तोमार
पुरानो तार खोलो,
सेतारखानि नूतन बाँधे खोलो ।

इस सम्बन्ध में विनय विवरण हम ‘निराला के प्रतिपाद्य’ वाले अध्याय में देखेंगे हैं ।

१. सुकुमार मेन : बांग्ला आदित्येर कथा, तृतीय मसूदा, पृ० ३७०

२. निराला : गीतिका

३. अररा

जागो जीवन धनि के
विश्व पराय-प्रिय वणिके

भारत का वखुंन भी इसी प्रकार प्रेरणास्वरूप में किया है। डा० बच्चनसिंह कहते हैं कि बगला के गीतों की तरह निराला की भारत-भूमि की यह प्रशस्ति है।^१

लंका पदतल शतदल,
गजितोमि सागर-जल
धोता शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु अर्थ भरे ।

× × ×

अचल में खचित मुमन
मुकुट शुभ्र हिम तुषार ।

रवीन्द्र—नीलसिन्धुजल—धोत चरण तल,
अनिल-विकम्पित श्यामल अचल,
अम्बर-चुम्बित भाल हिमाचल
शुभ्र-तुषार-किरिटनो ।

पराधीनता के विरुद्ध कवि का आक्रोश सर्वदा नजदल की तरह है। दोनों ही विद्रोही कवि थे और दोनों ने ही उदात्त गम्भीर गंभी में विद्रोह का गाना गाया है।

दार्शनिक गीत

दार्शनिक गीतों का प्रतिपाद्य अद्वैतवाद है। डा० भटनागर कहते हैं कि जिस मुरली-ध्वनि को गोपिकाओं ने वृन्दावन में सुना था, वही मुरली-ध्वनि जीवात्मा को जब भीतर-भीतर सुनाई पड़ती है, तब उसके जगत् के बन्धन धीरे-धीरे टूटने लगते हैं। तब अभिसारिका-रूपी जीवात्मा के मन में उस प्रिय के प्रति जिज्ञासा जाग उठती है।^२

हृदय में कौन जो छेड़ता बासुरी ?

हुई ज्योत्स्नामयी अखिल मायापुरी ,^३

यह प्रेरणा रवीन्द्र की विचारधारा की है। रवीन्द्र के सम्बन्ध में मुकुमारमेन कहते हैं कि नितान्त स्वाभाविक रूप में उनके गाने में वैष्णव-पदावली के रूप-रस की

१. बच्चनसिंह का निराला कवि निराला, पृ० ८८

२. भटनागर 'कवि निराला' एक अ यवन, पृ० १४

३. निराला 'गीतिका'

पंचम अध्याय

उपसंहार

प्रस्तुत निबन्ध में जहाँ तक सम्भव हो सका है, तटस्थ तथा निरपेक्ष होकर निराला-काव्य में बगीच-प्रभाव के मूल को स्पष्ट करने की चेष्टा की गई है। इस सम्बन्ध में आलोचना करते हुए हमने मुख्यतया निराला पर रवीन्द्रनाथ का प्रभाव ही प्रदर्शित किया है। इसके अनिर्दिष्ट आनुपगिक रूप में विवेकानन्द, नजरूल-इस्लाम, द्विजेंद्रलालराय तथा बंगाली या मँपिली वैष्णव कवि विद्यापति और चण्डीदास के प्रभाव की भी आलोचना प्रस्तुत की गई है। चूंकि 'निराला-काव्य पर बंगला का प्रभाव आलोचना का विषय रहा है इसीलिए बगीच चिन्तनधारा तथा आत्मावरण के प्रभाव को भी स्पष्ट कर दिया गया है। सम्पूर्ण निबन्ध में आनुपगिक प्रभाव-प्रदर्शन के अनिर्दिष्ट मुख्यतया तीन विषयों पर व्यवहारगम आलोचना प्रस्तुत की गई है—

१ निराला के काव्य की आलोचना।

२ रवीन्द्र के काव्य (सप्तम) की आलोचना।

३ निराला और रवीन्द्र के काव्य को साम्य या वैषम्यमूलक आलोचना।

निराला के काव्य की आलोचना करते हुए उनके सम्पूर्ण काव्य साहित्य की व्यवहारगम (प्रैक्टिकल) आलोचना प्रस्तुत की गई है और साथ ही रवीन्द्र के काव्य-साहित्य के विचार-पक्ष तथा कलापक्ष को आलोचना का विषय बनाया गया है। पृथक् आलोचना होने के उपरान्त निराला पर रवीन्द्र के प्रभाव-विस्तार की व्याख्या की गई है और निष्कर्ष रूप में रवीन्द्र से साम्य या वैषम्य का भी प्रदर्शन किया गया है। निराला द्वारा अनुदिन बंगला-कविताओं जाने परिसिष्ट^१ में रवीन्द्र के विचारों के इस विभाग की व्याख्या मनोवैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से प्रस्तुत की गई है। इस प्रकार सम्पूर्ण निबन्ध की विषयवस्तु निराला तथा रवीन्द्र के काव्य की आलोचना ही रही।

प्रस्तुत निबन्ध की आलोचना का तटस्थ विषयगत लक्ष्य की व्याख्या ही रही इसीलिए निराला की मौनता या हिन्दी-साहित्य की निराला की मौलिक देन

इस प्रकार निराला के गीतों के प्रतिपाद्य पर स्पष्टतया रवीन्द्र का प्रभाव परिलक्षित होता है। यद्यपि यह कहना ही पड़ेगा कि निराला के गीतों में भाव-प्रवणता, सहज अन्त प्रेरणा तथा प्रवाहमयी शैली का अधिकतर अभाव है। इनमें गेयता तथा आत्मतत्त्व के गुण प्राप्त हो जाते हैं परन्तु रागात्मक अन्विति के अभाव के कारण इनमें भाव का सहज उच्छ्वलन दृष्टिगोचर नहीं होता। शायद इसी कारण डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी निराला के गीतों को, मुख्यतया गीतिका के गीतों को ठूठ व पर्याय में रखते हैं।^१ इसी कारण उनके गीत द्विजेन्द्रलाल-राय तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर की तरह इतने प्रसिद्ध नहीं हो सके हैं। वाद में चलकर उन्होंने "नये पत्ते" में गजल के तर्ज पर कुछ गीत लिखे थे परन्तु यहाँ भी निराला व्यर्थ हुए। डा० भटनागर कहते हैं कि नजरल की गजलो में बंगला की अपनी रूप-रेखाएँ उभर आई हैं। यह बात निराला की इन गजलो में नहीं।^२ जहाँ निराला ने हिन्दुस्तानी सगीत के आधार पर गीत रचे वहाँ वे सफल बन पाये हैं जिसके उदाहरणों से सम्पूर्ण गीतिका के पृष्ठ भरे पड़े हैं।

जहाँ तक निराला के गीतों के कला-पक्ष का सम्बन्ध है वहाँ वे रवीन्द्र के गीतों की सहज भाषा, रीति तथा ढंग से प्रभावित दिखाई पड़ते हैं यद्यपि कही कही रवीन्द्र की तरह तत्सम शब्दों का प्रयोग भी काफी करते हैं। रवीन्द्र ने कीर्तन, बाउल तथा भाटियाली आदि लोक-गीतों के ढंग पर अपने गीत रचे परन्तु ऐसा कुछ काम निराला ने अपने गीतों में नहीं किया यद्यपि रवीन्द्र की वान्त पदावली तथा नजरल की उदात्त शैली का अपने गीतों के लिए निराला ने ग्रहण किया था। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि रवीन्द्र के गीतों से अनुप्राणित निराला ने अनेक गीतों की रचना की परन्तु ये गीत भाव तथा कल्पना की अन्विति के अभाव के कारण प्रायः रवीन्द्र के गीतों की भाँति सुन्दर तथा कलात्मक रूप धारण नहीं कर पाये। जहाँ कहीं भी वे भाव तथा कल्पना की अन्विति करने में समर्थ हुए हैं वहाँ निराला की प्रतिभा स्पष्टतया सहज रूप से उद्गीत का रूप धारण कर लेती है और गीत के माध्यम से अपनी विद्युच्छटा की प्रतिभासित करती है।

१. हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिंदी साहित्य, पृ० ४६६

२. भटनागर * कवि निराला : एक अध्ययन, पृ० २३०

पत पर रवीन्द्र के प्रभाव की आलोचना करते हुए कहते हैं कि प्रभाव का अपहरण न कहकर अलंकरण कहना चाहिए। इस अलंकरण के प्रयास में ही द्विपी हुई है—निराला की मौलिकता, जिसका अभिनव रूप उनके काव्य के माध्यम से प्रकट हुआ है और इस प्रकार इस अलंकरण के प्रयास में ही द्विपी हुआ है। निराला का व्यक्तित्व जो कविताओं में अपने सम्पूर्ण काव्यत्व को लेकर प्रकट हुआ है और जिसका आशेष है—

“नव जीवन की प्रबल उमंग,
जा रही मैं मिलने के लिए, पार कर सीमा
प्रियतम असीम के सग।”

आदि विषयो को आलोच्य विषय के अन्तर्गत नहीं रखा गया है जिसके सम्बन्ध में भूमिका में बात स्पष्ट कर दी गई है। भूमिका में हमने कहा है कि निराला में मौलिकता का अभाव नहीं है और जहाँ रवीन्द्र से प्रभावित भी हुए हैं वहाँ रवीन्द्र के भाव को आत्मसात् कर उसको मौलिक रूप में प्रवृत्त भी किया है। 'प्रभाव' की आलोचना करने का या निराला के काव्य में बगीच प्रभाव-विस्तार को प्रदर्शित करने का अर्थ यह नहीं कि निराला में मौलिकता नहीं है वरन् उनकी या छायावादी कवियों की मौलिकता को बंगाली आलोचक भी स्वीकार करते हैं। सुधाकर चट्टोपाध्याय का कहना है—

छायावादी कविरा साहित्यकार कवि। भारतेर विभिन्न अचले तादेर अनेक कविताइ अनुकूल अम्यर्थना पावे सहृदय-हृदयेर काछे। तादेर अनन्त कवितार मध्ये खुजले अनन्त कालेर दु एकटि कविताओ आविष्कृत हवे।^१

अर्थात् छायावादी कवि वास्तविक कवि है। भारत के विभिन्न प्रान्तों के सहृदय-हृदय के पास से उनकी बहुत-सी कविताएँ अनुकूल अम्यर्थना पा सकेंगी। उनकी अनन्त कविताओं के बीच ढूँढने पर अनन्तकाल के लिए लिखी गई दो-एक कविताएँ अवश्य ही मिल जायेंगी।

यहाँ उपसंहार के रूप में दो प्रश्नों पर हम प्रकाश डालना उचित समझेंगे—

प्रथम, प्रभावान्वित कविताओं का मूल्य क्या है ?

द्वितीय, प्रभाव को किस रूप में निराला ने अपनाया है ?

प्रथम प्रश्न का उत्तर हम भूमिका में 'प्रभाव की उपयोगिता' में दे चुके हैं। यहाँ केवल इतना ही कहना है कि रवीन्द्र-प्रभावान्वित होने से ही निराला की कविताएँ मूल्यहीन नहीं हो जाती। जिस प्रकार रवीन्द्र की कविताओं ने, दूसरे साहित्यकारों के प्रभाव से पूर्ण होते हुए भी, अपनी अलग सत्ता को बनाए रखा है उसी प्रकार निराला की कविताएँ अनुकरण की स्थूलता से मुक्त होकर स्वीकरण की सार्थकता से पूर्ण बनी हुई हैं। यही निराला की कविताओं का परम मूल्य है और यह सार्थकता ही इन कविताओं को हिन्दी-काव्य की स्थायी सम्पत्ति बनाए रखेगी।

जहाँ तक दूसरा प्रश्न है कि निराला ने प्रभाव को किस रूप में अपनाया है उम्में उत्तर में हम यह सकते हैं कि अन्य छायावादी कवियों की तरह निराला के अनुकरण की चेष्टा अनुभूतिजन्य होने के अतिरिक्त अपने काव्य को प्रसन्न करने का प्रयास भी है। इस विषय में नन्ददुनारे वाजपेयी, सुमित्रातन्दन

उसो अर्थ को दूसरी भाषा में प्रस्फुटित कर देना उसका कर्तव्य है। यदि मूल में कोई चमत्कार हो तो अनुवाद में भी चमत्कार दिखलाना चाहिए। मूल की भाषा में यदि किसी ऐसे मुहावरे का प्रयोग आया है जिसकी और स्वभावतः पाठक खिच जाय तो अनुवादक को भी उसी ढंग का करना चाहिए। साराण यह है कि मूल की भाषा और भावों में अनुवाद की भाषा और भावा को निश्चित न होने देना चाहिए।^१

अनुवाद के सम्बन्ध में प्रत्येक बड़े आलोचक का भी यही मत है। अग्रजी साहित्य के विख्यात इतिहासकार कौमटन रिक्केट भी यही कहते हैं—

"A literal translation as the student of letters knows often does far less justice to the genius of the original than a free translation"^२

कौमटन रिक्केट ने अपना यह मत फिट्जल्ड द्वारा अनूदित उमर खैयाम की रबाइयो के सम्बन्ध में आलोचना करते हुए व्यक्त किया है। कौमटन रिक्केट कहते हैं कि "फिट्जल्ड द्वारा उमर खैयाम की रबाइयो का सफल अनुवाद का रहस्य है कि अनुवादक का व्यक्तित्व मूलवस्तु के साथ घुलमिल गया था और इसी मरमता के कारण अनुवाद इतना सफल हो पाया—

Although only a tolerable scholar with a partial knowledge of persian, he found in Omar a writer with whom he was spiritually at one, and for this reason his bold and unblushing liberties with the text, his own variation to the original music are in perfect accord with the primal melody. For this reason Fitz Gerald's translation has the force and beauty of an original work^३

निराला की अनूदित कविताओं के सम्बन्ध में भी बिल्कुल यही बात बही जा सकती है। रवीन्द्रनाथ तथा विवेकानन्द के विचारों द्वारा अनुप्रेरित उन्होंने काव्य-रचना प्रारम्भ की थी। इन दोनों बगला-बवियों का प्रभाव निराला के काव्य पर बराबर बना रहा, परन्तु निराला ने उस प्रभाव को घातमसात् कर लिया और यह घातमसात्, परस्पर के विचारों की समता के कारण ही सम्भव हो सका। निराला वेदान्त से प्रभावित थे इसीलिए वे 'विराट्' व

१. निराला, 'चरित्रहीन', चाबुज

२. Rickett. A history of Eng Lit Page 467

३. Rickett. A history of Eng Lit Page 467

परिशिष्ट

(१) निराला द्वारा अनुदित बगला-कविताएँ

निराला द्वारा अनुदित बगला-कविताएँ आलोच्य निबन्ध की परिधि के भीतर नहीं समा सकती क्योंकि सामान्यतः अनुवाद का 'प्रभाव' के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता है। परन्तु निराला के लिए अनुवाद एक सामान्य वस्तु नहीं है, उनके साहित्यिक जीवन में अनुवाद का एक विशेष स्थान है। निराला के लिए अनुवाद प्रभावसापक्ष है। जैसाकि वे कहते हैं कि अंग्रेजी या बगला की अनुदित पुस्तकों की भाषा चाह किंतनी सावधानी से क्यों न लिखी जाये परन्तु मूल ग्रंथों के जातीय भावों का निराकरण कभी किया नहीं जा सकता।^१ निराला ने उन्हीं दो बंगाली कवियों अर्थात् रवीन्द्र तथा विवेकानन्द की ही कविताओं का अनुवाद किया है जिन्होंने उन्हें गद्य की सृष्टि में सबसे अधिक प्रभावित किया है। इसी कारण, आलोच्य विषय की अग्रहानि के दोष से बचने के लिए अनुदित कविताओं पर आलोचना आवश्यक भी हो गयी है। और यह आवश्यकता और भी निगूढ़ बन जाती है जब हम अनुवाद के सम्बन्ध में निराला की मौलिक मान्यताओं से परिचित होते हैं। निराला के लिए अनुवाद प्रभाव-सापक्ष के अतिरिक्त व्यक्तित्व-सापक्ष भी है अर्थात् अनुवाद के लिए यह आवश्यक नहीं कि मूल पुस्तक का अक्षरशः अनुवाद किया जाय वरन् उसमें अनुवादक की व्यक्तिगत मान्यताओं तथा रुचि का रंग यदि चढ़ जाय तो कोई आपत्ति नहीं और वैसे भी व्यक्तिगत रंग तो अनुदित वस्तु में लग ही जाता है। निराला की अनुदित कविताओं में निराला के व्यक्तित्व की छाप स्पष्टतया परिलक्षित है। और इसीलिए इस विषय पर विवेचन आवश्यक हुआ है। यद्यपि व्यक्तिगत छाप का अर्थ यह नहीं कि अनुवादक मूल वस्तु के गाथ मनमानी करे। इसी बात को ध्यान में रखते हुए निराला ने कहा है—

अनुवाद के लिए यह नियम नहीं कि मूल पुस्तक का अक्षरशः अनुवाद किया जाय, परन्तु यह भी ठीक नहीं कि मूल का अर्थ आदि कुछ और हो और अनुवाद का कुछ और। अनुवादक का मूल के अर्थ पर ध्यान रखना चाहिए।

^१ निराला भाषा की गति और हिंदी की शैली, चयन

इस प्रकार हम देखते हैं कि निराला के अनुसार अनुवाद के लिए दानों भाषाओं का परिपक्व ज्ञान तथा अनूदित कविता के भावों का मुललित चित्रण आवश्यक है—यद्यपि अक्षरों तथा शब्दों तथा भाव-क्रम का अनुवाद आवश्यक नहीं है—इसी दृष्टि से देखने पर हम यह ज्ञात होता है कि जहाँ तक विवेकानन्द की कविताओं के अनुवाद का प्रश्न है निराला एक सच्चे अनुवादक रहे पाये हैं परन्तु रवीन्द्र की कविताओं का अनुवाद करते हुए वे अपने भाव, विचार तथा कल्पना के स्रोत में इतने आगे बढ़ गए हैं कि अनूदित कविताएँ मूल के भाव से स्पष्ट होने पर भी स्वतंत्र दील पढ़नी ह। किसी निष्कर्ष पर पहुँचने में पहले मूल तथा उसके अनुवाद पर आलोचना कर ली जाय।

**रवीन्द्र की कविताओं का अनुवाद
कहाँ देश है ? (निरुद्देशयात्रा)**

रवीन्द्रनाथ की रचनाओं की कालानुक्रमिक सूची के अनुसार हम अनूदित कविताओं की आलोचना करेंगे। इस दृष्टि से सर्वप्रथम रवीन्द्र के 'सोनारतरी' काव्यमग्न के अन्तर्गत 'निरुद्देश यात्रा' कविता के अनुवाद की आलोचना करनी होगी। 'निरुद्देश यात्रा' शीर्षक को बदलकर निराला ने कविता का नूतन नाम करण 'कहाँ देश है' रखा है। यहाँ 'सोनार तरी' काव्य मग्न के मूलगत भावना विचार को हम समझ लेना होगा कारण उसी से ही हम निरुद्देश यात्रा में अन्तर्निहित मूल चिन्तनधारा की अनुभूति होगी और हमें यह समझने में सुविधा भी होगी कि केवल अनुवादार्थ निराला ने इसका अनुवाद किया प्रथम इसकी भाव-धारा से प्रभावित होकर उन्होंने इसका प्रणयन किया और करते हुए उनके मौलिक भावों का भी समावेश इसमें हो गया।

'सोनार तरी' की चिन्तनधारा की आलोचना करते हुए सुकुमार गुन कहते हैं कि कविमानस की प्रवृत्ति तथा उसकी रस-दृष्टि के विकास तथा परिणति के माध्यम पर विचार करने से रवीन्द्रनाथ की मुदीर्घ काव्य-सृष्टि का तीन काल में विभक्त किया जा सकता है—

- आत्ममुग्ध—इन्द्रोत्प्रेक्षित
- प्रादुर्मुखी—प्रोत्प्रेक्षित
- परादुर्मुखी—रिद्रोत्प्रेक्षित

बचपन में बटार शान्त के अन्दर रहने से केवल उनकी अन्तर्दार्मी आत्मा ही प्रा-
न्धिक रचनाओं में प्रस्फुटित हुई है। धीरे-धीरे कवि चित्त अपनी रची हुई बाधा का

१. सुकुमार सेन, बागमा साहित्य रतिहाम कृत्य खट, पृ० ४

उपासक" थे और इसी कारण स्वामी विवेकानन्द के वेदान्त से अनुप्रेरित वे कविताओं का सफल अनुवाद कर सके। इससे प्रतिरिक्त रवीन्द्र की सौन्दर्यानुभूति तथा स्वदेश-प्रेम और रहस्यवादी कविताओं के विचारों का स्वतः स्फुरण उनके मन में बाल्यकाल से ही हो गया था इसी कारण वे रवीन्द्र के भी सफल अनुवादक बन सके क्योंकि विचारों की समता ही सफल अनुवाद का रहस्य है।

निराला के अनुवाद के प्रति अपने विचार सशक्त तथा प्रबल हैं। वे गलत अनुवाद के घोर विरोधी हैं और गलत अनुवाद करनेवाले को नीचा दिखाने में वे कदापि नहीं झुकते। पंडित रूपनारायण पाण्डेय के गलत अनुवाद पर निराला के विचारों को प्रकट करते हुए डा० रामविलास शर्मा लिखते हैं—

एक जगह 'फूलकी' का अर्थ पाण्डेय जी ने 'रोटी' लिखा था जबकि उम का अर्थ 'चिनगारी' था। बगला के वाक्य का अर्थ है—उसका तरण हृदय प्राग की चिनगो की तरह चारों ओर फैल रहा था (ताहादेर भावप्रवण तरण हृदय प्रागुनेर फूलकीर मतनेइ स्वाधीन आनन्देर उज्ज्वलताय धरो धरो प्रापनादिगवे चारिदिके विकीर्ण करिते थाकितो)। पाण्डेय जी ने अनुवाद किया था "उसका भाव-प्रवण तहण हृदय सिक् रही फूलकी (रोटी) की तरह ही स्वाधीन आनन्द की तरह फूल फूल उठता था।" पाण्डेय जी के अनुवाद पर टीका करते हुए निराला जी कहते हैं, "खूब ! पण्डित जी, जान पडता है, उम समय भूष बडे जोरो की लगी थी, नहीं तो रोटी क्यों सेंकते ? यहाँ न कहीं रोटी है न दाल, फूलकी है गो वह भी चिनगारी है रोटी नहीं। बरुपना भी कौसी ! मूल में तो है "विकीर्ण करिते थाकितो" और अनुवाद में "फूल फूल उठता था।" फूल-फूल उठना रूपनारायणजी की रोटी के लिए ही उपयुक्त है। अच्छा है, सेंकिए रोटी।" यहाँ निराला ने पाण्डेय जी के प्रति व्यक्तिगत रोष के कारण इस प्रकार की घालीचना नहीं की बरन् उन्होंने तो एक सच्चे अनुयायक के नाते गलत अनुवाद का केवल मशक्त शब्दों में विरोध किया है, नहीं तो पाण्डेयजी के सुन्दर अनुवादों का निराला सर्वदा प्रशंसा करते रहे। अनुवाद के लिए निराला दोनों भाषाओं के ज्ञान को बहुत महत्त्वपूर्ण समझते थे। उनका कहना है—

अनुवाद का अर्थ वही समझता है, मौलिक ग्रन्थ का चमत्कार उसी दृष्टि में अपनी शोभनीय सृष्टि रखता है—अनुवाद और मूल दोनों की भाषाओं पर जिसका पूर्ण अधिकार हो।^१

१ रामविलास शर्मा, निराला, पृ० ७८

२ निराला, चातक

द्वितीय स्तर की कविताओं में नव यौवन के अकृतार्थ प्रेम ने, रसायित लोकान्तर प्रादर्श में परिवर्तित होकर, कवि को चिरविरही बनाया है। यह विरह-रसायित प्रेम ही रवीन्द्रनाथ के कवि-जीवन का प्रधान आलम्बन बन गया है—

ए प्रेम आमार सुख नहे दुख नहे

इस द्वितीय स्तर की कविताओं में ही 'मानसी' का निजस्व स्वर ध्वनित है। वास्तव प्रेम के मोह के दूट जाने के साथ ही प्रेम-कल्पना को केन्द्रित कर कवि-हृदय की मारी आकाशा तथा आशा धीरे-धीरे सुस्पष्ट रूप धारण कर कवि-जीवन के ध्रुवतारा के रूप में उदित हुई है। यही रवीन्द्र की 'मानस-प्रतिमा' है।^१

'सोनार तरी' में हृदयवेग स्तिमित हो गया है तथा कवि-चित्त में गम्भीर शान्ति एवं कवि-दृष्टि में प्रगाढ़तर रसावेग का संचार हुआ है। 'सोनारतरी' की 'मानस सुन्दरी' कविता में 'मानसी' की 'मानसी प्रतिमा' को अतीत अनागत व चिरन्तन रसालोक में पहुँचाकर कविचित्त ने उसे रमानुभूति के परम आलम्बन रूप में ग्रहण किया है—

छिने खेलार सगिनी

एखन हयेछ मोर ममँर गेहिनी,

जीवनेर अधिष्ठात्री देखी ।

जीवन की अधिष्ठात्री देवी, अपनी मानस-सुन्दरी को लेकर कवि 'सोनारतरी' पर बैठ 'निरद्वेषयात्रा' को निकला है—विद्वज्जीवन की चेतना में जागृत होकर कवि गाता हुआ चला है—

आर कतदूर निघे जावे मोरे

हे सुन्दरी

चलो, योन पार मिडिबे तोमार

सोनार तरी ।

मोन की तरी की चालक मानस-सुन्दरी इसके उत्तर में हंस देती है। मानस-सुन्दरी रोमांस की नायिका या परी-कथा की मोहनी के रूप में कवि-हृदय के प्रविस सागर को मथित कर चली है फिर भी अपने रहस्य को सम्पूर्ण रूप में स्पष्ट नहीं करती—

तरीते उठिया, शुषानु तखन

आछे कि होयाय मवीन जीवन

भेद कर बृहत्संसार की विभिन्न अभिन्नता के स्वाद को ग्रहण करने निबल पड़ता है। मुकुमार सेन के अनुसार 'कडि ओ कोमल' काव्य सग्रह से यह द्वितीय अर्थात् प्राङ्मुखीन युग का प्रारम्भ होता है। कवि-हृदय की अतृप्त विरह-वेदना अब मर्मदहन का कारण बन बन रस-परिणति का कारण बनती है एवं भावापित अथवा 'आईडिएलाइज्ड' होकर एक ओर तो अतीन्द्रिय अघ्यात्मलोक तर बढ़ जाती है, और दूसरी ओर विश्व प्रकृति के बीच फँस जाती है।^१ यही से हम रवीन्द्रकाव्य के ब्रह्म तथा त्रिद्व, जीव तथा जगत् के अखंड भाव का कारण समझ पाते हैं। हमारा जीवन एक ओर ग्रह द्वारा केन्द्रित सीमाबद्ध है, दूसरी ओर त्रिद्व में परिब्याप्त है। जीवन जहाँ ग्रह केन्द्रित है, वहाँ 'मैं छोटा' म है तथा 'पिजरे की चिडिया' है। जीवन जहाँ विश्वमुखीन है वहाँ 'मैं बड़ा' म है तथा 'वन की चिडिया' है। तपनकुमार बन्धोपाध्याय के अनुसार इस ग्रह म विद्व की ओर बढ़ना, छोटा-मैं स बड़े-मैं की ओर अभिसार ही रवीन्द्र दर्शन तथा रवीन्द्र-साहित्य की मर्मवाणी है। 'सोनार तरी' काव्य में पिजरे क पक्षी तथा वन क पक्षी का पहला परिचय हम पाते हैं।^२ जिस अभिनव जीवन-ध्यान स अनुप्ररित कवि साने के पिजरे से निकल आए, जिस बृहत्तर जीवन-बोध से प्ररित कवि का मानसाभिमार शुरू हुआ, उसी विकसित चेतना अथवा बृहत्तर जीवन-बोध को ही कवि ने 'सोनार तरी' कहा है। कवि के सोने के पिजरे में एक सोने की तरी डोल रही है। पिजरे की चिडिया उस नीके की सहायता से बाहर निकलन की चेष्टा कर रही है। कवि पहले अपने व्यक्तिगत जीवन के सुख-दुख म मग्न थे, अब कवि विद्व-जीवन की आनन्द-चेतना स उद्बुद्ध हुए हैं। कविचित्त का यह उद्बोधन ही 'सोनार तरी' काव्य की मर्मवाणी है।

यद्यपि इस विन्तनधारा का मूलपात, जैसाकि हम पहले कह चुके हैं, 'कडि ओ कोमल' से हो गया था और 'मानसी म आकर इसको ओर भी अधिक स्पष्टता प्राप्त हुई। भाव तथा बालानुसार मानसी की कविताओं क दो स्तर लक्षित होते हैं। पहले स्तर की कविता म हम देखते हैं कि प्रम-स्वप्न द्विन्-भिन्न हो गया है और कविचित्त आत्मस्थ होकर स्थूल प्रेम की अनृप्ति तथा ग्नाति से चलकर स्थिरतर आत्मरति क मध्य आश्रय ढूँढ़ रहा है। फिर भी अन्नद्वन्द्व की धति बिल्कुल सुप्त नहीं हो गई है। इसीलिए प्रश्न है—

हृदयेर धन कभु धरा याप देहे ?

१ मुकुमार सेन, बगला साहित्यर इतिहास, सूनीय खण्ड, पृ० १३

२ तपनकुमार बन्धोपाध्याय, रवीन्द्र-त्रिपासा, पृ० १

सामना कवि को करना न पड़े—

भुलसाता जल तरल अनल
है प्लावित कर जग को असीम रोदन सहराता,
खड़ी दिग्बधू, नयनों में दुख की है गाथा
प्रबल वायु भरती है एक अघोर श्वास,
है करता अनय प्रलय का-सा भर जलोच्छ्वास,
यह चारों ओर घोर सशयमय क्या होता है ?
क्यों सारा सत्तार आज इतना रोता है ?
जहा हो गया इस रोदन का शेष,
क्यों सखि, क्या है वही तुम्हारा देश ?

परन्तु रवीन्द्र की कविता जीवन में भागना नहीं, जीवन को परिपूर्णरूप से पाने की व्याकुलता है जो साधारण मानवी प्रिया की सहायता से संभव नहीं वरन् उसके लिए तो एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो रहस्याच्छन्न विदेशिनी हो—

साधार रजनी आसिबे एलनि मेलिया पाखा,
सध्या-आकाशे स्वर्ण-भालोक पडिबे डाका ।

शुधु भासे तब देहसौरभ,

शुधु काने भासे जलकनरव

गाये उडे पडे सायुमरे तब केमेर राशि ।

विकल हृदय विवश शरीर

डाकिया तोमारे कहिय अघोर—

'कोया आछ भोगो, करह परस निकटे आसि ।'

कहिये न क्या, देखिते पाव नानोरव हासि ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि यह कविता वास्तव में अनुवाद नहीं वरन् रवीन्द्र के भावों का सचयन कर निराला ने अपने मन के अन्तर्द्वन्द्व को एक नया रूप देना चाहा है। रवीन्द्र के 'मानस मुन्दरी' जैसे अतीन्द्रिय रूपक को ग्रहण करने उसकी नयी सृष्टि में यह अन्तर्द्वन्द्व ही अधिभू प्रकट हुआ है जहाँ वह स्थूल तथा अतीन्द्रिय प्रेम का समन्वयात्मक रूप बन गया है। रवीन्द्र की कविता का स्वादित्व, इसी अन्तर्द्वन्द्व के कारण, इस कविता को प्राप्त नहीं हुआ है। निराला में पलायनवादी प्रवृत्ति अधिभू सशित होती है जहाँ रवीन्द्र की कविता में निज तथा विद्वत् के समन्वयात्मक बोध से परिपूर्ण जीवन की प्राप्ति की इच्छा अधिभू दिखाई पड़ती है। निराला को इस पलायनात्मक भाव के संप्रेषण के लिए रवीन्द्र की कविता के भाव-ध्रम का परिवर्तन करना पड़ा है और इस प्रकार

मानस-सुन्दरी विदेशी, 'अपरिचिता' है क्योंकि वहाँ कवि स्थूल प्रेम की अतृप्ति तथा ग्लानि से विमुक्त होकर स्थिरतर आत्मरति के मध्य आश्रय ढूँढ रहा है। और निराला म विराटत्व की जिज्ञासा के साथ ही अवचेतना से अनुप्रेरित रोमास का पुट कविता को कुछ और ही रूप दे देता है। इसी कारण रवीन्द्र की 'विदेशिनी' 'अपरिचिता' निराला के लिए 'प्रिय' तथा 'सखि' है। चूँकि निराला की मानस सुन्दरी उसकी अपनी प्रिया है इसीलिए वह उसे गाना भी सुनाती है, जो निराला की मौलिक सयोजना है—

प्रिय, सभालती हुई कपोलों पर के कुचित केश,
मुझे चढाया बाह पकड़ अपनी सुन्दर नौका पर,
फिर समझ न पाया, मधुर सुनाया कंसा वह सगीत
सहज-कमनीष-कण्ठ से गाकर ।

इसके अतिरिक्त निराला अपनी प्रिया के सान्निध्य में आकर वास्तविक जगत् की क्रूरता को भूल जाते हैं, यह भी निराला की मौलिक सयोजना है—

मिलन मुखर उस सोने के सगीत राज्य में
में बिहार करता था,—
मेरा जीवन—धम हरता था,
मीठी थपकी क्षुब्ध हृदय में तान-तरंग लगाती
मुझे गोद पर ललित कल्पना की यह कभी सुनाती कभी जगाती ।
जगकर पूछा, कहो कहीं मैं आया ?
हँसते हुए दूसरा ही गाना तब तुमने गाया

फिर व्याकुलचित्त होकर प्रिया के 'अस्त वस्त्र' को पकड़ना भी काफी रोमाण्टिक है, यह भी निराला की मौलिक सयोजना है—

झँका खिडकी छोल तुम्हारी छोटी सी नौका पर,
व्याकुल धों निस्सीम सिन्धु की ताल तरंगों ।

गीत तुम्हारा सुनकर,
विकल हृदय यह हुआ और जब पूछा मैंने
पकड़ तुम्हारे अस्त वस्त्र का छोर

वास्तव में रवीन्द्र की 'सोनार तरी' का रूपक अर्थात् व्यक्ति का विश्व में साथ मिलन के लिए यात्रा के भाव का प्रभाव निराला की कविता में दीखता है। निराला की कविता में जीवन की वास्तविकता से दूरे हुए कवि का जीवन में पलायन (Escape) की इच्छा अधिक द्रष्टव्य है और वह एक ऐसी भाव-देश में (Eutopia) भागकर जाना चाहता है जहाँ जीवन की क्रूर वास्तविकता का

भक्ति ही नहीं जीवन को भी भक्त्यात्मि की सेवा में लगा दिया है।^१ इसी में स्पष्ट करते हुए तपनकुमार बन्धोपाध्याय कहते हैं कि 'सोनार तरी' को भक्ति सत्ता की तरफ़ी ने विवेक्या को मन्तर की अघिष्ठात्री को देवी रूप में कल्पना क बात स्वयं रवीन्द्रनाथ ने व्याख्या करते हुए कही है। 'नैवध्य' और 'शांति निवेदन' में रवीन्द्रनाथ के जीवन-देवता का ध्यान विद्वदेवता के ध्यान में पर्यवसित हो जाना है परन्तु उस 'नैवध्य' और 'शांति निवेदन' के स्तर पर कवि 'सोनार तरी' के विवेक्या का आत्मगत रूप में ध्यान नहीं कर सके हैं। भावात्मक (objective) ध्यान-कल्पना 'सोनार तरी' में स्पष्ट नहीं है यद्यपि इसका इगिन अवश्य मिल जाता है।^२ 'सोनार तरी' में वृहत्तर जीवन-चेतना का बोध हो जाता है किन्तु यह विषयगत (subjective) है तथा वह केषल बोधमात्र है। यह बोधमात्र ही परवर्ती रचना में विद्वज्जीवन की वास्तविक भूमिका को ग्रहण करती है और इस प्रकार जीवन-देवता विश्व देवता में परिणत हो जाता है। 'सोनार तरी' से होते हुए 'विना' काव्य के भीतर से चलकर हम इस परिणाम में उपनीत होते हैं।

'निश्देश यात्रा' के विवेक्या में जीवन-देवता के बोध का प्रथम आभास हम प्राप्त होता है। यहाँ 'बोध' शब्द का प्रयोग जान-बूझकर किया गया है। कारण जैसा कि तपनकुमार बन्धोपाध्याय कहते हैं कि जीवन-देवता को रवीन्द्रनाथ ने एक निश्चित तत्त्व के रूप में नहीं जाना है, वरन् उसकी एक भाव या आइडिया रूप में उपलब्धि की है। इसलिए जीवन देवता के प्रसांग में हम रवीन्द्रनाथ के जीवन-देवता का ज्ञान नहीं करेंगे, जीवन-देवता का बोध कहेंगे। 'निश्देश यात्रा' की विवेदिनी ही में कवि के जीवन-देवता का प्रथम प्रथान होता है परन्तु ये विवेदिनी कवि के ही जीवनदेवता हैं यह बात तब तक कवि नहीं समझ पाए थे। जीवनदेवता का निगूढ़ मधोग अर्थात् तब परिस्पष्ट नहीं हुआ था, वे केषल कवि की जीवनरूपी वस्तु के उदासीन व्यथगायी ज्ञात होते हैं। जिस रहस्यमय में उसकी इकाय है उस रहस्यमय का पता कवि को नहीं है। उनको पूछने पर वे केवल मौन हैंसते हैं। यह रहस्यमय ही कवि के जीवन का कर्णधार है। इस प्रकार 'सोनार तरी' में हम देखते हैं कि 'जिम जगत्' में कवि के जीवन के मोन की प्रथम को मार्गकता प्राप्त होगी वह जगत् जिम प्रकार कवि के लिए प्रत्यक्ष है उसी प्रकार उम जगत् को पगल के अथगायी का परिषय कवि के लिए

१. सुकुमार मन्त्र : बाल्या मन्त्रदेव कथा, पृ० १०१

२. तपनकुमार बन्धोपाध्याय : कवि-विशाला, पृ० २२

३. कवि, पृ० २६

कविता की मूलगत भावना में प्रभेद आ गया है यद्यपि जहाँ कहीं वाक्यों को ग्रहण कर अनुवाद किया गया है वह सुन्दर तथा स्वच्छ हुआ है। उदाहरणार्थ—

नीरवे देलाओ अंगुलि तुलि

—भौन इशारा किया उठा कर बंगली सुमने ।

शोर

दूरे पश्चिमे डुबिछे तपन गगन कोणे ।

—धँसते पश्चिम सांध्य गगन में पीत तपन की शोर ।

शोर

भलितेछे जल तरल अनल,

गलिया पड़िछे अम्बर तल,

दिग्वधू येन छलछल-ध्रांलि अश्रुजले

—भुलसाता जल तरल अनल

गलकर गिरता सा अम्बरस्तल

है प्लावित कर जग को असीम रोदन सहाराता;

खड़ी दिग्वधू, नयनों में बुल की गाया ।

तथा

हू हू करे वायु फेलिछे सतत दीर्घश्वास

अन्ध आवेगे करे गर्जन जलोच्छ्वास ।

संशयमय धननील नीर,

—प्रथम वायु भरती है एक अधीर श्वास,

है करता अनय प्रलय का सा भर जलोच्छ्वास,

यह चारों ओर घोर संशयमय क्या होता है ?

तट पर (विजयिनी)

रवीन्द्रनाथ की दूसरी कविता 'विजयिनी' का अनुवाद निराला ने 'तट पर' शीर्षक से किया है। यह रवीन्द्र के 'चित्रा' काव्य-संग्रह में सगृहीत है। 'सोनार तरी' के उपरान्त ही रवीन्द्र का यह दूसरा काव्य-संग्रह है। मुकुमारसेन के अनुसार 'चित्रा' काव्य में 'सोनारतरी' रूपक ने एक विशिष्ट रूप धारण कर लिया है। कवि-मानस मुन्दरी, जीवन देवता रूप में, प्रेयसी राज्ञी के सिंहासन पर अधिष्ठित होकर उसके जीवन की निगूढ़ प्रेरणा को नियंत्रित कर रही हैं एवं उसकी समस्त सफलता-विफलता का पूजोपहार ग्रहण कर रही हैं। कवि ने अपनी

चेष्टा ही व्यजित हो पायी है और इसी कारण रूप का उदात्तीकरण (मबली-मंशन) यहाँ स्पष्ट हो उठा है ।

वामना के स्वयंभाष से विरहित महिमाय नारी-सौन्दर्य की अनवद्य प्रतिमा 'विजयिनी' है । ऐसा ज्ञात होना है कि बाणभट्ट की मानसी महादेवता को स्मरण कर रवीन्द्रनाथ ने विजयिनी का चित्र अंकित किया है । अश्वमेधरत्नरोवर ने नहाकर सोपान पारकर तीर पर आ खड़ी हुई है मुन्दरी—

छायाछानि रक्त पदतले
च्युत वसनेर मत रहिल पडिया;
अरण्य रहिल स्तम्भ, विस्मये मरिया ।

इस रूप को कवि वासना-भोग के द्वारा वांछना नहीं चाहते हैं । यह रूप महा-विद्वसगीत है । इस कविता में, समग्र विश्व-परिव्याप्त सौन्दर्य की बन्दीभूत सत्ता के सम्मुख, अनन्यदेवता को हम प्रणाम करते देखते हैं । सौन्दर्य-मत्ता को अनन्य देव भोग के बीच बांध नहीं मके है, उसको केवल प्रणाम कर कृतार्थ हुए हैं—

सम्मुखेते प्राप्ति
यमबिया दाँडाल सहासा । मुखपाने
चाहित निमेषहीन निश्चल नयाने
क्षणकाल तरे । परछाएँ भूमि परे
जानु पाति बसि, निर्वाक विस्मयभरे
नतशिरे, पुष्पधनु पुष्प शर भार
समर्पित पदप्रान्ते पूजा-उपचार
तूण शून्य करि । निरक्षत्र भदन पाने
चाहिता मुन्दरी शान्त प्रसन्न बयाने ।

रवीन्द्रनाथ इस भाव के सम्बन्ध में कहते हैं—'सौन्दर्य को हमारी वासना से, सोम से हटाकर स्वतन्त्र रूप में उगे नहीं देखने पर उसको पूर्ण रूप से देखना नहीं होना है । उस अशिक्षित असयत, अमम्पूर्ण दृष्टि से हम जो कुछ देखते हैं, उसमें हमें तृप्ति नहीं मिलती है, तृप्णा ही बढ़ती है ।'

प्रथम जीवन चौधुरी का कहना है कि सौन्दर्य-बोध के साथ रवीन्द्रनाथ की यह समय-भावना का अर्थ हम तभी समझ पाएँगे जब हम यह समझ लेंगे कि बाहर के साथ अन्दर की मंत्री की स्थापना से ही सौन्दर्य का बोध होता है और यह मंत्री तभी मभव हो सकेगी जब बाहर की किसी चीज से अपने स्वार्थ के

अस्पष्ट है। 'सोनार तरी' में जो विरोध तथा वेदना दिखाई पड़ती है वह मूलतः रम बोध की अस्पष्टता के कारण है।^१

परन्तु 'चित्रा' में यह बोध और अस्पष्ट नहीं रह जाता है। अब कवि के सम्मुख दो जगत् स्पष्ट हो उठे हैं—एक रूपमय विश्वजगत् दूसरा भावमय स्वप्न-जगत्। यह दोनों जगत् ही अपने स्व-पार्यवय को लेकर कवि के सम्मुख स्पष्ट हो उठे हैं। एक जगत् में कवि नाना प्रकार के दुःख, दैन्य तथा अभाव अभियोग की अनुभूति कर रहे हैं एवं दूसरे जगत् में परिपूर्णता तथा सार्थकता की अनुभूति हो रही है—वहाँ सब दैन्य विलीन हो चुका है, समस्त अभाव मिट चुके हैं। किन्तु इस स्पष्टता में भी कवि मन के विरोध का शमन नहीं हो पाया है। कवि इन दोनों पृथक् जगत् के मध्य सामजस्य स्थापित करना चाहते हैं परन्तु इनके बीच सामजस्य स्थापित नहीं कर पा रहे हैं। कवि जब भाव-राज्य में चले जाते हैं तब उस अन्तर के अन्त पुर से समस्त विश्वजगत् निर्वासित हो जाता है, और फिर जब विश्वजगत् में वापिस चले आते हैं, तब उस मुख स्वर्गलोक से उन्हें विदा लेनी पड़ती है। चूँकि रवीन्द्रनाथ पलायनवादी (एस्केपिस्ट) कवि नहीं हैं इसीलिए वास्तविक जगत् को वे तुच्छ नहीं समझते हैं और मुख स्वर्गलोक से उसके सामजस्य की चेष्टा करते हैं। कारण इन दोनों के सामजस्य से ही मानव की मानवता का परिचय उद्घाटित होता है जैसे रवीन्द्रनाथ ने स्वयं कहा है—

'वास्तविक जगत् में मनुष्य का जो परिचय है वही उसकी प्रतिष्ठा है। परन्तु बाहर के इस परिचय का यदि भीतर के सत्य के साथ मिलन न हो तो उसके अस्तित्व में एक आत्मविच्छेद घटित होता है।' रवीन्द्र इन दोनों का मिलन चाहते हैं परन्तु चाहने पर भी मिलन नहीं हो पा रहा इसीलिए कहीं केवल रूप-लोक का वर्णन है तो कहीं भावलोक का। परन्तु इन दोनों लोकों में सामजस्य ढूँढ़ते हुए कवि ने अनुभव किया कि 'दीनता से होकर महिमा के बीच, शुद्ध से होकर बृहत्तर के मध्य, मकीर्णता से होकर व्यापकता के बीच आत्मा के विकास द्वारा मानव का मन मुक्ति लाभ करता है, और उस आदर्शलोक में समस्त अस्पष्टता के बीच कवि अपने जीवन देवता को अधिष्ठित देखते हैं।' परन्तु 'चित्रा' में सामजस्य नहीं हो पाया है केवल कवि के रूप-जगत् में अर्थात् सीमा में उसे बाँधने की

१ तपनकुमार बन्योपाध्याय रवीन्द्र-त्रिष्टम्भा, पृ० ३६

२ रवीन्द्रनाथ : 'धर्म'

३. तपनकुमार बन्योपाध्याय रवीन्द्र-त्रिष्टम्भा, पृ० ४८

—तो भी यह कहना ही पड़ेगा कि इस भाव की व्यञ्जना रवीन्द्रनाथ की कविता में, कामदेव के प्रतीक की सहायता से, अधिक प्रेयणीय (Communicative) हो पाया है। कामदेव चिरन्तन वसन्त के प्रतीक हैं और उस चिर-वसन्त का निरस्त होकर विजयिनी को प्रणाम करना विजयिनी के स्थूल देह-सौष्ठव के चित्र को एकदम ही उदात्त बना देना है पर निराला का—

नव-वसन्त कृपा पत्रों में,

देख हृगों की कौर ।

—से साधारण वसन्त ऋतु का ज्ञान होता है और उसके—

मूर्छित वसन्त पत्रों पर ।

—इस समाचार से वसन्त का चिर-सौन्दर्य के सम्मुख आत्मसमर्पण नहीं करन उसे देखकर भावावेग में मूर्छित होना ही प्रकट होता है। और आखिर के दो पद—

तरु से वृन्तच्युत फूल,

गिरे उस तरुणी के चरणों पर

—से ऐसा प्रकट होता है कि वसन्त के मूर्छित होने पर उसके देहभार से विध्वस्त वृक्ष से वृन्तच्युत होकर कुछ फूल भ्रकस्मात् ही तरुणी के चरणों पर गिर पड़ते हैं न कि वसन्त के प्रणाम-निवेदन स्वरूप के गिरे हैं। वास्तव में प्रमग के प्रसग को हटाकर साधारण वसन्त के प्रमग की उत्पापना द्वारा निराला रवीन्द्र के भाव का सौन्दर्य को खो देते हैं।

इसके अनिश्चित निराला नए शब्दों की सयोजना से घपवा रवीन्द्र के शब्दों का व्यञ्जहार न करने से रवीन्द्र की कविता के चित्रात्मक रूप वैभव का समाहार घपनी कविता में नहीं कर पाये हैं। उदाहरणार्थ—

सड़ी बुर सारस की जोड़ी,

क्या जाने क्या क्या कहकर दोनों ने घोवा मोड़ी ।

अभिघातक चित्र के रूप-वैभव में निराला ने 'क्या जाने क्या-क्या कहकर' शब्दों की सयोजना कर उसके वाग्मयिक रूप-सौन्दर्य की हानि कर दी है। रवीन्द्रनाथ का यह चित्र अथिच सुन्दर तथा भावों के सप्रेयण में अथिच सहायक है—

कपोत इम्पति

घति शान्त अकम्पित अम्पारे डाले

घन धंभु धुंभनेर अकसार बाले

निभूते कर्तितेदित बिदूत बूजन ॥

यास्तव में पूरी कविता में जिनने भी अभिघातक चित्रों का वर्णन है वे मूल

लिए प्रेम न कर हम उसे उसके लिए ही (A thing for its own sake) प्रम करें ।'

इस प्रकार, रवीन्द्रनाथ की 'विजयिनी' कविता की आधारभूत चिन्तनधारा के सम्बन्ध में हम जान जाते हैं ।

इसके अनुवाद में भी निराला ने वही प्रथा अपनायी है जिस प्रथा से अनु-प्रेरित उन्होंने 'निर्देश यात्रा' का अनुवाद किया था अर्थात् अनुवाद न करके केवल बुद्ध भावों को ग्रहण कर अपने मौलिक भावों के साथ उसकी संयोजना करते हुए अपनी चिन्तनधारा को एक नवीन रूप दिया है । यह कविता भी सन् १९२४ को लिखी गई थी और निराला के जीवन का यह एक ऐसा समय था जबकि वे रोमान्स तथा वृहत्तर जीवनोपलब्धि के बीच मडरा रह रहे थे और इस आवर्तन में फँसे हुए वे रोमान्स को ही अधिक रूप दे रहे थे । रवीन्द्र की भाँति वे स्थिरतर आत्मरति में सौन्दर्य की अनुभूति कर स्व का विश्व में विकास नहीं कर पाये थे इसीलिए जहाँ तक रवीन्द्र की सौन्दर्यानुभूति में वासना के पुट का लेशमात्र नहीं वहाँ निराला की सौन्दर्यानुभूति में वासना चारों ओर घाई हुई है और उस वासना को रूप देकर ही वे शान्त नहीं होते हैं वरन् पादटिप्पणी लिखकर स्पष्ट भी कर देते हैं—

नग्न बाहुओं से उछालती नीर,
तरंगों में डूबे दो कुमुदों पर
हँसता था एक कलाधर

निराला ने ही इसका भाव स्पष्ट किया है—'(दिन में भी) दो कुमुद (उरोजों) को देखकर धन्द्र (मुख) हँस रहा था ।' यद्यपि 'विजयिनी' कविता के समान इस कविता का अन्त भी प्रेम के उदात्तीकरण से हुआ है—

घाघु सेविका-सी आकर
पीछे युगल उरोज, बाहु, मधुराधर ।
तरंगों ने सब ओर
बेल, मन्द हँस, छिपा लिये उन्नत, पीन उरोज,
उठा कर शुष्क वसान का छोर ।
मूर्च्छित वसन्त पत्रों पर,
तब से मृगतप्युत बुद्ध फल
गिरे उस तरंगों के धरलों पर ।

उड़िया चलितेछिल गलितनीहार
कंलासेर पाने । यहू वनगध बहे
अकस्मात् भान्त वायु उत्तप्त आग्रहे
लुटाय पड़ितेछिल मुदीर्घ निश्वासे
मुग्ध सरसोर वक्षे स्निग्ध बाहुपासे ।

फिर निराला ने जहाँ-जहाँ रवीन्द्र के भावों का भाषानुवाद किया है वे साधारणतया ठीक नहीं हो पाये हैं और बड़ी-बड़ी गलत अर्थ भी लगा लिये हैं, जैसे रवीन्द्र के अच्योदसरसीनीरे का अनुवाद 'क्षीण-कटि तटिनी के तट' गलत किया है । 'अच्योर' का अर्थ 'क्षीण-कटि' नहीं है । फिर रवीन्द्र के वसन्त, यथा—

वसन्त नवीन

सेदिन फिरितेछिल भूवन व्यापिया
प्रथम प्रेमेर मतो कापिया कापिया
अरु अरु सिहरि सिहरि

—के इस प्रसंग को निराला ने वसन्त तथा वायु में बाट कर भाव के घनत्व को कम कर दिया है जैसे—

नव वसन्त करता था वन की संर

× × ×

बाप रही थी वायु प्रीति की प्रथम रात की
मवागता, पर प्रियतम-कर पतिता सो प्रेममयी ।

फिर रवीन्द्र के समीरण के 'प्रलाप' को 'मेल' में परिवर्तित करना उचित नहीं हुआ है । यथा—

समीरण

प्रलाप बहितेछिल अच्योदसघन
पल्लव शयन तले, मध्याह्नरे ज्योति
मूछित वनेर बोले,

और निराला

पर नीरव अपरिचितान्सी

किरण-बालिबार्से सहरो से

मेल रही थी अपने ही मन से, पहरों से ।

यद्यपि बड़ी-बड़ी अनुवाद स्वच्छ तथा सुन्दर हुआ है तथापि भाव को प्रेमणीय बनाने में सफल भी हुआ है । उदाहरणार्थ—

भाव—अर्थात् नारी के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति में सहायक रूप में है। वे चित्र एक ऐसे वातावरण की सृष्टि करते हैं जिसमें नारी का सौन्दर्य द्विगुणित हो जाता है और वह सौन्दर्य बहुत ही सहज रूप में हमारे लिए प्रेयणीय बन जाता है। परन्तु निराला ने अधिकतर उन सब चित्रों को त्याग दिया है और इस प्रकार सौन्दर्यानुभूति के वातावरण की सृष्टि नहीं कर पाये हैं। परन्तु रवीन्द्र के वे चित्र वातावरण के लिए बहुत ही उपादेय सिद्ध हुए हैं, जैसा कि—

चौदिके उठिते छिल मधुर रागिनी
जले स्थले नमस्तले । सुन्दर काहिनी
के येन रचिते छिलो ध्याया रौद्रकरे,
अरण्ये र सुप्ति धार पातार मर्मरे,
यत्नन्तदिनेर कत स्पन्दने कम्पने
निशवासे उच्छवासे भाये धामासे गुजने
चमके झलके । येन आकाशवीनार
रधिरश्मि तत्रोगुलि सुरवालिकार
घम्पक अगुलिघाते सगीत भकारे
कादिया उठिते छिल मीन स्तम्भतारे
वेदनाय पीडिया मूर्छिया । तरुतले
स्खलिया पडिते छिल नि शब्दे विरले
विषय सकुलगुलि, कोकिल केवलि
अशान्त गाहिते छिल, विफल काकलि
कादिया फिरिते छिल वनात्तर धुरे
उदासिनी प्रतिप्वनि, धायाय अदूरे
सरोवर-प्रान्तदेशे सुदृढ निर्भरिणी
कल नृत्ये बाजाइया माणिक्यकिकिणी
कल्लोल निशिते छिल, तृणाचित तीरे
जलकलकलस्वरे मप्याह्न समीरे
सारस धुमाये छिल दीर्घ शोवास्तानि
भगीमरे बाकाइया पृष्ठ लये टानि
धूसर डानार भाभे, राजहस बल
आकाशे बलाबा बाधि सरवर घघल
रयजि कौन दूर नदी—संकेत विहार

निराला बहुत ही सफल हुए हैं। यहाँ अनुवाद का प्रश्न नहीं निराला के कवित्व का प्रश्न है और कवित्व का विषय अर्थात् लज्जाशीला नारी का वर्णन बहुत ही सफल हुआ है और उसके लिए निराला की मौलिक उद्भावनाएँ भी बहुत ही स्पष्ट हैं तथा व्यञ्जना में सहायक बनी हैं। यथा—
 देख चतुर्दिक, सरिता में
 उतरी तिर्यग्दृग्, अविचल-चित्त ।

तथा—

तरुणी ने सब धोर
 देख मन्द हैस, धिपा लिए उन्नत पौन उरोज
 उठाकर शुष्क बसन का धोर

—प्रादि वर्णन में विषयानुकूल नारी का ही रूप चित्रित हुआ है। कदाचित् इसी कारण कविता के शीर्षक 'विजयिनी' को बदल कर 'तट पर' शीर्षक के द्वारा नारी के नदी-तट पर एक साधारण रूप-सौन्दर्य का चित्र प्रकृत करना ही निराला का अभीष्ट था और इस कार्य में वे सफल भी हुए हैं।

ज्येष्ठ (वंशाख)

रवीन्द्रनाथ की रचनाओं की कालानुक्रमिक सूची के अनुसार तीसरी अनु-
 दित कविता 'ज्येष्ठ' है। रवीन्द्रनाथ के 'कल्पना' काव्य-मण्डल में सशुद्ध यह
 कविता है जिसका शीर्षक रवीन्द्रनाथ ने 'वंशाख' रखा था।

रवीन्द्र की रचनाओं की कालक्रमानुसार प्रालोचना करते हुए हमें यह
 देखा कि 'चित्रा' की कविताओं में 'सोनारतरी' के विद्युद्द हृदयावेग के उपर
 भक्ति के रग का लेप लगा हुआ है। 'मानमगुन्दरी' के मानो ध्रुव-हृदय की वासना
 के प्रतीत में जाकर 'अन्तर्यामी' ही कवि के निरूद्ध व्यक्तित्व को दुःख-मुल की विचित्र
 अभिजाता के बीच से प्राव्याप्तिक अभिव्यक्ति तथा परम सार्थकता की धोर बढ़ाए
 ले जा रही है। 'चित्रा' के पदचात् 'वंशानि' में हम कवि को जीवन-रस की
 सर्वांगीण अनुभूति में अनुप्रेरित कर्मचावत्य-स्पृहा से मुक्त देखते हैं। जीवन के
 महज ध्यानन्द तथा प्रकृति के मरल गीन्दयों ने कवि के चित्त में रम की इष्ट परि-
 पूर्णता को मचिन किया है। यथा—

पग्य धामि हेरितेदि धाकासेर धालो
 पग्य धामि जगतरेे कासियादि मालो ।

१. सुकुमार सेन, बंगला साहित्य इतिहास, मूर्तप सखर

तीरे श्वेत शिलातले धुनील बसन
 लुटाइछे एक प्रान्ते स्थलित गौरव
 अनाहत;

—रखी साड़ी शिला-खण्ड पर
 ज्यो त्यागा कोई गौरव-वर ।

तथा—

जलप्रान्ते क्षुब्ध क्षुण्ण कम्पन रात्रिया,
 सजल धरणचिह्न आंकिया आंकिया
 सोपाने सोपाने, तीरे उठिला रूपसी;

× × ×

अगे अगे धीवनेर तरंग उच्छ्वस
 लावण्येद मायामन्त्रे स्थिच सर
 चन्दी हृषे आछे;

—विद्योग से नदी-हृदय कम्पित कर,
 तट पर सजल-वरण रेखाएँ निज अंकित कर,
 केश-भार जल-सिक्त चली वह धीरे-धीरे
 शिला खण्ड की ओर,

× × ×

अंग-अंग मे नव-धीवन उच्छ्वसत,
 किन्तु माघा लावण्य-पाश से
 नम्र सहास अचंचल ।

तथा—

सेवकेर मतो

सिक्त तनु मुष्टि निल घातप्त अंचले

—वायु सेविजा-सी आकर

पेछि युगल उरोज, बाहु, मयुराधर ।

इसके प्रतिरिक्त निराला को कुछ मौलिक उद्भावनाएँ सराहनीय हैं जैसे
 नारी का अपने साथ साड़ी लाना—

साथ बसन्ती रंग की, धुनी हुई, साड़ी लाई थी ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि रवीन्द्र की विजयिनी कविता से भाव ग्रहण
 करने पर भी निराला की नारी विजयिनी की तरह विद्व-सौन्दर्य का प्रतीक
 नहीं बरन् वह एक माधारण सुन्दरी सज्जाशीला नारी है और उसके वर्णन में

ज्वलितेद्ये सम्मुखे तोमार
 सोलुप चिताग्निशिखा लेहि लेहि विराट भ्रमर—
 निखिलेर परित्यक्त मृत स्तूप विगत चरसर
 करि भरमसार
 जिता ज्वले सम्मुखे तोमार ॥
 हे बंरागी करो शान्ति पाठ ।
 उदार उदास कण्ठ याक छुटे दक्षिणें मो घामे—
 याक नदी पार हूये, याक चलि ग्राम हते ग्रामे,
 पूर्ण करि माठ ।
 हे बंरागी, करो शान्ति पाठ ॥

यहाँ पर भी निराला रवीन्द्र की दूसरी कविताओं के अनुवाद के समान केवल कुछ भावों का चयन कर अपनी कविता में उसे स्पष्ट दे अपनी मौलिक चिन्तनधारा का विकास करते हैं और इस कविता में पूरे पूर्णरूप से अपनी चिन्तन-धारा की अभिव्यक्ति में सफल हुए हैं। सम्पूर्ण कविता एक अखण्ड इकाई (whole) रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित हुई है और रवीन्द्र के भाव की संयोजना द्वारा एक अखण्ड मौलिक भाव प्रस्तुति हो उठा है।

निराला के जीवन की दो मौलिक चिन्तनधाराओं का समन्वित रूप है यह कविता। कवि-भन का विद्रोह तथा विवेकानन्द के कर्ममय अद्वैतवाद की रूप मिला है इस कविता में। भूमिकारूप में कविता का पहला पद निराला की मौलिक रचना है—

ज्येष्ठ ! कुरता-कर्मक्षता के ज्येष्ठ ! सृष्टि के आदि !
 धर्म के उज्ज्वल प्रथम प्रकाश !
 अन्त ! सृष्टि के जीवन के हे अन्त ! विश्व के व्याधि !
 चराचर के हे निर्दय प्राप्त !
 सृष्टिमर के व्याकुल आह्वान !—अचल विश्वास !
 सृष्टिमर के शक्ति अक्षतान !—दीर्घ निश्वास
 बने हैं हम तुम्हें प्रेम-धामन्दर,
 आओ जीवन-शामन, बन्धु, जीवन-धन ।

इस प्रकार कवि विद्रोह की भावना से अनुप्रेरित हा समाज में शान्ति लाना चाहते हैं। कर्मवाद ही शान्ति का स्रोतक है और इसी भाव का सम्प्रेरण कविता के अन्त में हुआ है जो निराला की अपनी मौलिक देन है।

‘चैतालि’ में मुकुमारसेन के अनुसार कवि के दृष्टिकोण के दो रूपों की उपलब्धि होती है। एक तात्त्विक, दूसरा रोमाण्टिक और ‘कल्पना’ की अधिकतम कविताओं में रोमाण्टिक दृष्टिकोण का भाव प्रसार ही अधिक परिलक्षित होता है। परन्तु यह साधारण रोमाण्टिक दृष्टिकोण नहीं है कारण इस रोमाण्टिक दृष्टि-माधुर्य का अर्थ है—प्रत्यक्ष इन्द्रियानुभूति से निलिप्त होना—जो भाव हमें रवीन्द्र की कविताओं में सहज ही मिल जाता है। धीरे-धीरे ‘चैतालि’ के प्रदान्त परिवेग के अवसान पर मुक्ति का जो दान्तरस कविहृदय को आप्तुत किये हुए या वह जीवन की नूतनतर साधना के रुद्र ग्राह्यान से खतम हो जाता है।^१ मुकुमारसेन कहते हैं कि यह साधना नवनियुक्त मृत्यु का श्रमदुर्भर कर्म-चाचल्य नहीं, विश्वस्त सेवक का लीलासाहचर्य है।^२ ‘वपं शेष’ तथा ‘वेशाल’ के उन्मादमृत्यु म कविहृदय ने सर्वविध जडता तथा सस्कार से मुक्त होने के दुर्जय ग्राह्यान को स्वीकार किया है।

छाडो डाक, हे रुद्र वंशाल ।

भागिया मध्याह्न तन्द्रा जागि उठि बाहिरिब द्वारे,

चेये रब प्राणीशून्य दग्धतृण दिगन्तेर पारे

निस्तब्ध निर्याक ।

हे भंरव हे रुद्र वंशाल ॥

रुद्र एव गम्भीर रूप का प्रकृति-वर्णन रवीन्द्र-काव्य में हमें पहले-पहल यहीं देख पड़ता है। वर्णन में चित्र तथा संगीत का समन्वय दर्शनीय विशेषता है—

हे भंरव, हे वंशाल ।

धुलाय घूसर रुक्ष उड्डोन पिगल जटाजाल,

तपः क्लिष्ट तप्त तनु, भुषे तुलि पिनाक कराल

कारे दामो डाक,

हे भंरव हे रुद्र विशाल ॥

प्रकृति के इस रुद्ररूप के सम्बन्ध में एक बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भूमियकुमार सेन कहते हैं कि कवि प्रकृति के इस रूप को अधिक देर तक सह नहीं पाते हैं। दूर दिशा के घने पुजमेष की दीर्घ छाया को कवि ‘धरणीर स्निग्ध गन्धोच्छ्वास’ से कोमल बना देते हैं और वंशाल से अनुरोध करते हैं कि वह अपने दान्तधारि के द्वारा होमाग्निशिला को निर्वापित कर दे।^३

१. मुकुमारसेन ‘बागला साहित्ये इतिहास, तृतीय खण्ड

२. वही, पृ० ११६

३. भूमियकुमार सेन, प्रकृतिर कवि रवीन्द्रनाथ, पृ० १०६

वर्ष के उज्ज्वल प्रथम प्रकाश

ग्रीष्म ऋतु से वर्ष का प्रारम्भ मानने पर ज्येष्ठ वर्ष का प्रथम महीना होता है कारण वंशाक्ष में वसन्त छाया रहता है गरमी नहीं दिखाई पड़ती।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि निराला इस कविता में रवीन्द्र से भाव-प्रहण करने में सम्पूर्ण रूप से सफल हुए हैं और रवीन्द्र के प्रभाव को इन्होंने अपनी मौलिक चिन्तनधारा की सहायता से रम रूप में आत्मसात् कर लिया है। यही कारण है कि यह कविता निराला की श्रेष्ठ कविताओं में अन्यतम सिद्ध होती है।

विवेकानन्द की अनूदित कविताएँ

विवेकानन्द की कविताओं का अनुवाद करते हुए निराला ने रवीन्द्र की कविताओं के तथाकथित अनुवाद की भाँति केवल कुछ भावों का चयन कर मौलिक विचारों का प्रतिपादन नहीं किया है वरन् अक्षरशः अनुवाद किया है। विवेकानन्द के प्रभाव ने ही निराला को इन कविताओं के अनुवाद के लिए प्रेरित किया था। डॉ० रामविलास शर्मा इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि 'परिमल' की रहस्यवादी कविताओं को एक साथ पढ़ने पर पता लगता है कि रवीन्द्र से अधिक कवि पर विवेकानन्द का प्रभाव है। इष्टदेव की मातृ रूप में कल्पना को स्वामी विवेकानन्द ने ही लोकप्रिय बनाया था। 'देवी तुम्हें क्या दूँ' 'एक बार बस और नाच दयामा' आदि रचनाओं में यह प्रभाव स्पष्ट है। इन कविताओं की विशेषता यह है कि भावुकता के आसुओं के बदले जीवन की दारुण व्यथा को गहरे रंगों में अंकित किया गया है और माता के रूप में इष्टदेवी आनन्द से अधिक शक्ति की देवी बन गई हैं।'

मन् २४ में निराला जो ने स्वामी विवेकानन्द की कई रचनाओं का अनुवाद किया था। डॉ० रामविलास शर्मा का कहना है कि सरल भाषा के प्रवाह में वे मूल बगला के धोज की मलीमालि सुरक्षित रख सके हैं। इन कविताओं में शृंगार से विरक्ति और ध्वंस से प्रेम प्रकट किया गया है। ध्यायावादी कवियों ने प्रलयकर रत्न के ताण्डव के जो गीत गाये हैं, उनका श्रीगणेश 'नाचे उस पर दयामा' आदि कविताओं से होता है।' निराला ने सर्वप्रथम विवेकानन्द की 'गाद गीत सुनाते तोमाय' का अनुवाद किया था। अक्षरशः अनुवाद के होने पर विवेकानन्द की चिन्तनधारा के सम्बन्ध में आलोचना की आवश्यकता और नहीं रह गई है क्योंकि मूल भावधारा में वही भी परिवर्तन नहीं हुआ और न हो

१. रामविलास शर्मा : निराला, पृ० ६६

२. रामविलास शर्मा : निराला, पृ० ६६

कर्मयोग—की विमल पताका और मोह का अस्त,
 सत्य जीवन के फल का त्याग ।
 मृत्यु में तृष्णा में अभिराम एक उपदेश,
 कर्ममय, जटिल, मृप्त, निष्काम; देव, निश्शेष !
 तुम हों वज्र-कठोर किन्तु देवव्रत,
 होता है ससार अतः मस्तक—नत ।

और इस मौलिक भाव को स्पष्ट करने के लिए निराला ने रवीन्द्र के 'बंशाख' से भावों का चयन किया जो कविता के वातावरण में सुन्दर रूप से समा गया है। और उनका अनुवाद भी सुन्दर हुआ है यद्यपि यह अनुवाद अक्षरशः शब्दानुवाद नहीं है जैसे—

धुलाय घूसर रुक्ष उड्डीन पिंगल जटाजाल,
 तपः विलष्ट तप्त तनु, मुखे तुलि विषाण मयाल,
 कारे दाघो डाक,

==घोर जटा पिंगल भंगलमय देव ! योगिजन सिद्ध ।
 धूलि घूसरित, सदा निष्काम ।
 उग्र ! लपट यह लू की है या शूल—करोगे बिद्ध
 उसे जो करता हो आराम ।

तथा—

ज्वलितेधे सम्मुखे तोमार
 लोलुप चिताग्निशिला सेहि सेहि विराट अमर
 निखिलेर परित्याक्त मृत स्तूप विगत वत्सर
 करि भस्मसार

==उगलते आग धरा आकाश;
 पडा चिता पर जलता मृत गत वर्ष प्रसिद्ध असार,

तथा—तोमार गेदघा वस्त्रांचल

दाघो पाति नभस्तले-विशाल वंराग्ये भावरिया

==शाम हो गई, फंलाघो वह पीत गेदघा वस्त्र,
 रजोगुण का वह अनुपम राग,

तो हम देखते हैं कि मूल भावधारा की अभिव्यक्ति में चयन किये गये भाव यद्दुत ही सफ़्त रूप से संयोजित हुए हैं। इसके अतिरिक्त वर्षों को कर्ममय जीवन का प्रतीक मानने के कारण निराला ने "बंशाख" शीर्षक को बदल कर "ज्येष्ठ" धर लिया है; कारण ज्येष्ठ है—

गलता है हिम-भृग
 टपकता गुहा में,
 घोर नाद करता हुआ
 टूट पड़ता है गिरि,
 स्वप्न-समजल-विम्ब जल में मिल जाता है ।

इनके अतिरिक्त निराला ने मूल कविता के कुछ शब्दों में हेर फेर कर तथा कुछ नवीन वाक्यों का संयोजन कर भाव को और भी अधिक तीव्र बना दिया है । जैसे—

शिथिले दाडाय तूमि रेतें
 निर्वाक् आनन, छल छल आलिन
 चाह मम मुखपाने ।

श्रीर निराला का अनुवाद है—

किन्तु निशाकाल में
 देखता हूँ,
 शम्पा शिरोभाग में लड़े तुम चुपचाप,
 छल छल आँखें,
 हेरते हो मेरे मुख की ओर एक्-टक ।

यह अनुवाद मूल से अधिक सुन्दर है । यद्यपि एक स्थान पर निराला की, कुछ वाक्यों को कविता में फिर से दुहराकर अर्थ को सरल करने की चेष्टा खराब नहीं तो बेकार अवश्य रही है । जहाँ विवेचनम्ब केवल एक वाक्य को—

महा अन्धकार फेरे अन्धकार-शुभे

—दुहराते हैं वहाँ निराला पूरे भाव को दुहरा जाते हैं—

प्रलय के समय में जब
 ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता-सय
 होता है अगणन ब्रह्माण्ड-प्राप्त करके, यह
 ध्वस्त होता सतार,
 पार कर जाता है तर्क की सीमा को
 नहीं रह जाता कुछ सूर्य-चन्द्र-तारा-गृह—

यद्यपि हम इसे दोष नहीं कह सकते तथापि इनको हम गुण के अन्तर्गत भी नहीं रख सकते ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि उद्युक्त सामान्य श्रुति-विष्णुति के रहने पर भी यह अनुवाद गर्वोर्गीण शक्ति में गन्दर है ।

निराला ने किसी नए भाव की संयोजना की बात ही सोची है। अनुवाद की दृष्टि ने यह एक सफल अनूदित कविता है जहाँ शीर्षक से लेकर अन्त तक मूल की स्थिति उसी रूप में वर्तमान है। विवेकानन्द की कठिन चिन्तनधारा समन्वित कविता के सुष्ठु अनुवाद से निराला के गम्भीर बंगला-ज्ञान का पता चलता है। उदाहरणार्थ—

मेहतटे हिमानी पर्वत,
 योजन योजन से विस्तार ;
 अश्रुभेदी निरश्रु आकाशे
 शत उठे चूड़ा तार ।
 भ्रुकमकि ज्वले हिमशिला
 शत शत विजलि-प्रकाश ।
 उत्तर अयने विवस्वान,
 एकीभूत सहस्र किरण,
 कोटि बखसम करधारा
 ढाले यवे ताहार ऊपर,
 शृंगे शृंगे मूर्च्छित भास्कर,
 गने चूड़ा शिखर गह्वर,
 विकट निनादे ससे पड़े गिरिवर,
 स्वप्नसम जले जले जाय मिले ।^१

==योजनो तक फैला हुआ
 हिम से आच्छादित
 मेरु तट पर है महागिरि
 अश्रुभेदी बहु शृंग
 अश्रुहीन नभ में उठे,
 दृष्टि भ्रुकमसती हुई हिम की शिलाएँ वे,
 विद्युत्-विजास से है शतगुण प्रखर ज्योति ;
 उत्तर अयन में उस
 एकीभूत कर की सहस्र ज्योति-रेखाएँ
 कोटि-बखस-सम-सर-कर-धारा जय ढालती हैं,
 एक एक शृंग पर
 मूर्च्छित हुए-से-भुवन-भास्कर हैं बीसते,

तारों की कोमल भंकार
ताल-ताल पर घसी बढ़ाती
ललित वासना का संसार ।

इसके अतिरिक्त, इस स्पष्टीकरण की प्रक्रिया में उन्होंने अपनी ओर से कई वाक्यों की संयोजना कविता में की है, जैसे—

- १ मलय वनज-धन-धीवन हास
२. दहक दहक इह कपा रहों मू-नम के धोर ।
- ३ (बड़ा हाथ दोनों मिलने को)
चलती प्रकट प्रेम अमितार
४. (किन्तु कलापर को ही देता)
सारा विश्व प्रेम सम्मान
५. 'दयामयी' कह कह चित्लाते,
मां, दुनिया का देला डोंग ।

तथा ६ (भाचे उस पर श्यामा), धन रण
मे लेकर निज भीम कृपाण ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि निराला के श्रेष्ठतम अनुवादों में इस कविता को स्थान मिलेगा । अनुवाद करते हुए कविता में छिपे हुए सौन्दर्य का उद्घाटन करने में कवि निराला समर्थ हुए हैं और केवल समर्थ ही नहीं, बही-बही अधिक कवित्वमय होकर विवेकानन्द से आगे भी बढ़ गए हैं ।

'अनामिका' (१९३७) में जो तीसरी विवेकानन्द की अनूदित कविता है उसका शीर्षक है 'सखा के प्रति' । यह अनुवाद भी विवेकानन्द की अन्य अनूदित कविताओं के समान सुन्दर तथा स्वच्छ है । विवेकानन्द की कठिन भाषा का सुन्दर तथा प्रांजल अनुवाद सत्य ही प्रशंसनीय है । उदाहरणार्थ—

पल्लहीन शोन बिहगम, ए ये नहे पय पातावार
बारंबार पाइछ भापात, केन कर कृपाय उछम ?
छाड बिछा जप यज्ञ बस, स्वार्थहीन प्रेम ये सम्बल,
देख शिक्षा बेय पतंगम अग्निशिक्षा करि अलिगन ।
एपमुअ अन्ध कोटाअम, प्रेममत्त तोमार हृदय
हे प्रेमिवा, स्वार्थ मलिनता अग्निबुञ्छे कर विसर्जन ।

==पल्लहीन हो रहे हो तुम, मुनो वहा के वियोग सखल ।
नहीं कहीं बढ़ने का पय है, कहां भाग जाओगे तुम ?
बार बार भापात पा रहे—स्वार्थ कर रहे हो उछम ।

विवेकानन्द की दूसरी कविता 'नाचुक ताहाते श्यामा' का अनुवाद भी सुन्दर हुआ है। इस कविता में कोमल तथा कठोर भाव के चित्रों को पास-पास दिखाया गया है। कोमलता प्रत्येक को प्रिय है, यह भी अभिव्यक्त है—'मन चाय हासिर हिन्दोल' इत्यादि। कठोर भाव को कोई नहीं चाहता है, सभी उससे दूर रहना चाहते हैं। किन्तु कोमल-प्राण व्यक्ति यदि दारिद्र्य, दुःख, रोग, महामारी इत्यादि का देव्य कर भय से अभिभूत हो जाने है, फिर वह कोमलता मथार्थ दृष्टि से दुर्बलता तथा बापुष्यता है, उसको हटाकर सर्वदा मृत्यु को घालिंगन करने के लिए प्रस्तुत रहना ही वीरत्व तथा मनुष्यत्व है एव इस प्रकार के कठोर भावुक के हृदय पर श्यामा नृत्य करती है, वही यहाँ वर्णित है।

निराला ने अनुवाद करते हुए इसी भाव को सुन्दर रूप से व्यजित किया है और स्थान-स्थान पर मूल से अधिक कवित्वमय भाव को प्रकट किया है। उदाहरणार्थ—

भ्रमर च चल, कत या कमल दोले ।

==चल-शतदल पर भ्रमर बिहार ।

नि सन्दह निराला का यह अनुवाद अधिक कवित्वमय है। कवित्वमय का और एक उदाहरण—

स्वरमय पत्रप्रतिचय, सुजाय पाताय, शुनाय सोहागवाणी ।

==स्वरमय किसलय, निलय बिहगों

के बजते सुहाग के तार ॥

इसके अतिरिक्त विवेकानन्द के भावों को निराला नूतन शब्दों में सजाजित कर उसका अपूर्व स्पष्टीकरण करने में समर्थ हुए हैं। उदाहरणार्थ—

वर्णलेला धरातल छाया,

राग परिचय मावराशि जेगो उठे ।

==धरा-भ्रमर धारण करते हैं,—

रग के रागों के आकार

देल देल भावुक जन मन में

जगते कितने भाव उदार ।

और इस स्पष्टीकरण की प्रक्रिया में निराला कही-कही विवेकानन्द से घागे भी बढ़ गए हैं। जैसे—

धृतिपथे घोणार भ्रमर,

वातना विस्तार, राग ताल मान सथे ।

बजती है धृति पथ में घोणा,

रइल यखन केवल मुतेर लुण्ठन—इ
तखन केन बिस्मयेर एइ कुण्ठने
काल-प्रकालेर बाछ-बिचारें चुप, प्रिय ?^१

मुधाकर द्वारा अनूदित निराला की एक गद्य-कविता के कुछ अंश का अनुवाद भी नीचे प्रस्तुत किया जाता है :

भ्राज ठण्डक अधिक है ।
बाहर धोले पड़ चुके हैं,
एक हपते पहले पाला पडा या—
अइहर कूल-की कूल मर चुकी थी,
हवा हाड़ तक बेध-जाती है,
गेहूँ के पेड़ एंटे खड़े हैं,
खेतिहारों में जान नहीं
मनमारे दरबाजे बौड़े ताप रहे हैं
एक दूसरे से गिरे गले बातें करते हुए,
कूहरा धाया हुआ ।

इसका बंगला-अनुवाद है—

भ्राज ठण्डा किछु बेशि
बाइरे पड़ेछे शिल
हप्ता खानेक भागे भरेछे बरफ
अइरेर कूल के कूल गेछे मरे
हाधोया हाड़ेर भितर याच्छे बिये
गमेर धारा तेबड़े रयेछे खाडा
किसानदेर फुनि नेइ मने
मनमाररा-दरजाय धागुन पोयाच्छे
ए धोर साये निचुगलाय बइछे कया
छेयेछे कुयासा ।^१

(३) निराला की बंगला-कविताएं

निराला अपने प्रारम्भिक काल में बंगला-भाषा में कविताएँ रचा करते थे जिसका प्रमाण उनका एक दोहा है—

१. साहित्य-जनक-संशोधनाध्याय : साधुनिक भारतीय साहित्य, पृ० ५७

२. वही : पृ० ५८

जड़-समेत उखाड़कर, हर
बला पय की साफ करके ।
शोर से धा मिला सागर,
उठ रहे हैं कृष्ण नम की
स्पर्श करने के लिए द्रुत.

अनुवाद की सुन्दरता बगला के प्रख्यात कवि सत्येन्द्रनाथदत्त के अनुवाद से तुलना करने पर और भी स्पष्ट हो जाती है—

निःशेषे निबेधे तारादल, मेघ एसे धाबरिछे मेघ
स्पन्दित, ध्वनित अन्धकार, गरजिछे घूर्ण्यवायुवेग !
लक्ष लक्ष उन्माद पराण वर्हिगत बन्दिशाला हते,
महावृक्ष समूल उपाड़ि फुत्कार उड़ाये घले पथे ।
समुद्र संग्रामे दिल हाना, उठे डेउ गिरिचूड़ा जिनि
ममस्तल परशिते चाप !

(२) निराला की कविताओं का बंगला-अनुवाद

निराला के अनुवादों की आलोचना के उपरान्त निराला की कविताओं के बंगला-अनुवाद का उल्लेख कर देना यहाँ अनुचित न होगा । अनुवाद साधारण-तया लेखक मूल की भावनाओं से प्रभावित होकर ही करता है । परन्तु निराला जहाँ बंगला से प्रभावित हुए थे वहाँ बंगला को भी उन्होंने प्रभावित किया है । इसीलिए उनकी कविताओं का अनुवाद हमें बंगला-भाषा में प्राप्त होता है । सुधाकर चट्टोपाध्याय द्वारा अनूदित कविताओं के कुछ अंश नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

कब से मैं पय देख रही, प्रिय
और न तुम्हारे देख रही, प्रिय ।
तोड़ दिये जब सब अवगुंठन
रहा एक बेचत मुझ लुण्ठन
तब क्यों इतना विस्मय कुण्ठन ?
असमय-समय न करो लड़ी, प्रिय ?

इसका बंगला-अनुवाद—

बबे देखे पय देखे धार काल गुणे
बसेइ धारिछ तोमार लागि हाय प्रिय ।
टूटल पलन सकल अवगुंठन-इ

रइल यखन केवल मुखेर लुण्ठन—इ
तखन केन बिहमयेर एइ कुण्ठने
काल-अकालेर बाछ-बिचारें धुप, प्रिय ?^१

मुषाकर द्वारा अनूदित निराला की एक गद्य-कविता के कुछ अंश का अनुवाद भी नीचे प्रस्तुत किया जाता है :

प्राज ठण्डक अधिक है ।
बाहर ओले पड चुके हैं,
एक हपते पहले पाला पडा था—
अइहर कूल-की कूल मर चुकी थी,
हवा हाड़ तक बेध जाती है,
गेहूँ के पेड ऐंठे खडे हैं,
खेतिहारों मे जान नहीं
मनमारे दरबाजे ढीड़े ताप रहे हैं
एक दूसरे से गिरे गले बातें करते हुए,
कूहरा छाया हुआ ।

इसका बंगला-अनुवाद है—

प्राज ठण्डा किछु बेसि
बाइरे पड़ेछे मित
हप्ता खानेक भागे भरेछे बरफ
अइरेर कूल के कूल गेछे मरे
हाओया हाइरेर मितर याच्छे बिधे
गमेर घारा तेबडे रयेछे खाडा
किसानदेर फुनि नेइ मने
मनमारा-दरजाय प्रागुन पोयाच्छे
ए ओर साथे निचुगलाय बइछे कया
छेयेछे बुयासा ।^१

(३) निराला की बंगला-कविताएं

निराला अपने प्रारम्भिक काल में बंगला-भाषा में कविताएँ रचा करते थे जिगका प्रमाण उनका एक दोहा है—

१. साहित्यरंजन बन्धुसोदाश्याय : आधुनिक भारतीय साहित्य, पृ० १७

२. वहा : पृ० १८

जड़ समेत उखाड़कर, हर
बला पथ की साफ करके ।
शोर से घा मिला सागर,
उठ रहे हैं कृष्ण नम को
स्पर्श करने के लिए द्रुत,

अनुवाद की सुन्दरता बंगला के प्रख्यात कवि सत्येन्द्रनाथदत्त के अनुवाद से तुलना करने पर और भी स्पष्ट हो जाती है—

नि शेषे निबेछे तारादल, मेघ एते धारिछे मेघ
स्फन्दित, प्वनित अन्धकार, गरजिछे घूर्णवायुवेग !
लक्ष लक्ष उन्माद पराण वर्हिगत बन्दिशाला हते,
महावृक्ष समूल उपाडि फुत्कार उडाये छले पथे ।
समुद्र सप्रामे दित हाना, उठे डेउ गिरिचूडा जिनि
नमस्तल परशिते धाय !

(२) निराला की कविताओं का बंगला-अनुवाद

निराला के अनुवादों की आलोचना के उपरान्त निराला की कविताओं के बंगला-अनुवाद का उल्लेख कर देना यहाँ अनुचित न होगा । अनुवाद साधारण-तया लेखक मूल की भावनाओं से प्रभावित होकर ही करता है । परन्तु निराला जहाँ बंगला से प्रभावित हुए थे वहाँ बंगला को भी उन्होंने प्रभावित किया है । इसीलिए उनकी कविताओं का अनुवाद हमें बंगला-भाषा में प्राप्त होता है । मुधाकर चट्टोपाध्याय द्वारा अनूदित कविताओं के कुछ अंश नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

कच से मैं पथ देख रही, प्रिय
और न तुम्हारे देख रही, प्रिय ।
तोड़ दिये जब सय अमगुंठन
रहा एक केवल मुल कुण्ठन
तब क्यों इतना विस्मय कुण्ठन ?
असपय-समय न करी लड़ी, प्रिय ?

इसका बंगला-अनुवाद—

बड़े धेके पथ देखे द्वार काल गुणे
बसेइ धादि तोमार लागि हाय प्रिय ।
टूटल अलन सखल अमगुंठन-इ

रइल यखन केवल सुखेर लुण्ठन—इ
तखन केन विस्मयेर एइ कुण्ठने
काल-प्रकालेर बाछ-विचारें चुप, प्रिय ?^१

सुधाकर द्वारा अनूदित निराला की एक गद्य-कविता के कुछ अंश का अनुवाद भी नीचे प्रस्तुत किया जाता है :

आज ठण्डक अधिक है ।
बाहर मोले पड़ चुके हैं,
एक हपते पहले पाला पडा या—
अड़हर कूल-की कूल भर चुकी थी,
हवा हाड़ तक बेध जाती है,
गेहूँ के पेड़ ँंटे खड़े हैं,
खेतिहारों में जान नहीं
मनमारे दरवाजे कौड़े ताप रहे हैं
एक दूसरे से गिरे गले बातें करते हुए,
कुहरा ध्याया हुआ ।

इसका बंगला-अनुवाद है—

आज ठाण्डा किछु बेसि
बाइरे पड़ेछे नित
हप्ता खानेक आगे भरेछे बरफ
अड़रेर कूल के कूल गेछे मरे
हाओया हाड़ेर नितर याच्छे बिधे
गमेर चारा तेबड़े रयेछे खाड़ा
किसानदेर फुति नेइ मने
मनमारा-दरजाय आगुन पोयाच्छे
ए ओर साथे निचुगलाय बइछे कया
देयेछे कुयासा ।^१

(३) निराला की बंगला-कविताएं

निराला अपने प्रारम्भिक काल में बंगला-भाषा में कविताएँ रचा करते थे जिम्मा प्रमाण उनका एक दोहा है—

१. साहित्य-जन सम्बन्धी-पत्रिका : आधुनिक भारतीय साहित्य, पृ० १७

२. वही : पृ० १८

जड़-समेत उखाड़कर, हर
 बला पथ की साफ करके ।
 शोर से घ्रा मिला सागर,
 उठ रहे हैं कृष्ण नम को
 स्पर्श करने के लिए द्रुत,

अनुवाद की सुन्दरता बंगला के प्रख्यात कवि सत्येन्द्रनाथदत्त के अनुवाद से तुलना करने पर और भी स्पष्ट हो जाती है—

निःशेषे निबेद्ये तारादल, मेघ एसे भावरिद्ये मेघ
 स्पन्दित, ध्वनित ग्रन्थकार, गरजिद्ये घूर्ण्यवायुवेग ।
 लक्ष-लक्ष उन्माद पराण र्वाहगत बन्दिशाला हते,
 महावृक्ष समूल उपाड़ि फुत्कार उड़ाये चले पये ।
 समुद्र संप्रामे दिल हाना, उठे डेउ गिरिचूड़ा जिनि
 नभस्तल परशिते चाय !

(२) निराला की कविताओं का बंगला-अनुवाद

निराला के अनुवादों की आलोचना के उपरान्त निराला की कविताओं के बंगला-अनुवाद का उल्लेख कर देना यहाँ अनुचित न होगा । अनुवाद साधारण-तया लेखक मूल की भावनाओं से प्रभावित होकर ही करता है । परन्तु निराला जहाँ बंगला से प्रभावित हुए थे वहाँ बंगला को भी उन्होंने प्रभावित किया है इसीलिए उनकी कविताओं का अनुवाद हमें बंगला-भाषा में प्राप्त होता है । मुघाकर चट्टोपाध्याय द्वारा अनूदित कविताओं के कुछ अंश नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

कत्र से मैं पथ देख रही, प्रिय
 और न तुम्हारे देख रही, प्रिय ।
 तोड़ दिये जब सब धवगुंठन
 रहा एक केवल मुख लुण्ठन
 तब क्यों इतना विस्मय कुण्ठन ?
 असमय-समय न करो लड़ी, प्रिय ?

इसका बंगला-अनुवाद—

बये थेके पथ थेये धार कास गुले
 बसेइ भाधि तोमार लागि हाय प्रिय ।
 टूटल बसन सकल धवगुण्ठन-इ

सहायक ग्रन्थों की सूची

हिन्दी

ग्रन्थकार	ग्रन्थ	प्रकाशक
१. केदारनाथसिंह	कल्पना और छायावाद	
२. गंगाप्रसाद पाण्डेय	महाप्राण निराला	साहित्य सप्ताह, प्रथमावृत्ति, म० २००६
३. गिरीशचन्द्र तिवारी	कवि निराला और उनका काव्य-साहित्य	साहित्य भवन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, २०१३ वि०
४. गुलाबराय	सिद्धान्त और अध्ययन	प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली
५. धीरेन्द्र वर्मा (म०)	साहित्य कोष	ज्ञान मण्डल लि०, बनारस
६. नगेन्द्र	आधुनिक हिन्दी-कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ	गीतम बुक डिपो, दिल्ली, प्रथम प्रकाशन सन् १९५१
७. नामवरसिंह	छायावाद	सरस्वती प्रेस, बनारस
८. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	परिमल	गंगा प्रयागार, लखनऊ
९. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	अनामिका	भारती भण्डार, इलाहाबाद
१०. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	गीतिका	भारती भण्डार, इलाहाबाद
११. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	तुलसीदास	भारती भण्डार, इलाहाबाद
१२. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	बुकुरमुत्ता	विताय महल, इलाहाबाद
१३. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	नए पत्ते	
१४. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	बेला	.
१५. 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	घबरा	साहित्यकार-मसूद्, प्रयाग

मा उसको कहती है रानी
 आदर से, जैसा है नाम;
 लेकिन उसका उल्टा रूप,
 चेन्नक के दाग, काली, नक-चिप्टी,
 गंजा सर, एक आंख कानी ।

जैसाकि हम बता चुके हैं कि ये पैरोडियाँ निकृष्ट कोटि की कलागत कृत्रिमता को प्रदर्शित नहीं करती हैं वरन् निराला की विद्रोही भावना ने हमारी सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य-प्रहार करना चाहा अतः फलस्वरूप इस प्रकार की कविताएँ उन्होंने लिखी जहाँ हृदय की व्यथा व्यंग्य में परिणत हो गई हैं। यही इन पैरोडियों का रूप है।

३४. विश्वरम्भनाथ उपाध्याय	महाकवि निराना—काव्य, कला और कृतियाँ	
३५. राम्भुनार्यासिंह	छायावाद युग	नरस्वती मन्दिर, बनारस
३६. शिवप्रसादसिंह	विद्यापति	
३७. हजारी प्रसाद द्विवेदी	हिन्दी-साहित्य	अतर चन्द्र कपूर एण्ड सस दिल्ली
३८. हजारी प्रसाद	हिन्दी साहित्य की भूमिका	हिन्दी ग्रथ रत्नाकर कार्या- लय, बंबई, चतुर्थ संस्करण

बंगला

३९. प्रमियकुमार सेन	प्रकृतिर कवि रवीन्द्रनाथ	विश्वभारती ग्रथालय, कलकता
४०. प्रमून्यधन मुषोपाध्याय	बंगला छंदेर मूलमूत्र	
४१. चारुचन्द्र बन्द्योपाध्याय	कवि-रसिम (द्वितीय खण्ड)	ए० मुषर्जी एण्ड को, कलकता
४२. तपनकुमार बन्द्योपाध्याय	रवीन्द्र-जिनासा	
४३. धूर्तप्रसाद मुषोपाध्याय	वक्तव्य	विद्योदय लाइब्रेरी
४४. प्रवान जीवन चौधरी	रवीन्द्रनाथेर सौन्दर्यं दर्शन	ए मुषर्जी एण्ड को०, कलकता
४५. प्रथमनाथ बिशी	रवीन्द्र काव्य प्रवाह (द्वितीय खण्ड)	मिन्न एण्ड घोष, कलकता
४६. प्रथमनाथ बिशी	नेहरू-व्यक्ति तथा व्यक्तित्व	
४७. बुद्धदेव बसु (सम्पादक)	धार्मिक बागना कविता	एन० वि० सरदार एण्ड मम लिमिटेड, कलकता
४८. मोहिन सात मजुमदार	साहित्य विचार	
४९. रवीन्द्रनाथ टाकुर	गीतावलि	विश्वभारती ग्रथालय, नूतन संस्करण, १९४५ बंगाल।
५०. रवीन्द्रनाथ टाकुर	मन्थिता	

ग्रन्थकार	ग्रन्थ	प्रकाशक
१६ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	गीत-पुज	हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस
१७ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	आराधना	साहित्यकार-संसद् प्रयाग
१८ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	अणिमा	युग मन्दिर, उन्नाव
१९ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	रवीन्द्र कविता वानन	हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस
२० 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	चयन	बल्याण दास एण्ड ब्रदर्स, वाराणसी
२१ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	प्रबन्ध-पद्म	श्री दुलारे लाल भागवत, लखनऊ
२२ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	चायुक	
२३ 'निराला' सूर्यकान्त त्रिपाठी	पत श्रीर पल्लव	
२४ 'प्रसाद' जयशंकर	काव्य कला श्रीर धर्म्य निबन्ध	
२५ बच्चनसिंह	क्रान्तिकारी कवि निगला	बाशी, प्रथम संस्करण, २००४
२६ मानव विश्वम्भरनाथ निराला—	काव्य-दिशाएं	
२७ रवीन्द्र सहाय वर्मा	हिन्दी-काव्य पर भारत प्रभाव	पंजा प्रकाशन, वानपुर
२८ महावीरप्रसाद द्विवेदी	सुनवि किवर	
२९ रामधारीसिंह	संस्कृति के चार अध्याय दिनकर	राजपाल एण्ड संस दिल्ली
३० रामचन्द्र शुक्ल	हिन्दी-साहित्य का इतिहास	नागरी-प्रचारिणी-सभा, बाशी, नूतन संस्करण ।
३१ रामविलास शर्मा	निराला	जन-प्रकाशन-ग्रुह, बम्बई ।
३२ रामरतन भटनागर	कवि निराला . एक अध्ययन	विज्ञान महल, इलाहाबाद
३३ वाजपेयी नन्द दुमारे	आधुनिक साहित्य	

- | | | |
|---------------------|---|---|
| 69. Codwell | Illusion & Reality:
A History of the
Sources of
Poetry | People's Publish-
ing House,
Bombay, 1947 |
| 70. Cecil Day Lewis | Poetic Image | Jonathan Cape,
London, 1947 |
| 71. Hurbert Spencer | The Origin and
Function of Music | |
| 72. Hippolyta Tenne | History of English
Literature | |
| 73. I.A. Richards | Principles of Lite-
rary Criticism | Routledge &
Kegan Paul Ltd ,
London. |
| 74. Progue | Romantic Agony | |
| 75. Shakespeare | Hamlet | |
| 76. T.S. Eliot | Selected Essays | Faber & Faber
Ltd., London |
| 77. W. H. Hudson | An Introduction
to the Study of
Literature | Geroge G. Harrap
& Co. Ltd. |

संस्कृत

- | | |
|-------------|-----------|
| ७८. उद्भट | कवि रहस्य |
| ७९. कानिदास | मेघदूत |
| ८०. | मजुर्वेद |

पत्र-पत्रिकाएँ

८१. काव्यशालीयन विद्योपांक—प्रालोचना वा २५वाँ अंक
८२. नया साहित्य, निराला अत्र
८३. साहित्य पत्रिका, कात्तिव २००७
८४. दी न्यू क्रास्मोपनी जनरल ऑफ क्रिचोगोत्रिकल स्टडीज, पुनाई, १९३६

ग्रन्थकार	ग्रन्थ	प्रकाशक
५१ रवीन्द्रनाथ ठाकुर	चयनिका	विश्वभारती ग्रन्थालय
५२ रवीन्द्रनाथ ठाकुर	सकलन	" "
५३ रवीन्द्रनाथ ठाकुर	पुनश्च	" "
५४ रवीन्द्रनाथ ठाकुर	साहित्य	" "
५५ रवीन्द्रनाथ ठाकुर	निबन्ध-संग्रह	" "
५६ रवीन्द्रनाथ ठाकुर	जीवन-स्मृति	" "
५७ विश्वपति चौधुरी	वाक्ये रवीन्द्रनाथ	मित्र एण्ड घोष, कलकत्ता
५८ विवेकानन्द	वीरवाणी	विवेकानन्द सोसाइटी, कलकत्ता
५९ विमल वाति समहार	रवीन्द्र काव्य कालि- दासेर प्रभाव	गुरदास चट्टोपाध्याय एण्ड सस, कलकत्ता
६० शातिरजन बन्धोपाध्याय	प्राधुनिक भारतीय साहित्य	
६१ शातिदेव घोष	रवीन्द्र संगीत	
६२ मुधाकर चट्टोपाध्याय	प्राधुनिक हिन्दी साहित्य बागलार स्थान, प्रथम खण्ड	शरत् साहित्य, कलकत्ता
६३ सुकुमार सेन	बागला साहित्यर इतिहास, तृतीय खण्ड (रवीन्द्रनाथ ठाकुर)	प्रथम संस्करण, १९५३, मडन बुक एजेन्सी, कलकत्ता
६४ सुकुमार सेन	बागला साहित्यर इतिहास, तृतीय खण्ड (रवीन्द्रनाथ ठाकुर)	द्वितीय संस्करण, मडन बुक एजेन्सी सन् १९५२
६५ क्षितिमोहन सेन	बलाका-काव्य-परिक्रमा	

अंग्रेजी

66 A C Bradley	Oxford Lectures on Poetry	Macmillan & Co. London
67 Albert, D. Van (Editor)	Literary Criticism in America	The Liberal Art Press, New York
68 Arthur Comp- ton Ricket	A History of Eng- lish Literature	Thomas Nilson & Sons Ltd

